काल के पंख

भारतीय ज्ञानपीठ काशी

ज्ञानपीठ लोकोदय-ग्रन्थमाला-हिन्दी-ग्रन्थाङ्क—६०

कालके पंख

[ऐतिहासिक कहानियाँ]

आनन्दप्रकाश जैन

भारतीय ज्ञानपीठ • काशी

ये नई ऐतिहासिक कहानियाँ

मेरी ऐतिहासिक कहानियोंका यह तीसरा संग्रह पाठकोंके हाथोंमें जा रहा है। मेरे न चाहते हुए भी लोग-बाग ऐतिहासिक कथा-लेखकके रूपमें ही मेरा नाम विशेष रूपसे लेते हैं! न चाहनेका कारण यह है कि एक विशेष धाराके साथ आपका नाम ज़बरदस्ती जोड़ दिया जाये, तो इसका मतलब यह होगा कि आपकी शेष धाराओंकी ओर ध्यान दिया जाना बन्द कर दिया जायेगा! यह घाटेका सौदा है।

लेकिन इन ऐतिहासिक कथा-संग्रहोंका लेखक होनेके नाते तो मुझे कुछ बातें साफ़ करनी ही पड़ेंगी। विशेषरूपसे जो ग़लतफ़हमियाँ ऐतिहासिक कहानीकी रूप-रेखाके बारेमें सामान्य पाठकके मस्तिष्कमें हैं, वे ज़रूर साफ़ होनी चाहिए।

यह तो प्रकट ही है कि कथा-शैलीकी वर्त्तमान रूप-रेखा हमें पश्चिमके अनुकरणसे मिली है। पश्चिमकी सामाजिक कहानियोंका आभ्यन्तर हमारी सामाजिक कहानियोंके आभ्यन्तरसे भिन्न होता है क्योंकि वहाँका सामाजिक विकास, रीति-रिवाज़ और संस्कृति यहाँसे भिन्न हैं। किन्तु ऐतिहासिक कहानियोंकी कथा-शैलीके बारेमें बिलकुल यही बात नहीं कही जा सकती। जब हम इतिहासकी सामान्य गतिविधिकी खोज करते हैं, तो हमें पता लगता है कि भिन्न-भिन्न देशोंमें तत्कालीन सामाजिक संस्कृति भिन्न-भिन्न होते हुए भी सामाजिक विकास लगभग एक-से सिद्धान्तोंपर आश्रित रहा है। कहीं कोई सिद्धान्त जल्दी अमलमें आ गया है कहीं देरमें। किसी-किसी देशने विकासकी कोई मञ्जिल लाँघ भी ली है—यह एक अलग बात है, अलग विषय है। लेकिन किसी देशका ऐतिहासिक विकास निरखने-परखनेमें हमें आमतौरसे उन नियमों और सिद्धान्तोंका ध्यान भी रखना

ही पड़ता है, जिनका सम्बन्ध सारे विश्वके ऐतिहासिक विकाससे है। इसके सिवा कोई चारा भी नहीं है क्योंकि बहुत अधिक विवरणमें जानेका सुभीता तो हमारे पास, वर्त्तमानकी तरह, होता ही नहीं। तब पश्चिमी ऐतिहासिक कहानीकी शैली और तत्सम्बन्धी भारतीय शैलीमें हमें यदि वह समानता अधिक मिले, तो आश्चर्य नहीं। वह समानता निम्नलिखित रूपोंमें मिलती है :

पश्चिमने ऐतिहासिक कहानी और उपन्यासमें रोमांस और रोमांटिसिज़्मको प्रायः ही प्राथमिकता दी है। फलतः भारतमें भी ऐतिहासिक कथा-लेखकोंने इन्हीं दो चीज़ोंका विशेष रूपसे ध्यान रखा है। सामन्तकालीन वीरगाथाओंसे प्रभावित होकर भारतके अनेक कथा-लेखकोंने ऐतिहासिक कहानीकी रचना की है। स्वयं मैंने भी कुछ ऐसी ऐतिहासिक कहानियाँ लिखी हैं। कुछ लेखकोंने स्वामि-भक्ति जैसे विषयको लेकर भी कथा-रचना की है। उचित-अनुचित रोमांस तो ऐतिहासिक कथाओंमें बहुत प्रचलित रहा है। इस प्रकारकी कहानियोंमें यों ऊपरसे देखनेमें कोई दोष कथावस्तुकी दृष्टिसे दिखाई नहीं देता—पर हमारी वर्त्तमान समाज-रचनाके विकासको जिन वास्तविक और यथार्थ दिशासंकेतोंकी आवश्यकता है उन्हें न केवल ये कहानियाँ पकड़ नहीं पातीं, बल्कि उनकी उपेक्षा करके प्राचीन जर्जर रीति-नीतिके पोषणका दोष भी इनपर आता है। भावी राज्य और समाजकी जो रूपरेखा अब धीरे-धीरे नवभारतकी जनताके मस्तिष्कमें उभर रही है उसकी ओर इंगित करने अथवा उसके अनगिनत सामाजिक आधारतत्त्वोंमें से किसीको उभारनेका दायित्व ऐतिहासिक कथाके ऊपर इसलिए आता है कि वह ऐतिहासिक कथा है। अब तक तो चाहे जो कुछ रहा हो, पर अब नई ऐतिहासिक कथाकी यही विशेषता होनी चाहिए। उदाहरणके लिए हमने एक भारत देश कहलानेके लिए जिस प्रकार प्राचीन राज्योंकी सीमाओंको तोड़ा, उसी प्रकार नई समाजवादी रचनाके लिए और परमाणु युद्धके भयंकर परिणामोंसे बचनेके लिए हमें मानवीय

सम्बन्धोंके बीचसे देश और राष्ट्रकी सीमाको भी हटानेका प्रयत्न करना चाहिए। तभी शान्तिके साथ हम नई समाजवादी रचनाकी ओर प्रगति कर सकेंगे। किन्तु ऐसा करते हुए जहाँ हम विदेशियोंके प्रति अपने हृदय खोलेंगे, वहाँ अपने राष्ट्रकी स्वतन्त्र इकाईको भी नहीं भूल सकेंगे और मातृभूमिकी स्वतन्त्रतापर प्राण-विसर्जन करनेकी आवश्यकता पड़े, तो करना ही होगा। इन दोनों तथ्योंको प्रतीक रूपमें मैंने इस संग्रहमें संग्रहीत कहानी "कौवेका घोंसला" में देनेका नन्हा-मोटा प्रयत्न किया है। इन तथ्योंके आपसमें टकरानेसे जो संघर्ष और विडम्बनाएँ उत्पन्न हो सकती हैं उनका एक आभास इस कथाके रोमांसमें मिल सकेगा।

इसी प्रकार मेरी एक प्रारम्भिक रचना 'गिरजेका कंगूरा' है। उस समय ऐतिहासिक कहानीकी धारा मेरे नामके साथ जुड़ी नहीं थी। अपने परिवारकी एक दन्तकथाके आधारपर मैंने यह कहानी लिखी थी। अपने धर्मके प्रति अत्यधिक कट्टर होना हमारी नई समाज-रचनाकी कल्पनाके अनुकूल नहीं है। किन्तु हमारी प्रताड़ित भावनाएँ, जो नितान्त व्यक्तिगत होती हैं, किस प्रकार दूसरेके धर्मके ऊपर उबल पड़ती हैं, किस प्रकार उसकी धर्मध्वजा उखाड़कर अपने गिरजेका कंगूरा ऊँचा करनेको प्रेरित करती हैं, इसका छोटा-सा चित्रण इस कहानीमें करनेका प्रयत्न किया गया था।

इसी प्रकार 'सैल्यूकसकी बेटी' पवित्र वैवाहिक सम्बन्धको राजनीतिक कूटनीतिसे अलग करती है। यही नहीं, विदेशियोंके स्वभाव, रीतिनीति और संस्कृतिके प्रति जो घोर घृणा हम जब-तब प्रदर्शित करते हैं और अपनी ही संस्कृति, सभ्यता और रिवाजोंको श्रेष्ठ माननेका जो हीनमन्यता-मूलक आग्रह हमारे भीतर है उसे 'सैल्यूकसकी बेटी' थोड़ी-सी राहत देती है।

सभी कहानियोंका तत्त्व-विवेचन करना यहाँ अभीष्ट नहीं है। मेरी सभी ऐतिहासिक कहानियाँ आधुनिक कथा-रचनाकी इस आवश्यकताकी

कसौटीपर खरी उतरती हैं यह भी कहनेका दंभ मेरे भीतर नहीं है। किन्तु ऐतिहासिक कथाकी रूप-रेखाके बनाते समय यदि इन मूलभूत तथ्योंको नज़रअन्दाज़ किया जाये, तो इस युगका प्रतिनिधित्व करनेवाली ऐतिहासिक कहानी वह नहीं कहलायेगी !

ऐतिहासिक कहानीके क्या क्या दायित्व हैं इस विषयमें अभी भारतीय कथा-लेखकोंमेंसे अधिकतर कुछ निश्चित नहीं कर पाये। यही कारण है कि ऐतिहासिक कथा-रचनाका क्षेत्र यहाँ अभी बहुत सीमित है...पर इसकी माँग बहुत अधिक है। सामान्य पाठक ऐतिहासिक कहानी चावसे पढ़ता है और सम्पादक लोग भी चावसे छापते हैं। अतः इस ओर नये प्रयत्न किये जानेकी बड़ी आवश्यकता है। तभी ऐतिहासिक कहानीकी रूपरेखा और उपादेयता विकसित हो सकती है। अतः सामान्य रूपसे ऐतिहासिक कहानीके क्या क्या मूल गुण होने चाहिए इसकी एक झलक अपने अनुभवसे यहाँ दे देना भी कुछ असंगत न होगा :

ऐतिहासिक कहानीका काम केवल ऐतिहासिक तथ्योंका निवेदन करना नहीं है, न लखनऊके भाँड़ोंकी तरह ज़र्क़बर्क़ कपड़े पहनकर सम्पूर्ण नवीनताका मखौल उसे उड़ाना है, न ही इतिहासकी पृष्ठभूमिके अनगिनत छलछिद्रोंको मूँदना है। ऐतिहासिक क्रीड़ास्थलीके खिलाड़ियोंमेंसे किसीके प्रति अनुचित सहानुभूति उत्पन्न करना या किसीके प्रति घोर घृणा उत्पन्न करना भी ऐतिहासिक कहानीका काम नहीं है। रस-भंग करके इतिहास पढ़ाना उसका कर्त्तव्य नहीं है। ऐतिहासिक कहानी आखिर तो बेचारी कहानी ही है। उससे अनुपयुक्त आशाएँ नहीं करनी चाहिए।

और यदि हम नारीको कहानीका प्रतीक मानकर चलें, तो एक सीधी-सादी देहातिनके कपड़े पहने भी हम नारीको देखते हैं। शहरकी छैल-छबीली और कटरोंकी नीलपरी भी नारी है। पूर्णतः पाश्चात्य वेशभूषाके रंगमें रँगी, भारतके वातावरणसे ऊबी हुई, ऊपरसे मस्त, भीतरसे त्रस्त, फ़ैशनकी पुतली भी नारी है। कहानी इस रंगारंग नारीका ही शब्द-प्रति-

रूप है। नारीकी समस्त विशेषताओंका समावेश उसमें मिलता है। कहानी एक ऐसी पहेली है, जो मनुष्य-समाजकी समस्याओंको अपनी विशिष्ट नारीसुलभ प्रवृत्तियोंसे सुलझाती है। ऐतिहासिक कहानी विश्वके ऐतिहासिक विकासकी नारी है। नारीको छूना तो वर्जित नहीं है—पर ग़लत पुरज़ेपर हाथ न पड़ जाये यही अपेक्षित है। वह प्रेमिका और पत्नी बनकर आपको रोमांसके झूलेमें झुलाती है, माँ बनकर आपको सही दिशा-संकेत देती है, बहन बनकर आपको हँसाती-रुलाती है, वेश्या बनकर कभी-कभी आपकी सेक्समूलक प्रवृत्तियोंको अनावश्यक रूपसे उभारती है और आपका मनोरंजन करती है, किन्तु अपने समयका तर्कसंगत प्रतिनिधित्व यदि ऐतिहासिक विकासकी यह नारी नहीं करती, तो उसमें बनावटका दोष आ जायेगा और आश्चर्यकी बात तो यह है कि ऐतिहासिक तथ्यों, वातावरण, रीति-रिवाजों, तौर-तरीक़ोंको जैसे-के-तैसे दिखानेकी अत्यधिक सतर्कता भी बनावट पैदा कर देती है। अतः ऐतिहासिक कहानीको पढ़ने या रचने दोनोंमें ही प्राचीन समाजका यथारूप चित्रण खोजना एक बहुत बड़ी ग़लती है। 'ऐसा ही हुआ होगा' यह समझमें आ जाये ऐसा चित्रण तो हो सकता है। किन्तु जैसा हुआ होगा वैसा ही चित्रण करना किसीके लिए भी असंभव है।

ऐतिहासिक कहानीके विषयमें यही थोड़ा-सा निवेदन मुझे करना था। इस संग्रहकी कुछ कहानियाँ 'सरिता' से ली गई हैं। उसके संचालकोंके प्रति मैं अपना आभार प्रकट करता हूँ।

८५ भाटवाड़ा, मेरठ
२७ मई १९५७ ई०

विषय-क्रम

• सैल्यूकसकी बेटी

सन् ३०६ ई० पू० के लगभग सिकन्दरके दुर्दान्त सेनापति सैल्यूकसने फिर एक बार सिकन्दरके अपूर्ण स्वप्नको चरितार्थ करनेकी चेष्टा की। किन्तु भारत-सम्राट् चन्द्रगुप्त मौर्यके धनुर्धरोंने उसे सिन्धुसे आगे बढ़नेका अवसर नहीं दिया। इसके बाद भारतीय सेनाओंने यूनानी सेनापतिका पीछा करना आरम्भ किया और पूर्वी ईरान तक पहुँच कर फिर एक बार शक्ति-संतुलनके लिए तत्पर हो गईं।

सैल्यूकसने सन्धिका प्रस्ताव रखा। भारतवर्ष और अफ़गानिस्तानपर चन्द्रगुप्त मौर्यका एकच्छत्र राज्याधिकार मान लिया गया। मित्रता स्थापित हो गई और इसके चिह्नस्वरूप चन्द्रगुप्तने यूनानियोंको वह भेंट दी, जो उनके लिए कम महत्त्वपूर्ण नहीं थी। भारतका हाथी यूनानियोंके लिए सदासे आश्चर्यकी चीज़ थी। चन्द्रगुप्तने पांच सौ हाथी सैल्यूकसको भेंट दिये और सैल्यूकसने इस मित्रताके सम्बन्धको चिरस्थायी रखनेके लिए अपनी बेटी हेलेनका विवाह चन्द्रगुप्तके साथ कर दिया।

पाटलिपुत्रके जनोंने अपने विजयी सम्राट् और उसकी नवीन रानीका अभिनन्दन करनेके लिए नगरके तोरणद्वारोंको सजाया, सड़कोंपर गंगाजल छिड़का, और चन्द्रगुप्तके पुनरागमनकी रातको दीपावली मनाई। पाटलिपुत्रके मुख्य द्वारमें प्रवेश करते ही सुन्दरी हेलेनका स्वागत लाखों परवानोंने किया।

आचार्य विष्णुगुप्त चाणक्य प्रदर्शनकी वस्तु बनना पसन्द नहीं करते थे। अतः मुख्य द्वारपर आते ही उन्होंने सुविज्ञ मन्त्री राक्षसका हाथ थामा और एक शीघ्रगामी अश्वरथमें खड़े होकर वह जनताका तुमुल अभिनन्दन स्वीकार करते हुए तेज़ीके साथ विस्तीर्ण राजपथके बीचसे

निकल गये। पीछे ज़ोर ज़ोरसे हर्षध्वनि करते हुए ढोल और नगाड़े आये। उनके पीछे एक विशाल हाथीपर स्वयं चन्द्रगुप्त था, जो लोगोंकी प्रसन्नता, रव और उछलकूदकी ओर ध्यान दिये बिना उसी प्रकार धीर-गम्भीर, राजप्रासादकी ओर बढ़ रहा था, जिस प्रकार भारतके एक एक भागको अधीन करके वह अनेक बार लौटा था। उसकी मुद्रासे लगता था कि वह विजेता है, विजय प्राप्त करना उसके लिए दैनिक कार्य है, और उसके लिए इतना शोर मचाना व्यर्थ है।

उसके पीछे भालेबन्द भारतीय सैनिकोंकी अष्टदली पंक्ति थी। फिर ऊँटोंका लम्बा काफ़िला था। फिर यूनानी अंगरक्षकोंका एक सुदृढ़ दस्ता था, जिसके बीचमें घिरा हुआ यूनानी सुन्दरी हेलेनका हाथी अपनी विशिष्ट चालसे हेलेनको रिझाता हुआ ख़रामा-ख़रामा बढ़ रहा था। हाथीपर पीछे उसकी अभिन्न सखी गैलेशिया उसके ऊपर लगे छत्रका स्वर्णदण्ड पकड़े खड़ी थी। हाथीके पीछे यूनानी अंगरक्षिकाएँ कसे हुए सैनिक वस्त्रोंमें सुसज्जित बराबर-बराबर चार पंक्तियोंमें आ रही थीं।

हेलेनकी अवस्था विचित्र थी। गंभीरता उसको छू भी नहीं गई थी। केलेके सुकोमल गोभकी भाँति उसकी बाँह बार-बार किसी उछलते हुए भारतीयकी ओर उठकर उसके अभिनन्दनको हर्षातिरेकसे स्वीकार करती थी। थोड़ी-थोड़ी देरमें वह गैलेशियाकी ओर अपनी सुराहीदार गरदन मोड़कर मोती चमका देती थी। चपल चंचलाकी भाँति वीथिकाओंसे झाँकती हुई कुलललनाओंके बिखरते हुए हास्यमें वह अपना हास्य मिला देती थी। उसकी आँखें पाटलिपुत्रकी उस अपूर्व दीपमालिकासे प्रभासित होकर दो अल्हड़ ज्योतियोंकी भाँति नाच रही थीं। उसके आसनके चारों ओरकी हौदी गृहलक्ष्मियोंके द्वारा फेंके हुए पुष्पोंसे भर गई थी। अधिक उत्साही दर्शकोंको हाथीके निकट आते देखकर वह उन पुष्पोंकी मुट्ठियाँ भर-भरकर उनपर उछाल देती थी।

हेलेन भीतरसे जो कुछ थी वही बाहरसे दिखाई पड़ रही थी। अठारह

वर्षकी एक अधीर, अगम्भीर, चंचल बालिका जिसने जन्मसे ही भारतकी चर्चा सुनी थी, और आज उसके दर्शन किये थे।

पाटलिपुत्रके काष्ठप्रासादमें भी हेलेनका स्वागत कम उत्साहके साथ नहीं हुआ। हेलेन जब नीचे उतरी, तो पट्टरानीने उसे हाथोंहाथ लिया। हेलेनने ग्रीक भाषामें कुछ कहा, जिसे सिवा उसकी अभिन्न सहेलीके और किसीने न समझा। इसपर हेलेन बेचैनी और चपलतासे इधर-उधर देखने लगी। यूनानी अंगरक्षिकाओंमेंसे एक आगे निकलकर आगे आई और हेलेनने फिर अपने शब्द दोहराये। अंगरक्षिकाने मागधीमें अनुवाद करके हेलेनका मन्तव्य पट्टरानीको समझाया :

"यूनानकी कली कहती है कि क्या आप उसकी सहेली बनेंगी?"

पट्टरानी गम्भीर और शिष्ट थी। उसने शालीनतासे उत्तर दिया, "क्यों नहीं? यहाँ हम सब बहनें हैं।"

"यूनानकी कली कहती है कि आप तैरना तो जानती हैं न?"

पट्टरानीके पीछे खड़ी अनेक रानियोंने मुँहमें पल्ले देकर हास्यको बिखरनेसे रोका। पट्टरानीका मुँह लज्जासे लाल हो गया। उन्होंने इस प्रकारके प्रश्नकी प्रत्याशा न की थी। मगधकी राजरानीका तैरनेसे क्या वास्ता? यह चुहल तो छोटी-छोटी लड़कियोंको शोभा देती है। उन्होंने शिष्टताके साथ कहा, "राजभवनके भीतर ताल है। वह कमलोंसे ढँका है। छोटी बहन चाहेंगी, तो कमलोंको हटाकर उसमें स्वच्छ जल भरवा दिया जायगा। परंतु अभी तो राजमहलमें चलकर उसे यात्राकी थकान उतारनी है और फिर कई दिन तो उत्सव, गान और मंगल-समारोह चलेंगे...।"

राजभवनकी चारों ओर फैले हुए उद्यानकी सुगन्धित वायुको जी भर-कर सूँघते हुए हेलेनने प्रसन्नतासे कहा, "डीडो, मेरी इन सब बहनोंसे कहो कि मुझे मित्र बनाना बहुत पसन्द है। मित्र तीनकी संख्यामें अच्छे होते हैं। इनमेंसे जो सबसे पहले मेरे कानमें कहेंगी कि वे मेरा मित्र होंगी

उनमेंसे प्रथम तीनको मैं एक मीठी, मदभरी यूनानी कहानी सुनाऊँगी— जिसे सुनकर वे खानापीना तक भूल जायेंगी !" और यह कहकर वह खिलखिलाकर पट्टरानीके माथेको चूमती हुई आगे बढ़ गई ।

कुछ विस्मित-सी, हेलेनके द्वारा कहे हुए वचनोंका उल्था सुनती हुई पट्टरानी पीछे रह गई । अनेक रानियाँ उस स्वच्छन्द वनकी चिड़ियाके साथ-साथ लग गईं और अपलक नेत्रोंसे उसके उस द्विगुणित सौंदर्यको निहारने लगीं, जो उसके हाससे और भी अधिक तीव्र और चंचलतासे और भी अधिक मुखर हो रहा था । उनमें जो छोटी आयुकी थीं उन्हें लगा मानो राजमहलके रीति-रिवाजके बोझसे दबे उनके अंतरसे ही कोई अँगड़ाई लेकर उठा है और हेलेनके रूपमें प्रकट हुआ है । जो बड़ी आयुकी थीं, वे उसके प्रत्येक हावभावको उत्सुकता, आश्चर्य और उद्वेगके साथ निरख रही थीं । राजमहलके मुखद्वार पर जब अनेक रानियोंने दासियोंके हाथोंसे आरतीके थाल लेकर हेलेनकी आरती उतारनी आरम्भ की, तो वह आश्चर्य और बच्चों-जैसी सरलताके साथ होठोंको गोल किये, नेत्रोंको विस्फारित किये उन्हें देखती रही । उसने गैलेशियासे पूछा : "क्या है यह ?"

गैलेशियाने डीडोकी ओर देखा । उसने आगे बढ़कर बताया : "ये रानियाँ इन दीपोंसे आपके भविष्यका पथ उज्ज्वल कर रही हैं, रानी हेलेन ।"

"ओह !" हेलेनने असीम आश्चर्यका भाव प्रकट करते हुए हास्यपूर्ण स्वरमें कहा, "मैं समझी थी कि ये सब मिलकर मुझे डरा रही हैं !"

डीडोसे पट्टरानीने हेलेनकी बात सुनी और उन्हें पहली बार हेलेनकी बात बुरी लगी । हास्यकी भी एक सीमा होती है । नई आई विवाहिताको तो थोड़ी-बहुत लज्जा चाहिए, और यदि विदेशी रमणियोंमें यह न भी होती हो, तो पवित्र प्रथाओंका सम्मान तो करना ही चाहिए । मगर हेलेन अब तक दूसरे काममें उलझ चुकी थी ।

द्वारके भीतर जानेके स्थान पर हेलेन द्वारसे कुछ दूरीपर खड़े काठके एक सफ़ेद हाथीके पास फुदककर पहुँची। परिचारिकाओंने तुरन्त प्रकाश वहाँ तक पहुँचाया, जब कि रानियाँ सबकी सब द्वारपर खड़ी इस विचित्र उच्छृंखल नवेलीको निरखती रह गईं।

हाथीपर चारों ओरसे हाथ फेरकर हेलेनने गैलेशियासे कहा, "यह तो काठका मालूम होता है!"

"शायद," गैलेशियाने कहा।

फिर रानियोंने देखा कि हेलेनके संकेतपर गैलेशिया हाथीके नीचेको होकर दूसरी ओर निकल गई, और फिर उसी मार्गसे वापस आई। उसने हेलेनसे कहा, "नहीं, ऐसी कोई बात नहीं है।"

दोनों उछलती हुई फिर वापस रानियोंके बीचमें आईं। हेलेनने डीडोसे कुछ कहा। डीडोने पट्टरानीसे विनम्र शब्दोंमें निवेदन किया, "क्षमा कीजिये, रानीजी, रानी हेलेन कहती हैं कि वह बहुत अधिक उत्सुक हो गई थीं। अब आप उन्हें जहाँ चाहें ले जा सकती हैं।"

रानी हेलेनकी चर्चाको लेकर शीघ्र ही सारा राजप्रासाद हँसीके गोल-गप्पोंसे महकने लगा। हेलेनकी ओरसे प्रति पल एक नीतिविरुद्ध हलचल की आशंका रहती थी। उसका प्रत्येक पग अनिश्चित था। स्नानके समय उसने भारतीय परिचारिकाओंसे कुछ देर बड़े शौकसे उबटन मलवाना आरम्भ किया। किन्तु जब वे उसके चेहरे पर भी उसे मलने लगीं, तो वह घबराकर खड़ी हो गई। बहुत समझाने पर भी वह स्नान-प्रसाधनकी शेष क्रियाओंका प्रयोग अपने शरीर पर करानेके लिए तैयार नहीं हुई। इसके साथ ही उसने वस्त्र लेकर तुरन्त सारा उबटन बदनसे पोंछनेकी चेष्टा की। बच्चों की तरह चिल्लाकर उसने भारतीय परिचारिकाओंको कक्षसे बाहर निकाल दिया और बड़ी रानीसे कहा कि वह तालपर नहायेगी। ताल रात्रिमें ही तैयार नहीं हो सकता था। फलतः पानीकी हौदीको उसने स्वच्छ

जलसे भरवाया और चार घड़ी तक उसके भीतर लेटी रही। तब तक गैलेशिया यूनानी मसालों और ब्रशसे उसके बदनको रगड़ती रही।

सैल्यूकस-विजयकी राजनीतिक सम्भावनाओंपर विचार करनेके लिए बहुत रात तक मौर्यकुलश्रेष्ठ राक्षस और चाणक्यसे विचार-विमर्श करते रहे और अन्तमें शेष बातें कलपर उठा रखनेके लिए छोड़कर उठ गये। चलते समय चाणक्यने राक्षसको बाहर निकल जानेका अवसर देते हुए चन्द्रगुप्तसे कहा, "वत्स, यूनानी सुन्दरीका विवाह मैंने तुम्हारे साथ हो जाने दिया है। किन्तु ध्यान रखना, वह शत्रुकी पुत्री है। वह बहुत वाचाल और उच्छृंखल प्रतीत होती है और उच्छृंखल व्यक्तिके द्वारा होनेवाले कर्मका कोई अनुमान नहीं होता। विश्वास और असावधानी किसी नरेशका सिर काटनेके लिए दैवी दुधारा होता है।"

चन्द्रगुप्तने कौटिल्यको प्रणाम करते हुए कहा, "आप निश्चिन्त रहिए, आचार्य। चन्द्रगुप्त आपका शिष्य है, किसी दूसरे का नहीं।"

बाहर निकलने पर राक्षस प्रतीक्षा करता दिखाई पड़ा। चन्द्रगुप्तके साथ-साथ चलता हुआ वह बोला, "राजन्, यूनानका पुष्प संभवतः बहुत चंचल होता है। हवाके तनिकसे झोंकेसे ही वह गुदगुदीका अनुभव करता है।"

"जी हाँ," चन्द्रगुप्तने कहा, "परन्तु अपनी नज़रको रोकिये। यह नज़र, जो पत्थरको भी फोड़ देती है, बेचारे यूनानी फूलको बहुत महँगी पड़ सकती है।"

"हरे, हरे!" राक्षसने कहा, "तनिक मेरे बुढ़ापेका ध्यान करो, राजन्! हाँ, आचार्यको यह बात कहते, तो उचित हो सकता था। वह बुढ़ापेमें भी सजीव हैं।"

चद्रगुप्त राक्षसके साथ की हुई हँसीसे प्रसन्न होता हुआ पट्टरानीके महलमें पहुँचा, तो उसने देखा कि उनका मुँह फूला हुआ था।

"कहो, रानी," चन्द्रगुप्तने चादर उतारकर परिचारिकाके हाथमें देते हुए कहा, "यूनानी पुष्प कैसा लगा ?"

"ऐसा कि उसके आनेसे यहाँकी सारी वाटिकाके फूल खिलखिला कर हँस रहे हैं", रानीने श्लेषमें कहा।

"खिलखिला कर हँस रहे हैं! अर्थात् यूनानी पुष्प सभीको बहुत अधिक भाया है ?"

"इतना अधिक कि हँसते हँसते सभी पुष्पोंकी पंखड़ियां झड़ी जा रही हैं!"

"ओह! पंखड़ियां झड़ी जा रही हैं! परन्तु यह श्लेष हम नहीं समझे। तुम कोई गंभीर बात कहना चाहती हो, रानी ?"

"गंभीर तो अब कुछ भी नहीं रहा। ऐसा लगता है कि या तो वह मूर्ख है और सारा रनिवास उसके साथ मूर्ख बन गया है। या फिर वह बुद्धिमती है और हम सब जन्मजात जड़ हैं!"

"अर्थात् ?" चन्द्रगुप्तने आश्चर्यसे पूछा।

"अर्थात् यह कि राजमहलकी प्रत्येक मर्यादा भंग हो रही है। किसीको सभ्यता, शालीनता, नीति-नियमका ध्यान नहीं। रानियाँ और दासियाँ एक ही पंक्तिमें खड़ी होकर हास्यालाप कर रही हैं और वह यूनानी छोकरी समझती है कि वह सैल्यूकस सेनापतिकी बेटी नहीं है, संसारके विधाता की बेटी है!"

"ओह! मालूम होता है मामला अनुमानसे भी अधिक गंभीर है," चन्द्रगुप्तने कहा। फिर उसने हेलेनकी सभी हरकतोंका पूरा चिट्ठा सुना। सुनकर हँसते हुए कहा, "सुनो, रानी, तुम संभवतः नहीं जानती कि हमने यह राजनीतिक विवाह किया है। शत्रुने हमसे मैत्री स्थापित करनेके लिए हमारे रक्तसे अपने रक्तका संबंध जोड़ना चाहा और राजनीतिक दृष्टिसे हम इनकार नहीं कर सके। अन्यथा उस यूनानी राजकन्यासे हमें कोई मोह नहीं था। तुम जानती हो तुम हमें सबसे प्रिय हो। उसके साथ हमारा

केवल वासनाका संबंध रह सकता है, मोह अथवा प्रेमका नहीं। फिर वह तो पराजित शत्रुकी कन्या है। तुमसे अथवा अन्य रानियोंसे उसके ऊँचे उठनेका तो कोई प्रश्न ही नहीं उठता। कुछ ही दिनोंमें वह समझ जायेगी कि अन्य रानियाँ उसके कार्यकलापोंसे मुदित नहीं हो रही हैं, बल्कि स्वयं उसीके ऊपर हँस रही हैं। तब वह गंभीर हो जायेगी।"

पट्टरानीके मिज़ाज़ कुछ नरम हुए। उसने उतरते हुए कहा, "कह रही थी कि 'मुझे मित्र बनाने बहुत पसंद हैं और मैं तीन रानियोंको अपना मित्र बनाऊँगी क्योंकि तीन मित्र अच्छे होते हैं!' एक नई-नवेली रानी और इतने अशिष्ट विचार प्रकट करे...! तीन मित्रोंमें क्या तर्क है? कहीं ऐसा न हो कि आपका यह राजनीतिक विवाह..."

"हम उसके लिए अलग एक छोटा-सा प्रासाद बनवा देंगे और उससे कोई विशेष संपर्क नहीं रखेंगे," चन्द्रगुप्तने पट्टरानीको आश्वासन दिया। "अब बताओ हम उसे कहाँ पा सकते हैं? हम स्वयं भी देखना चाहते हैं कि उसका व्यवहार कहाँ तक सहनीय है।"

पट्टरानीने बताया कि वह नाट्यशालामें है, जहाँ उसके लिए स्वागत-समारोहका आयोजन था। अन्तःपुरकी इस नाट्यशालामें केवल रानियाँ और दासी-अभिनेत्रियाँ ही भाग लेती थीं। अपने धीर-गंभीर, शूरवीर पतिको मार्ग दिखाती हुई स्वयं पट्टरानी उन्हें नाट्यशाला तक लिवा ले चलीं। वह चन्द्रगुप्तको दिखाना चाहती थीं कि किस प्रकार वह नई-नवेली उछल-कूदकर और अशिष्टतासे तालियाँ बजाकर नृत्यांगनाओंका नृत्य देख रही होगी!

मगर पट्टरानी उतनी आशा नहीं कर सकती थी, जितनीके साज़-सामान वहाँ उपस्थित थे। नाट्यशालामें रंग दूसरा ही था। वास्तवमें नृत्यांगनाएँ और अभिनेत्रियोंके वेश धारण किये हुए अनेक दासियाँ मंचसे नीचे, दोनों ओर पंक्तिबद्ध खड़ी थीं। रानियाँ अपने आसनोंपर चित्रलिखित-सी बैठी थीं—और मंच पर?

मंचकी एक ओर खड़ी गैलेशिया संगीतकी एक मधुर तालमें तालियाँ बजा रही थी और हेलेन सचमुच चपलाकी भाँति, अपने तीव्रगामी यूनानी नृत्यमें, कभी यहाँ कभी वहाँ कौंध रही थी। संगीतका एक समां बँधा हुआ था और अनेक रानियोंके सिर धुनके साथ-साथ हिल रहे थे। यूनानी अंगरक्षिकाओंमेंसे दो ने साज़ सँभाल रखे थे।

पट्टरानी कुछ कह रही थी। किन्तु चन्द्रगुप्त कुछ पलके लिए यूनानी संगीतकी नवीन मधुरतामें खो गया। फिर सहसा ही सजग होकर उसने कहा, "रानी, हम कल इसके लिए हेलेनकी तर्जना करेंगे।"

अगले दिन संध्यातक हेलेनके इस मौजी स्वभावकी चर्चा सारे पाटलिपुत्रमें फैल गई। समाचार यहाँतक उड़ा कि उसने सारे रनिवासको पागल बना रखा है और दो-चारको छोड़कर सारी रानियाँ उसके चक्करमें पड़ गई हैं। विशेष रूपसे छोटी आयुकी रानियाँ तो हेलेनको घेरे रहती हैं।

रातके समय चन्द्रगुप्तने जल्दी ही कौटिल्यसे विदा ली। हेलेनको पतिकी प्रतीक्षा करनेके लिए कहा गया था। उसे भारतीय साड़ी पहनाई गई थी, जो उसने बड़े चावसे पहनी थी। गैलेशिया और डीडो नवीन यूनानी वस्त्रोंसे सज्जित उसके साथ छायाकी तरह लगी थीं। चन्द्रगुप्त की एक अल्पवयस्क रानी अभी भी उसके साथ थी और वह उसे 'ट्रोजनकी लड़ाई' की कहानी सुना रही थी। तभी प्रतिहारीने उद्घोष किया।

"मौर्यकुलश्रेष्ठ, राजराजेश्वर, चक्रवर्त्ती, परम भट्टारक महाराज चन्द्रगुप्त मौर्य पधार रहे हैं..."

भारतीय रानीने कहा, "शेष फिर सुनूँगी। बहुत मनोरंजक कथा है। अब मैं जाती हूँ, बहन।"

"बहन नहीं, मित्र", हेलेनने मुसकराकर कहा।

"हाँ मित्र..." कहकर रानी तत्परतासे द्वारके बाहर हो गई, जहाँ

केवल वासनाका संबंध रह सकता है, मोह अथवा प्रेमका नहीं। फिर वह तो पराजित शत्रुकी कन्या है। तुमसे अथवा अन्य रानियोंसे उसके ऊँचे उठनेका तो कोई प्रश्न ही नहीं उठता। कुछ ही दिनोंमें वह समझ जायेगी कि अन्य रानियाँ उसके कार्यकलापोंसे मुदित नहीं हो रही हैं, बल्कि स्वयं उसीके ऊपर हँस रही हैं। तब वह गंभीर हो जायेगी।"

पट्टरानीके मिज़ाज़ कुछ नरम हुए। उसने उतरते हुए कहा, "कह रही थी कि 'मुझे मित्र बनाने बहुत पसंद हैं और मैं तीन रानियोंको अपना मित्र बनाऊँगी क्योंकि तीन मित्र अच्छे होते हैं!' एक नई-नवेली रानी और इतने अशिष्ट विचार प्रकट करे...! तीन मित्रोंमें क्या तर्क है? कहीं ऐसा न हो कि आपका यह राजनीतिक विवाह..."

"हम उसके लिए अलग एक छोटा-सा प्रासाद बनवा देंगे और उससे कोई विशेष संपर्क नहीं रखेंगे," चन्द्रगुप्तने पट्टरानीको आश्वासन दिया। "अब बताओ हम उसे कहाँ पा सकते हैं? हम स्वयं भी देखना चाहते हैं कि उसका व्यवहार कहाँ तक सहनीय है।"

पट्टरानीने बताया कि वह नाट्यशालामें है, जहाँ उसके लिए स्वागत-समारोहका आयोजन था। अन्तःपुरकी इस नाट्यशालामें केवल रानियाँ और दासी-अभिनेत्रियाँ ही भाग लेती थीं। अपने धीर-गंभीर, शूरवीर पतिको मार्ग दिखाती हुई स्वयं पट्टरानी उन्हें नाट्यशाला तक लिवा ले चलीं। वह चन्द्रगुप्तको दिखाना चाहती थीं कि किस प्रकार वह नई-नवेली उछल-कूदकर और अशिष्टतासे तालियाँ बजाकर नृत्यांगनाओंका नृत्य देख रही होगी!

मगर पट्टरानी उतनी आशा नहीं कर सकती थी, जितनीके साज़-सामान वहाँ उपस्थित थे। नाट्यशालामें रंग दूसरा ही था। वास्तवमें नृत्यांगनाएँ और अभिनेत्रियोंके वेश धारण किये हुए अनेक दासियाँ मंचसे नीचे, दोनों ओर पंक्तिबद्ध खड़ी थीं। रानियाँ अपने आसनोंपर चित्रलिखित-सी बैठी थीं—और मंच पर?

मंचकी एक ओर खड़ी गैलेशिया संगीतकी एक मधुर तालमें तालियाँ बजा रही थी और हेलेन सचमुच चपलाकी भाँति, अपने तीव्रगामी यूनानी नृत्यमें, कभी यहाँ कभी वहाँ कौंध रही थी। संगीतका एक समां बँधा हुआ था और अनेक रानियोंके सिर धुनके साथ-साथ हिल रहे थे। यूनानी अंगरक्षिकाओंमेंसे दो ने साज़ सँभाल रखे थे।

पट्टरानी कुछ कह रही थी। किन्तु चन्द्रगुप्त कुछ पलके लिए यूनानी संगीतकी नवीन मधुरतामें खो गया। फिर सहसा ही सजग होकर उसने कहा, "रानी, हम कल इसके लिए हेलेनकी तर्जना करेंगे।"

अगले दिन संध्यातक हेलेनके इस मौजी स्वभावकी चर्चा सारे पाटलिपुत्रमें फैल गई। समाचार यहाँतक उड़ा कि उसने सारे रनिवासको पागल बना रखा है और दो-चारको छोड़कर सारी रानियाँ उसके चक्करमें पड़ गई हैं। विशेष रूपसे छोटी आयुकी रानियाँ तो हेलेनको घेरे रहती हैं।

रातके समय चन्द्रगुप्तने जल्दी ही कौटिल्यसे विदा ली। हेलेनको पतिकी प्रतीक्षा करनेके लिए कहा गया था। उसे भारतीय साड़ी पहनाई गई थी, जो उसने बड़े चावसे पहनी थी। गैलेशिया और डीडो नवीन यूनानी वस्त्रोंसे सज्जित उसके साथ छायाकी तरह लगी थीं। चन्द्रगुप्त की एक अल्पवयस्क रानी अभी भी उसके साथ थी और वह उसे 'ट्रोजनकी लड़ाई' की कहानी सुना रही थी। तभी प्रतिहारीने उद्घोष किया।

"मौर्यकुलश्रेष्ठ, राजराजेश्वर, चक्रवर्त्ती, परम भट्टारक महाराज चन्द्र-गुप्त मौर्य पधार रहे हैं..."

भारतीय रानीने कहा, "शेष फिर सुनूँगी। बहुत मनोरंजक कथा है। अब मैं जाती हूँ, बहन।"

"बहन नहीं, मित्र", हेलेनने मुसकराकर कहा।

"हाँ मित्र..." कहकर रानी तत्परतासे द्वारके बाहर हो गई, जहाँ

द्वारमें प्रवेश करते हुए चन्द्रगुप्तने उसको उँगलीसे रुकनेका संकेत करते हुए कहा, "रानी, तुम यहाँ क्या कर रही थी ?"

"मैं, महाराज ? मैं रानी हेलेनसे एक यूनानी कथा सुन रही थी," रानीने उत्तर दिया।

"हूँ !" चन्द्रगुप्तने उसे तीव्र दृष्टिसे देखा। किन्तु वह नीची गरदन किये खड़ी रही। अन्तमें चन्द्रगुप्तने कहा, "अच्छा, जाओ।"

वह कमानसे छुटे तीरकी तरह लोप हो गई।

अब चन्द्रगुप्तने सामने जो दृष्टि की, तो भारतीय वेश-भूषामें हेलेन खड़ी दिखाई दी। दृष्टि अपनी ओर होते देखकर हेलेन बड़े ज़ोरसे खिल-खिलाकर हँस पड़ी। उसने कहा : "मालूम होता है आज क्रोधमें हो !"

चन्द्रगुप्तने मौन रहकर हेलेनको दो क्षण तीव्र दृष्टिसे देखा।

मगर हेलेनको इस दृष्टिकी चिन्ता नहीं थी। वह बोली, "चन्द्रगुप्त, यह बड़ी अच्छी बात है कि तुम यूनानी जानते हो। नहीं तो हम तुम कुछ भी बात न कर पाते, और डीडो हमारी सारी योजनाएँ जान लेती।"

गैलेशिया होंठोंको दबाकर हँसी। डीडो चुपचाप कक्षसे निकल गई।

हेलेनने गैलेशियाको बनावटी स्वरमें डाँटा, "हँस मत, गैलेशिया। चन्द्रगुप्त क्रोधमें है। सारी योजना रखी रह जायेगी। वह घोड़ा निकाल-कर ला।"

गैलेशिया फुरतीसे एक बड़ी-सी पिटारीके पास गई और उसका ढक्कन उठाकर उसने उसमेंसे कुत्तेके आकारका एक घोड़ा निकाला। घोड़ा लकड़ीका बना हुआ था और एक तख्तेपर खड़ा था, जिसमें चार पहिये लगे थे। वह यूनानी कारीगरीका एक सुन्दर नमूना था। हेलेनने प्रसन्न होकर घोड़ेको एक बड़ी चौकीपर खड़ा किया। फिर वह उसके ऊपर हाथ फेरती हुई मग्न स्वरमें बोली, "यह स्पार्टनोंका घोड़ा है। हमें इतना बड़ा घोड़ा चाहिए, जो मंचपर आ सके। इसका नाटक देखकर सब चकित रह जाएँगे। जब इसके पेटके नीचेका ढक्कन खोलकर रस्सियोंके सहारे

सैनिक नीचे उतरेंगे और सोये हुए ट्रॉयनगरका विध्वंस करना आरम्भ करेंगे, तो सारी रानियाँ हैरतसे दाँतों तले उँगली दबा लेंगी। 'हेलेन'को ढूँढनेके लिए स्पार्टन सैनिक मंचको रौंद डालेंगे। तुमने यूनानी पढ़ते समय वह कहानी पढ़ी है, चन्द्रगुप्त...'ट्रोजन-युद्ध' की कहानी...? अरे, तुम तो बोलते ही नहीं...!" और हेलेनने घूमकर चन्द्रगुप्तकी ओर देखा। वह चिल्ला उठी, "चन्द्रगुप्त!"

चन्द्रगुप्त क्रुद्ध दृष्टिसे उसकी ओर देख रहा था। उसकी ठोडी नीची हो गई थी और ऊँची उठी हुई पुतलियोंके चारों ओर लाल डोरे खिंच आये थे। गंभीर स्वरमें वह यूनानीमें बोला, "सैल्यूकसकी बेटी..."

हेलेनने उसे सुधारा, "नहीं, सैल्यूकस नाईकेटरकी बेटी..."

चन्द्रगुप्तने इसकी परवा नहीं की। उसका प्रौढ़ मुख अभी भी क्रोधसे तप्त था। वह बोला, "तुमने पाटलिपुत्रके राजभवनमें आकर एक उत्पात खड़ा कर दिया है। हमें लगता है कि हमने तुम्हारा हाथ थामकर एक बड़ी भूल की है। यह ठीक है कि तुम्हें भारतीय राजमहलोंकी मानमर्यादाका पता नहीं और तुम यूनानके उन्मुक्त वातावरणमें पली हो। लेकिन अगर तुम्हें यहाँ रहना है, तो तुम्हें यहाँकी मर्यादामें बँधना होगा..."

"यह क्या कह रहे हो, चन्द्रगुप्त!" आश्चर्यसे हेलेनने कहा, "यहाँ कोई उत्पात खड़ा हो गया है? हा हा हा हा! यह एक ही रही! क्या उत्पात है वह, सुनाओ तो?"

"हम भारतके राजराजेश्वर हैं...हमने अराकोशिया, गडोशिया, एरियाना जीता है और सैल्यूकस नाईकेटरने तुम्हारी शादी हमारे साथ इसलिए की है कि हमारे राजनीतिक सम्बन्ध अच्छे बने रहें। हम यह स्वीकार करते हैं कि तुम सुन्दर और वाचाल हो। मगर तुम हमारा नाम लेकर हमें इस तरह पुकार रही हो, जैसे हम तुम्हारे क्रीत दास हों...!"

हेलेन बड़े ज़ोरसे हँस पड़ी। गैलेशियाको लक्ष्य करके वह बोली: "सुनो, गैलेशिया, भारत-सम्राट् चन्द्रगुप्तको अपने नामसे इतनी चिढ़ है कि

उसका संबोधन भी उसे पसंद नहीं! सुनो, चन्द्रगुप्तका और मेरा विवाह राजनीतिक विवाह मात्र है! और सुनो गैलेशिया, मेरा पति मेरे सम्मुख अपनी जीतका अभिमान लेकर आया है! वाह, वाह! यह तो बड़ी वढ़िया पौराणिक कथा बनती जा रही है!" फिर उसने चन्द्रगुप्तकी ओर बच्चोंकी तरह झाँक कर पूछा, "तो मुझे अपने प्रिय पतिको क्या कहकर पुकारना चाहिए, चन्द्रगुप्त?"

चन्द्रगुप्त झल्ला गया। वह बोला, "हमारी बात छोड़ो। तुमने हमारी अन्य रानियोंको बहन न बनाकर मित्र बनानेकी बात कही, और वह भी कुल तीनकी संख्यामें! यह हमारी रानियोंका अपमान है।"

"बहुत अच्छे!" हेलेन तालियाँ पीटकर बोली, "तुम्हारी रानियाँ तो तुमसे भी ज्यादा गंभीर मालूम होती हैं। उनके साथ विनोद करनेसे उनका अपमान होता है! ओह! यह बात तो मेरे सम्मानित पिताने मुझे बताई थी कि भारतीय रमणियोंको शिष्ट विनोद पसंद नहीं। मगर मैं भूल गई...गैलेशिया, यह तीन मित्र बनानेकी बात किसने की थी?"

गैलेशियाने अपना निचला होंठ फिर एक बार दबाकर कहा, "नाईकेटर एलेग्ज़ेंडरने, प्रिय हेलेन।"

"देखा तुमने?" हेलेनने चन्द्रगुप्तसे कहा। फिर वह अपनी स्वाभाविक मुद्रासे हँसी। "तुम इतना भी नहीं समझ सकते, चन्द्रगुप्त, कि महान् वचन महान् विजेताओंके मुखसे ही निकलते हैं! महान् सिकन्दरने ही यह कहा था कि अपरिचित स्थान पर मित्र बनाने चाहिए, यह सबसे पहला काम होना चाहिए, और वे संख्यामें तीनसे अधिक नहीं होने चाहिए। अब तुम जानना चाहोगे कि क्यों तीन और कैसे तीन—है न?"

हेलेनके उन्मुक्त हास्यके सम्मुख चन्द्रगुप्त क्रोधकी सीमाको पार करनेमें अपनेको असमर्थ पा रहा था। वह झुँझलाया हुआ निश्चल खड़ा रहा और हेलेनकी वचनावलीको आगे सुननेके लिए उसने धैर्य बटोरा।

"तो सुनो", हेलेनने कहा, "तीन इसलिए कि यदि एक विमुख हो

जाये, तो शेष दो अपनी सम्मिलित शक्तिसे मित्र बनाने वालेकी रक्षा कर सकें, तीनसे अधिक हो जाने पर दलबन्दी खड़ी हो जाती है। और ये तीन मित्र होने चाहियें : एक साहसी, एक विद्वान्, और एक बुद्धिमान्... मगर अब तुम पूछोगे कि विद्वान् और बुद्धिमान्में क्या अन्तर है। इसके लिए तुम्हें उस्ताद अरस्तूका शिष्य बनना चाहिए था, जो सत्यके टुकड़े करके ही उसे परखनेमें विश्वास रखते हैं।"

चन्द्रगुप्तका रोष अब अदण्डित अपराधीके बराबर अपराध पर आग्रह किये जानेसे समतल हो गया था। वह बोला, "और आरती हो जानेके बाद महलके भीतर प्रवेश न करके, उस सफ़ेद हाथीपर हाथ फेरनेमें भी अवश्य ही महान् सिकन्दरका कोई दर्शन होगा!"

"हा हा हा हा!" यह बात सुनकर हेलेन चहचहाती हुई बोली, "गैलेशिया, चन्द्रगुप्तको बताओ कि हमने वह विशाल हाथी क्यों देखा था—मालूम होता है मेरे पतिकी उत्सुकताकी मात्रा भी मुझसे कम नहीं है!"

"प्रिय हेलेन," गैलेशियाने निःसंकोच भावसे कहा, "वह हाथी तो हम इसलिए देखने गये थे कि ट्रॉयकी हेलेनको जिस प्रकार फिरसे प्राप्त करनेके लिए स्पार्टनोंने लकड़ीका खोखला घोड़ा बनवाया था और उसमें अपने वीर छिपाकर रख छोड़े थे—जिससे ट्रॉयवाले उस घोड़ेको अपने क़िलेमें ले गये और रातके समय उन वीरोंने निकलकर अपनी सेनाओंके लिए ट्रॉयके किलेका मुखद्वार खोल दिया तथा ट्रॉयका फला-फूला नगर एक ही रातमें श्मशान बन गया—उसी तरह कहीं सम्राट् चन्द्रगुप्तने भी तो उस हाथीका निर्माण नहीं कराया था।"

"हा हा हा हा!" हेलेनने ठहाका लगाया, "तुमने देखा प्रिय चन्द्रगुप्त, यह शुद्ध और सात्त्विक उत्सुकताका काम था...।"

"हूँ!" चन्द्रगुप्तने कहा, "मगर तुम बहुत हँसती हो!"

"इसलिए कि यूनानी हँसना जानते हैं, मेरे चन्द्रगुप्त! तुम लोग

हँसीसे डरते हो, आश्चर्य ! उस्ताद अरस्तू कहते हैं कि यह जिन्दगी स्वयं एक बहुत बड़ा मज़ाक है, और जो इसमें हँसनेसे घबराता है उसपर भाग्य एक दिन बुरी तरह हँसता है।"

तीव्र स्वरमें चन्द्रगुप्त बोला, "हेलेन, तनिक अक्लसे काम लो। तुम्हें एक रानीकी तरह व्यवहार करना चाहिए...।"

"मैं इस बात पर विचार करूँगी कि रानीकी तरह व्यवहार करनेके लिए कितना हँसना और कितना रोना चाहिए। पर चन्द्रगुप्त, मेरा अत्यन्त विनम्र और गम्भीर निवेदन है कि कृपा करके एक पतिकी तरह व्यवहार करो। तुम सम्राट् हो दूसरोंके लिए, मेरे लिए केवल पति हो, जिसके साथ मुझे जीवन भर हँसना-खेलना है। तुमने मेरे आदरणीय पिता सैल्यूकस नाईकेटरको पराजित किया है, सैल्यूकसकी बेटीको नहीं। जाओ पहले अपने उस्तादसे पूछो कि हेलेनके जीवनका हास्य बन्द करनेके लिए चन्द्रगुप्तको क्या करना चाहिए।"

"हेलेन !" चन्द्रगुप्त चिल्लाया।

"चन्द्रगुप्त," हेलेनने पहली बार गम्भीर और नपे-तुले शब्दोंमें कहा, "मुझे ऐसी आशा नहीं थी कि पतिके रूपमें मुझे एक शासकके दर्शन होंगे। हेलेन वापस यूनान जायेगी।"

"हेलेन !" चन्द्रगुप्त ज़ोरसे चिल्लाया।

हेलेनने अपने स्वरकी सीमातक तीव्र होकर कहा, "नहीं, नहीं, हेलेन इस दम घुटनेवाले वातावरणमें नहीं रहेगी। यहाँ केवल रानियाँ ही रानियाँ हैं, नारियाँ नहीं हैं। तुमने आज मुझे रुलाया है, चन्द्रगुप्त। तुम सैल्यूकस नाईकेटरकी बेटीको जीवन भर रुलानेके लिए लाये हो। किन्तु यूनानकी बेटी इतनी जल्दी हार नहीं मानेगी। गैलेशिया, गैलेशिया, मेरी अंगरक्षिकाओंको बुलाओ। वापस यूनान जानेकी तैयारी करो...!" और वह खिलखिलाती हुई धूप सहसा ही अवसादकी सन्ध्यामें परिवर्त्तित हो गई। हेलेन फूट-फूटकर रोती हुई गैलेशियासे चिपक गई। गैलेशियाने

उसकी पीठपर हाथ फेरते हुए हिंसक शेरनीकी भाँति चन्द्रगुप्तको देखा। उसकी आँखोंमें तिरस्कार था।

अपमान और अप्रत्याशित काण्डसे हतबुद्धि, भारत-सम्राट्, शूरवीर चन्द्रगुप्त मौर्य पलभरके लिए किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो गया। फिर पैर पटकता हुआ वह बाहर निकल गया।

उसी रात्रिको जब चन्द्रगुप्तके पास समाचार पहुँचा कि यूनानी अंगरक्षिकाएँ बहुत अधिक व्यस्त हैं और लम्बी यात्राकी तैयारियाँ कर रही हैं, उसने तुरन्त कौटिल्यके शयन-कुटीरके सामने पहुँचकर द्वार खट-खटाये। थोड़ी देरमें द्वार खुल गये।

"क्या है, वत्स?" कौटिल्यने मौर्यकुलपतिसे पूछा।

"आचार्य, मुझे आज फिर आपकी सम्मतिकी आवश्यकता है..." और उसने एक ही साँसमें सारी कथा आचार्य विष्णुगुप्त चाणक्यको सुना दी।

सब कुछ सुनकर विचारशील नेत्र ऊपर उठाते हुए चाणक्यने कहा, "चन्द्रगुप्त, जो बातें तुमने बताई हैं वे यदि अक्षरशः सत्य हैं, तो यह उद्दण्ड नारी सम्राटोंके घरमें रहनेके योग्य नहीं है। उसका परित्याग करना चाहिए। किन्तु ठहरो, इससे घरकी बात बाहर फूटेगी। यूनानी राजदूत मेगस्थनीज़को पता चलनेसे पहले एक बार राक्षसकी सहमति ले लेना आवश्यक है।"

दोनों गुरु-शिष्य उसी समय राक्षसके भवनकी ओर चले। मार्गमें चलते हुए जब आचार्यके मस्तिष्कमें ठंढी हवा पहुँची, तो उन्होंने कहा, "वत्स, जल्दी निर्णय करना उचित नहीं। कूटनीतिसे काम लेना पड़ेगा।"

"परन्तु, आचार्य, यूनानी अंगरक्षिकाएँ और हेलेनके निजी सैनिक यात्राकी तैयारी तेज़ीके साथ कर रहे हैं...!"

वाटिकाको लाँघकर राक्षसके द्वारपर पहुँचना था। परन्तु उन्होंने आश्चर्यके साथ देखा कि राक्षस अखण्ड विचारमुद्रामें वाटिकाकी रविशों-

पर इधर-से-उधर चक्कर काट रहा है। जब चाणक्यने उसके कन्धेपर हाथ रखा, तो वह चौंक पड़ा।

चाणक्यने कहा, "लगता है इस गहन रात्रिमें गहरा विचार चल रहा है!"

राक्षसने सम्राट्को देखकर हाथ जोड़े और प्रणाम किया। फिर बोला, "विचार तो रात्रिमें ही सुगमतासे हो सकता है, आचार्य। मैं यूनानी दर्शनके बारेमें सोच रहा था, मुख्यतः इस बातपर कि सत्यके टुकड़े करके किस प्रकार उसकी परख की जा सकती है। हम भारतीय आंशिक सत्यसे किसी वस्तुमें सत्यकी स्थापना नहीं करते। परन्तु यूनानी दार्शनिक अरस्तू करता है। कैसे करता है मैं इसका कुछ अतापता पा रहा हूँ।"

"तो फिर लीजिए, समस्या उपस्थित है। उस अतेपतेका प्रयोग इसपर कीजिए—"और चाणक्यने थोड़े और नपे-तुले शब्दोंमें राक्षसके सम्मुख नवीन समस्या रख दी। राक्षस सब कुछ चुपचाप सुनता रहा। फिर वह बोला :

"आर्यश्रेष्ठ, आप एक मनुष्य हैं—यह पूर्ण सत्य है?"

"इस प्रश्नका उत्तर देनेकी आवश्यकता नहीं", चाणक्यने हँस कर कहा।

"किन्तु सम्राट्का मनुष्यत्व जब उनके अन्य गुणोंके सम्मुख रखते हैं, तो ममुष्यत्वका गुण पूर्ण सत्य न रहकर एक बड़े सत्यका अंश बन जाता है। सम्राट् 'असाधारण मनुष्य' हैं।"

चाणक्यने राक्षसको गहरी नज़रसे देखा। फिर उन्होंने कहा, "मन्त्रीप्रवर, आपकी बात समझमें आनेवाली है।"

"इस असाधारण मनुष्यने सैल्यूकस नाईकेटरको जीता है इससे यह बड़ा सत्य एक और बड़े सत्यमें विलीन हो जाता है।"

"हूँ," चन्द्रगुप्तने हुंकारा भरा।

"और आर्यश्रेष्ठने कुमारी हेलेनका पाणिग्रहण किया, इससे सम्राट्ने

बेबीलोनिया, यूनान और भारतको एक सूत्रमें बाँध लिया, यह बात सम्राट्के व्यक्तित्वको एक अन्य पूर्ण सत्यकी ओर ले गई...।"

"ये तो सब स्थापित सत्य हैं, मंत्रीप्रवर", चाणक्यने कहा।

"अवश्य, यह एक सत्य नहीं, अनेक सत्य हैं—अथवा किसी पूर्ण सत्य के अनेक अंश हैं। किन्तु ये अंश न केवल अपनेमें पूर्ण ही हैं, बल्कि स्वयं अलग-अलग अनेक अंशोंसे निर्मित हैं। आर्यश्रेष्ठ सम्राट् हैं, विजेता हैं, पति हैं, मनुष्य हैं, प्रौढ़ मनुष्य हैं, स्वदेशाभिमानी हैं, और आर्य हैं। ये कुछ पूर्ण सत्य हैं, जो मिलकर एक बड़े पूर्ण सत्यका निर्माण करते हैं—कहिए सम्राट् चन्द्रगुप्त मौर्यके अस्तित्वका।"

"यहाँ तक तो मंत्रीप्रवर राक्षसकी बातसे सन्तुष्ट हुआ जा सकता है", चाणक्यने चन्द्रगुप्तकी ओर देखकर कहा, जिसके उत्तरमें सम्राट्ने 'हूँ' की।

"तब, आचार्य", राक्षसने कहा, "प्रत्येक कठिनाई विरोधाभाससे उत्पन्न होती है। विरोधाभास सत्यके अंशोंमें विपर्ययत्वसे उत्पन्न होता है। विपर्ययत्व तब उत्पन्न होता है, जब सत्यके किसी अंशको पूर्ण सत्य नहीं माना जाता..."

"अर्थात्?" चाणक्यने पूछा।

"अर्थात् सम्राट् एक पति हैं इसे आप और स्वयं आर्यश्रेष्ठ पूर्ण सत्य नहीं मानते, जिसके स्वयं अनेक अंश हैं। इन्हें केवल अन्य सत्योंके आश्रित मानते हैं। आश्रित वे हैं, किन्तु पूर्णतः नहीं।"

"और यदि आर्यश्रेष्ठ पति हैं इसे पूर्ण सत्य मानें, तो?" चाणक्यने प्रश्न किया।

"तो फिर आइये, इसके भी खंड करें। सम्राट्के पतित्वके अनेक अंश उनकी अनेक रानियाँ हैं, जो कुछ अंशोंमें पृथक् अस्तित्व रखती हैं, और कुछ अंशोंमें एकाकार हैं। पृथक् अस्तित्वमें आयु, स्वभाव, विचार, इच्छाएँ, आकांक्षाएँ आदि हैं, जिन्हें सम्राट् अपने बृहद् अस्तित्वके कारण अलग-अलग स्वीकार नहीं करते। सम्राट्को उस बड़े अस्तित्वका त्याग करके समयपर

केवल पति-रूप धारण करना पड़ेगा, और प्रत्येक पृथक् अस्तित्वको आत्मसात् करनेके लिए भिन्न-भिन्न पति-रूप धारण करना पड़ेगा, नहीं करेंगे, तो विपर्ययत्व खड़ा होगा, विरोधाभास उपजेगा, कठिनाई उत्पन्न होगी और वह संघर्षका रूप धारण कर लेगी।"

"शायद हम समझ रहे हैं—तब हेलेनके बारेमें आप क्या कहते हैं, मंत्रीप्रवर?"

"कहीं मेरी नज़र न लग जाये?" राक्षस मुसकराया।

"ओह! आप भी, मंत्रीप्रवर, बस एक ही हैं?" सम्राट्ने कहा।

"आपका यूनानी पुष्प अपना सर्वथा पृथक् अस्तित्व रखता है और यह एक पूर्ण सत्य है", राक्षसने गम्भीर होकर कहा। "शेष रनिवासकी मान-मर्यादा और आपके प्रौढ़ व्यक्तित्वके साथ उसका एकीकरण उसी दशामें सम्भव हो सकता है, जब आप इस स्थितिको पूर्ण सत्यके रूपमें स्वीकार कर लें। स्वीकारोक्ति मन, वचन और कर्म तीनोंसे होनी चाहिए। इन तीनों साधनोंमेंसे आपने अभी पहला साधन ही नहीं अपनाया है।"

"पहला साधन क्या होगा?" चाणक्यने रस लेते हुए पूछा।

"मनसे आप एक अठारह वर्षकी चपल, उच्छृङ्खल, सरल, स्वदेशके अभिमानसे भरी यूनानी बालिकाको एक बीस-पच्चीस वर्षके चुस्त, चालाक, सरल और स्वस्थ भोले नवयुवकके रूपमें ग्रहण करें, और उसके सम्मुख आकर भूल जायें कि आप असाधारण मनुष्य हैं, विजेता हैं, सम्राट् हैं, भारतीय हैं, और प्रौढ़ हैं। स्वर्णकी सही परख करनेके लिए कसौटीको किसी-न-किसी अंशमें उसीका रूप धारण करना पड़ता है।"

"तो मैं उसके साथ बच्चोंकी तरह खेलूँ?" सम्राट्ने आश्चर्यसे राक्षसका मुँह देखते हुए पूछा।

"एक अल्पायु, चपल और सरल यूनानी बालिकासे विवाह करके वह खेल आपने प्रारम्भ कर दिया है, आर्यश्रेष्ठ! मेरा निवेदन केवल इतना है कि उस खेलको खिलाड़ीकी तरह खेलिए।"

"चलिये", चाणक्यने चन्द्रगुप्तसे कहा। "धन्यवाद, मंत्रीप्रवर !"

"आपको भी धन्यवाद, आचार्य", राक्षसने कहा। "यूनानी दर्शनका एक प्रयोग पूरा हो गया है और आपने शेष रात्रि मुझे चैनसे सोनेका अवसर दिया है।"

मार्गमें चाणक्यने कहा, "चन्द्रगुप्त, जिन कलाविदोंने यह काष्ठ-प्रासाद बनाया है, उनको इसी समय बुलाना होगा। तब तक आप हेलेनकी सखीको सूचित कराइये कि सार्थ परसों यूनानके लिए प्रस्थान करेगा।"

और जब हेलेनके पास यह समाचार पहुँचा, तो वह असाधारण रूपसे गम्भीर हो गई। परित्यक्ताके मनकी कड़वाहट उसके हृदयमें भर गई।

उस रात्रिके समाप्त होने तक राजभवनके मुखद्वारके सामने काष्ठ-कारोंके औज़ारोंकी ध्वनि होती रही।

हेलेनका अगला दिन बहुत तापपूर्ण रहा। उसने यूनानी अङ्ग-रक्षिकाओंको विभिन्न आज्ञाएँ दीं, जिनका अर्थ था कि केवल वही सामान लिया जाय, जो यात्रामें आवश्यक हो। यूनानी सैनिकोंको अगले दिन सुबह तक तैयार होनेके लिए कहलवाया गया। सारे दिन वह यूनानी पुराणोंकी कथाएँ पढ़ती रही। उनमें सभी तरहकी कथाएँ थीं—पति-मिलनकी भी, पति-बिछोहकी भी, पत्नीघात और पतिघातकी भी। उसकी समझमें कुछ नहीं आया। सन्ध्या तक उसकी हँसी, उसकी सरलता, उसकी सौम्यता उसके मुखपरसे तिरोहित हो गई।

रात आ गई और उसका दूसरा प्रहर बीतनेको हुआ। हेलेनकी आँखोंमें नींद नहीं थी। उसके पिता सैल्यूकस नाईकेटर क्या कहेंगे। यूनान क्या कहेगा। यूनानियोंके बारेमें भारतीय क्या सोचेंगे। क्या वह सचमुच आवश्यकतासे अधिक उच्छृङ्खल है ?

तभी गैलेशिया बाहरसे दौड़ी दौड़ी आई, "हेलेन, प्रिय हेलेन, हमारा विचार ग़लत निकला..."

"कौन-सा विचार,? क्या ग़लत निकला ?" हेलेनने पूछा ।

"हाथी वाला," गैलेशियाने जल्दीसे कहा, "उठो तो सही।" गैलेशिया और हेलेन एक सन्देशवाहिका यूनानी अङ्गरक्षिकाके साथ भागी-भागी, आँगन-पर-आँगन पार करती हुई महलके दूसरे भागके मुखद्वारके सामने खड़े उसी हाथीके पास आईं, जिसे देखकर महलमें प्रवेश करते समय हेलेन आवश्यकतासे अधिक उत्सुक हो गई थी ।

"यही न ?" गैलेशियाने अङ्गरक्षिकासे पूछा ।

"हाँ", उत्तर मिला ।

गैलेशियाने कान हाथीके पेटसे लगा दिया । फिर हेलेनको सङ्केत किया । हेलेनकी उत्सुकता फिर जाग्रत हो गई। हाथीके भीतरसे खट् खट्की हल्की-सी ध्वनि आ रही थी ।

हेलेन अलग हटकर हाथीके पेटको ध्यानसे देखने लगी । उसी समय उसके पेटका नीचेवाला भाग हिला और एक चौकोर टुकड़ा उसमेंसे अलग होकर लकड़ीके कब्जों पर झूल गया । हाथीके पेटसे एक जंजीर बाहर निकली । आतङ्क, उत्सुकता तथा उद्वेगके साथ तीनों यूनानी रमणियोंने देखा कि उसके भीतरसे एक आदमी जंजीरपर झूलता हुआ नीचे उतर आया। नीचे आकर वह तेज़ीसे हेलेनकी ओर दौड़ा और उसे अपनी बाहुओंमें उठाकर एक ओरको भाग खड़ा हुआ।

यूनानी अङ्गरक्षिकाने चिल्लानेके लिए मुँह खोला, तो गैलेशियाने हथेलीसे उसका मुँह दबा दिया । फिर फुसफुसा कर बोली: "पागल, जानती नहीं, वह स्वयं सम्राट् चन्द्रगुप्त हैं !"

अङ्गरक्षिकाका मुँह फटाका फटा रह गया ।

सुबहको हँसते-मुसकराते हुए हेलेन अपने कक्षसे बाहर निकली और गैलेशियाको बुलाकर उसने कहा, "अब मैं वापस यूनान नहीं जाऊँगी । तैयारियाँ भङ्ग कर दी जायें ।"

"क्यों?" गैलेशियाने मुँहमें रूमाल दबाते हुए पूछा।

"क्योंकि सम्राट् गुरु कौटिल्यसे तुम्हारा विवाह करना चाहते हैं," हेलेनने मुसकराते हुए कहा।

गैलेशियाके मुखकी हँसी लोप हो गई। "नहीं, नहीं।" चिल्लाती हुई वह वापस दौड़ी चली गई और हेलेन अपने स्वभावके अनुसार खिलखिला-कर हँसती हुई अपने कक्षकी ओर लौट पड़ी।

सैल्यूकसकी बेटीके पृथक् अस्तित्वने सम्राट् चन्द्रगुप्तके मन-महल में अपना विशिष्ट स्थान बना लिया था।

• देश-द्रोही

सन् ६०४ ई० के दिन थे। बंगालका तत्कालीन शासक शशाङ्क युद्धमें जितना कुशल था, उतना ही अधिक नीतिनिपुण भी था। येन-केन-प्रकारेण विरोधीको मात देना उसकी प्रथम नीति थी। इस समय थानेश्वरके राज्यपर उसकी गिद्ध-दृष्टि थी। इस दृष्टिमें प्रकाश भरनेके लिए एक दिन एक विचित्र व्यक्तिने उसकी राजसभामें प्रवेश किया।

सभामें उस दिन हास्य-विनोदका रंग जमा हुआ था। शशाङ्क स्वयं इस हास्य-विनोदमें योग दे रहा था। वह बहुत प्रसन्न था। उस दिन उसने मदिराका सेवन नित्य-नियमका उल्लङ्घन करके किया था। चर्चा चल रही थी थानेश्वरके राजा राज्यवर्द्धनकी बहन राज्यश्रीको लेकर। अपने पिताकी अचानक मृत्यु हो जानेपर राज्यवर्द्धन कुछ ही दिन हुए राजगद्दीपर बैठा था।

एक मुँहलगा सभासद कह रहा था, "अन्नदाता, सुना है कि थानेश्वर की देवी रोज़ पतिसे बंगालके फलोंकी माँग करती है। इस रोज़-रोज़के उलाहनेसे बचनेके लिए बेचारे मौखरिनरेशने महलोंमें जाना भी छोड़ दिया है।"

शशाङ्कके मुँहपर मुसकान आई और चली गई। "अरे, क्या तुम लोगोंमेंसे कोई ऐसा नहीं, जो देवीके पास समाचार भिजवा सके कि बंगालमें वाटिकाओंकी कमी नहीं है?"

एक अन्य राजपुरुषने कहा, "लेकिन, महाराज, यहाँकी वाटिकाएँ तो उठकर कन्नौज नहीं जा सकतीं। वहाँसे देवी स्वयं आयें, तो चाहे बंगालके फल खायें, चाहे यहाँकी वाटिकाओंमें..."

"स्वयं ही रहने लगें...हा...हा...हा !" शशाङ्कने मनके भीतर छिपी वासनाको प्रकट करते हुए एक भारी ठहाका लगाया।

उसी समय द्वारपालने सूचना दी : "महाराज, एक उद्दंड विद्यार्थी आपके चरण स्पर्श करना चाहता है। उद्देश्य नहीं बताता। हटानेसे हटता नहीं है।"

शशाङ्क एकदम गम्भीर हो गया। "तो किसीके पुण्यका भागी बननेमें तू क्यों रोड़ा अटकाता है, रे ? आने दे।"

सभाने देखा कि एक उन्नत ललाटवाले युवकने भीतर प्रवेश किया। उसके पैरोंमें एक स्वच्छ धोती थी। शरीरपर एक चादर इस प्रकार लिपटी हुई थी कि उसका दायाँ हाथ उससे पूराका पूरा ढँक गया था। सीधे-सीधे आकर वह ठीक शशाङ्कके सामने रुका और अपना बायाँ हाथ ऊपर उठाकर उसने कहा, "राजन्, कल्याण हो।"

शशाङ्कने पूछा, "तुम कौन हो ? क्या चाहते हो ?"

"मैं तक्षशिलाका स्नातक कीर्त्तिसेन हूँ। बंगालकी राजसेवाका अवसर चाहता हूँ। महाराजके उपसेनापतिका पद चाहता हूँ।"

सभामें उपस्थित सारे राजपुरुष दाँतोंमें उँगली देने लगे। कोई छोटा-मोटा पद नहीं, सीधे उपसेनापतिका पद ! जिस सभासद्ने राज्यश्रीके प्रसङ्गसे शशाङ्कका मनोरञ्जन किया था वही बोला, "क्या तक्षशिलासे कोई गधा स्नातक बनकर नहीं निकलता ? हमारी सेनामें उपसेनापतियोंकी नहीं, कुछ गर्दभोंकी आवश्यकता है, जो कन्नौज तक फलोंकी वाटिकाओंको ले जा सकें।"

देखते-देखते विद्यार्थीके मुँहपर रक्तकी लाली उभर आई। राजा शशाङ्क हँस पड़ा। उसने सभासद्की ओर उँगली उठाकर कहा, "पीताम्बर, तक्षशिलाके स्नातकके प्रति यह व्यवहार भद्रोचित नहीं है।"

लेकिन विद्यार्थीका क्रोध सीमा पार कर चुका था। उसने स्पष्ट और तीखी वाणीमें कहा, "नहीं, तक्षशिलाके महान् विश्वविद्यालयसे गधे

स्नातक बनकर तो नहीं निकल पाते, लेकिन कुछ पीताम्बर गधे रस्सा तुड़ाकर कभी-कभी निकल भागते हैं। पकड़ पानेपर ऐसे गधोंकी मरम्मत वहाँ अच्छी तरह हो जाती है।"

पीताम्बर विचलित होकर इस तरह खड़ा हो गया, जैसे बँधे हुए बाँसका बन्धन खुल जानेपर वह उछलकर खड़ा होता है। उसकी तलवार बाहर खिंच गई। उसने चिल्लाकर कहा, "महाराज शशाङ्ककी सौगन्ध, जिस व्यक्तिकी मरम्मत यहाँ पर होगी, उसके माथेपर गर्दभराजकी मोहर दागी जायेगी। सावधान, पीताम्बरने हर युद्धमें गिनकर नौ महारथियोंका संहार किया है।"

और वह उत्तेजित अवस्थामें आगे बढ़ा। निरीह विद्यार्थीने एक राजसभामें इस विचित्र प्रकारकी उद्दण्डताको निरखकर महाराज शशाङ्ककी ओर देखा। शशाङ्क हँस पड़ा। अपनी कमरसे खड्ग निकालकर उसने युवक विद्यार्थीकी ओर फेंक दिया। "सँभालो !" उसने नशीले स्वरमें कहा, "योद्धाओंके साथ बातें करनेमें जीभको ही सबसे अधिक बसमें करना पड़ता है।"

युवकने ऊपर आते हुए खड्गको सँभालनेकी चेष्टा की, किन्तु तब तक शत्रु सिरपर आ पहुँचा। युवकने विचित्र फुरतीके साथ झुककर शशाङ्कके आते हुए खड्गको अपने दायें कन्धेसे टकराकर भूमिपर गिर जाने दिया और जब तक यह कार्य सम्पन्न हुआ, तब तक पीताम्बरकी कमरसे बँधी हुई कटार निकालकर उसका बायाँ हाथ उसके खड्गके वारको रोक चुका था। खड्गकी धार कटारके फल और कब्जेके जोड़पर जाकर झनझना उठी। इतनी लंबी तलवारका सन्तुलित वार इतनी छोटी कटारपर रोक लेनेके लिए जिस शक्तिकी आवश्यकता है, उसका यह प्रत्यक्ष प्रदर्शन देखकर शशाङ्क सहित उसके समस्त सभासद् चौंक उठे।

इसके बाद कटार और खड्गका यह अद्भुत युद्ध आरम्भ हुआ। एक

तरफ़ तौल-तौलकर सधे हुए हाथ खड्गका वार कर रहे थे, तो दूसरी ओर साक्षात् चपल विद्युत् उन्हें बचा रही थी। प्रदर्शन बेजोड़ था। किन्तु दर्शनीय था। आक्रमणका खड्ग सँभल-सँभलकर गिर रहा था, लेकिन कटारके कलेवरके अतिरिक्त वह तक्षशिलाके विद्यार्थीके शरीरको नहीं छू सका।

निकट ही था शशाङ्क कि इस असमान युद्धको बन्द करनेकी आज्ञा देता कि विद्यार्थी देखने योग्य चपलताके साथ हवामें उछला। तीन काम एक साथ हुए : युवकके शरीरके भारी धक्केसे नया वार करनेकी मुद्रामें शशाङ्कका वीर योद्धा पीठके बल भूमिपर गिरा, उसके गिरते ही विद्यार्थी उसकी छातीपर सवार हो गया और उसने अपनी कटार हवामें उठाई। नीचे पड़ा योद्धा सहसा घिघिया उठा—"नहीं, नहीं!" आज हास्य-विनोदके दिन यमलोक सिधारनेका उसका इरादा नहीं था।

शशाङ्कने सिंहासनसे उठते हुए कहा, "युवक, हम वीरोचित पुरस्कारसे तुम्हें लाद देंगे। इस कायरको छोड़ दो।"

किन्तु युवकने यह सब कुछ नहीं सुना। पराजित नराधमके प्राण उसके बसमें थे। उसकी कटार उसकी आँखोंके आगेसे गुज़रती हुई नीचे उतरी, वाक्पटु योद्धाके माथेतक उतरी, कुछ देर वहाँ ठहरी रही और सभाने देखा कि अधोगत व्यक्तिके हाथसे आतङ्कके कारण छुटी हुई खड्गको विजेता पैरोंसे ठोकर मारकर, बिना अपने राजसी आखेटके प्राण लिये ही, उसकी छातीपर से उठ खड़ा हुआ।

उसके उठते ही आँखें फाड़े विजित योद्धा उठा। सहसा ही सब लोगोंकी नज़रें उसके माथेपर जा टिकीं। वहाँ कटारकी नोकसे खूब गहरा गुदा हुआ था यह शब्द : "गर्दभराज!"

सहसा चीख मारकर पीताम्बरने अपना माथा ढक लिया!

युवक अपने दाँत चिकल रहा था। उसकी लटारकी नोक खूनसे तर थी। उसके गालोंकी अस्पष्ट हड्डियाँ रह-रहकर स्पष्ट हो जाती थीं। उसने

भूमिपर माथा पकड़े हुए व्यक्तिको तिरस्कारकी भावनासे देखते हुए कहा, "हमारे विश्वविद्यालयमें रस्सा तुड़ाकर भागे हुए गधोंकी इस तरह मरम्मत होती है।"

लेकिन सभा विस्मयविमुग्ध थी। शशाङ्ककी नज़रें युवकके शरीरपर ही थीं। वह अपने सिंहासनसे नीचे उतर आया। अपना दायाँ हाथ आगे बढ़ाकर उसने कहा, "हाथ आगे बढ़ाओ। जिस प्रचण्ड योद्धाके बायें हाथमें इतना बल है, हम देखना चाहते हैं उसके दायें हाथमें एक राजासे हाथ मिलाने योग्य उष्णता है या नहीं।"

लेकिन युवक चुप खड़ा रहा। केवल उसका दाँत चिकलना बन्द हो गया था और वह निर्निमेष दृष्टिसे बंगालके शासकको देख रहा था।

शशाङ्क एक पग और आगे बढ़ा। "तुम्हारे सोच-विचारका समय जाता रहा। समृद्धियोंका कोश तुम्हारे लिए अब खुला पड़ा है।" और यह कहकर उसने युवकके निस्पन्द दायें हाथको हाथ बढ़ाकर पकड़ना चाहा। किन्तु सहसा ही वह चौंक उठा। उसने झपटकर युवककी उस चादरको, जिसकी गाँठ पीठके पीछे कसकर बँधी हुई थी, झटकेके साथ उसके दायें हाथके कन्धेसे उघाड़ दी। फिर सारी राजसभाने सहसा कलेजा थामकर देखा: युवकका दायाँ हाथ कुहनीके ऊपरसे कटा हुआ था, और कटे हुए स्थानपर अभीतक एक खूनसे तर पट्टी बँधी हुई थी। युवकके पास वास्तवमें दायाँ हाथ था ही नहीं।

शशाङ्कका सारा नशा हिरन हो गया। वह मुग्ध नेत्रोंसे उस कटे हुए हाथको निहारता हुआ डगमगाते क़दमोंसे पीछे हटा। एक साथ उसके मस्तिष्कमें अनेक प्रश्न चौंधिया गये। यही नहीं, सारे राजपुरुषोंके दिमाग़ोंमें वे चक्कर काट रहे थे। यह अपूर्व योद्धा वास्तवमें कौन है? कहाँसे आया है? क्यों आया है? यदि कहीं इसके दोनों हाथ होते तो...।

शशाङ्क अपने सिंहासनपर पहुँच चुका था। कुछ सुस्थिर होकर उसने पूछा, "तुम कौन हो?"

"तक्षशिलाका एक स्नातक। मेरा नाम कीर्त्ति है...कीर्त्तिसेन।"

"यह हाथ कैसे और कहाँ कटा?"

"महाराज राज्यवर्द्धनके दण्डालयमें उन्हींकी आज्ञासे", युवकने उत्तर दिया, "राजद्रोहके अपराधमें।"

"क्या अपराध किया?"

"अपराध किया नहीं था, उसका आरोप किया गया था। उस आरोपके अनुसार मैंने महाराज प्रभाकरवर्द्धनकी हत्यामें हत्यारेकी सहायता की थी। मैं ही उस समय महाराजके कक्षमें था, उन्हें विष दिया गया था। सीधी हत्याका अपराध मुझपर सिद्ध नहीं हो सका, इसलिए सन्देह मात्रमें राज्यवर्धनने मेरा हाथ कटवा दिया।"

"केवल हाथ ही कटवाकर छोड़ दिया!" शशाङ्कने विस्मय प्रकट करते हुए कहा, "मारा नहीं?"

"हमने तक्षशिलामें एक साथ शिक्षा प्राप्त की थी," युवकने उत्तर दिया। "मेरा बड़ा भाई जयकीर्त्ति राज्यवर्द्धनका उपसेनापति है। केवल सन्देहमात्रपर राज्यवर्द्धन मुझे जानसे नहीं मार सका।"

"हूँ!" शशाङ्क कुछ देर तक विचारमुद्रामें तल्लीन रहा। इसके बाद सहसा उसने अपना मुँह ऊपर उठाकर घोषणा की: "हम युवक कीर्तिसेनको अपना उपसेनापति घोषित करते हैं। युवक बंगालके द्वारा दिये हुए इस सम्मानकी रक्षा करे।"

युवकने अपना शीश फिर एकबार झुकाया और गर्वसे सारी सभाको निरखता हुआ वह वापस राजद्वारकी ओर लौट गया।

उसके जानेके बाद भी बहुत देर तक राजसभामें सन्नाटा छाया रहा। फिर आपसमें कानाफूसी आरम्भ हुई। पराजित पीताम्बरको सब लोग भूल

ही गये थे, जो मस्तिष्ककी पीड़ाके कारण राजसभाके बीचमें ही पसर गया था। कुछ ही समयमें सारी राजसभा चेतन हो गई।

शशाङ्कने आज्ञा दी, "इस युवकको हमारे भेंट-कक्षमें लाया जाय!"

राजसभा विसर्जित कर दी गई और शशाङ्क अपने महलोंमें लौट गया। जब वह अपने भेंट-कक्षमें पहुँचा, तो वही युवक, कीर्त्तिसेन, उसी प्रकार चादरको लपेटे, कक्षके एक कोनेमें एक ऊँचे आसनका सहारा लिये खड़ा था। शशाङ्कने उसे देखते ही एक विमोहित व्यक्तिकी भाँति खिलकर कहा, "सुन्दर, अति सुन्दर! तुमने एक ही बारके कौशल-प्रदर्शनसे वङ्गभूमिका मन जीत लिया है।"

"वङ्गाधीश्वर", युवकने सीधे होकर उत्तर दिया, "आपकी इन प्रशंसात्मक उक्तियोंके लिए मैं आपका धन्यवाद करता हूँ। किन्तु कृपा करके मुझे अपनी स्थितिसे ऊँचा उठानेकी चेष्टा न कीजिये।"

"तुम योद्धा ही नहीं, महान् विभूति भी हो!" शशाङ्कने और भी प्रसन्न होकर कहा, "युवक, यह निश्चय है कि तुम एक दिन थानेश्वरकी विजय करोगे। पृथ्वी तुम्हारे पदतलके प्रहारसे काँप उठेगी।"

"नहीं, वङ्गपति, खेद है कि मेरा यह स्वप्न नहीं है। मैंने तक्षशिलाके महान् विश्वविद्यालयमें दसियों वर्ष तक राजनीतिका अध्ययन किया है। मुझे ज्ञात है कि थानेश्वरकी विजय मेरी हाथकी रेखाओंमें नहीं है। इसके अतिरिक्त, थानेश्वर मेरी जन्मभूमि है। मैं मातृद्रोही नहीं हूँ।"

शशाङ्क जैसे आकाशसे गिर पड़ा। एक ओर युवककी वीरता उसके हृदयमें घर कर चुकी थी। उसके माध्यमसे वह थानेश्वरको अपने चरणोंमें लोटता हुआ देख रहा था। दूसरी ओर, युवकने एक ही वाक्यसे उसके स्वप्नोंको चूर कर दिया था। वह बोला, "आश्चर्य है, फिर भी तुमने हमारे उपसेनापतिका पद माँगनेकी स्पर्द्धा की!"

युवक एक उदासीन हँसी हँसा। "मैंने ठीक किया है, वङ्गपति।"

उसके नेत्रोंकी ज्योति वातायनके पार फैलती हुई सूर्यकी ज्योति पर जा टिकी। "मैंने आपके उपसेनापतिका पद इसलिए ग्रहण किया है कि मेरे और आपके राजनीतिक स्वार्थ एक अंशमें मिलते हैं। थानेश्वरके मार्गमें कन्नौज पड़ता है। कन्नौज विजय करके अपनी प्रेयसी राज्यश्रीको गृहवर्मनके परिणय-पाशसे मुक्त करना आपकी चिर अभिलाषा है। अदूरदर्शी राज्य-वर्द्धनको अपने हाथसे मारकर प्रतिशोधकी आग बुझाना मेरी अभिलाषा है। ये दोनों अभिलाषाएँ तभी पूर्ण हो सकती हैं, जब वङ्गभूमिके उप-सेनापति पदपर कीर्त्तिसेन हो। राजनीतिके कठोर धरातलपर मैं और आप दोनों अपने-अपने लक्ष्योंको स्पष्ट देखकर मैदानमें चलें, तो भविष्यमें एक-दूसरेकी ओरसे भ्रम उत्पन्न होनेका स्थान नहीं रहेगा।"

शशाङ्क इस विचित्र युवककी राजनीतिको शान्त चित्तसे पी रहा था। जब उसने गृहवर्मनकी चर्चा की थी, तो उसके दाँत भिंच गये थे। जब राज्यश्रीका प्रसङ्ग आया था, तो उसके मुँह पर प्रलोभनकी छाया स्पष्ट दिखाई देती थी। इसके विपरीत, उसे दिखाई दिया कि उसका सामना जिस युवकसे हुआ है वह प्रतिशोधके अतिरिक्त समस्त मानवी प्रलोभनोंसे मुक्त है। ठीक भी है, जिस आततायीने एक सन्देह मात्रपर उसके जीवनकी सर्वप्रिय वस्तु, उसके दायें हाथसे उसे वंचित कर दिया था, उसके सिरको भूमिपर लोटा हुआ देखनेकी अभिलाषा उचित और स्वाभाविक थी। शशाङ्कने शंकित मनसे कहा, "युवक, लगता है कि तुम इस तथ्यकी ओरसे चेतन हो कि तुम एक देशद्रोही हो! ऐसी दशामें हमारे सम्मिलित स्वार्थकी पूर्तिमें क्या कोई बाधा आनेकी सम्भावना नहीं है?"

"नहीं," कीर्त्तिसेनने दृढ़ताके साथ कहा। जहाँ तक इन स्वार्थोंकी सीमा निश्चित है, वहाँ तक कीर्तिसेनका यह बचा-खुचा बायाँ हाथ और सैन्य-सञ्चालनका समस्त चातुर्य बङ्गपतिके साथ रहेगा। मैं महान् गुरु-कुलका स्नातक हूँ, असत्यका सम्भाषण पाप समझता हूँ। मैं देशद्रोही हूँ या नहीं यह बात अभी विवादास्पद है।"

शशाङ्क एक क्षण तक मौन खड़ा रहा। फिर उसने कहा, "अच्छी बात है। हमें अपने उपसेनापतिकी ये शर्तें स्वीकार हैं।"

युवक हँसा, "तब मेरी राजनीतिकी पहली किस्त लीजिए। इस कामके लिए आपको मालवा नरेश देवगुप्तसे सन्धि करनी पड़ेगी।"

"यह तो असम्भव है!" शशाङ्कने चौंककर कहा। "वङ्ग और मालवाका सात पीढ़ीसे विरोध है। हम मालवा जीतना चाहते हैं और देवगुप्त बंगालके स्वप्न संजोये हुए हैं। यह सन्धि तो हो ही नहीं सकती।"

"नहीं, बंगपति," युवकने उत्तरमें कहा। "राजनीतिक लक्ष्य पूर्ण करनेके लिए सम्पूर्ण लक्ष्य लेकर आगे नहीं बढ़ा जाता। उसे अंश-अंश करके पूरा किया जाता है। मालव-नरेशको बङ्गभूमि हथियानेके लिए कन्नौज पहले लेना पड़ेगा क्योंकि मार्गमें कन्नौज पहले पड़ता है। वह इसके लिए तुरन्त तैयार हो जायेगा। वह राज्यश्रीको आपके हाथों सौपनेके लिए तैयार हो जायेगा क्योंकि उसे स्त्री नहीं चाहिए, भूमि चाहिए, बंगालको जीतनेके लिए आधार चाहिए, जहाँ खड़ा होकर वह तीर फेंक सके।"

शशाङ्कका चेहरा इन कटूक्तियोंको सुनकर उतर गया। "युवक," उसने कहा, "तुम हमारी भर्त्सना कर रहे हो! हम राज्यश्रीको रानीके रूपमें ग्रहण करना चाहते हैं, एक मामूली कृषककी स्त्रीके रूपमें नहीं। हम उसके लिए बंगालको मालवा-नरेशके हवाले नहीं कर सकते।"

युवक इस बार ठहा मारकर हँसा, "महाराज शशाङ्क, आप सचमुच बहुत भोले हैं। क्या आप इतना भी नहीं जानते कि कन्नौजका सारा राज्य राज्यश्रीके रूप और गुणके सामने शीश झुकाता है? मौखरी प्रजा उसपर जान निछावर करती है। मालव-नरेशको इस सन्धिके फलस्वरूप भूमि मिलेगी और आपको उस भूमिपर रहने वालोंके हृदय मिलेंगे। समय आने पर राज्यश्रीका एक इङ्गित मौखरी राज्यके एक-एक तीरको मालव-

नरेशके हृदयपर केन्द्रिय कर देगा। भूमिका प्यासा नरेश स्वयं आन्तरिक क्रान्तिसे मारा जायगा।"

"ओह!" शशाङ्ककी भौंह आश्चर्यसे ऊँची हो गई। उसने दौड़कर युवकके कन्धे झिंझोड़ डाले। "तुम्हारी राजनीतिक सूझ-बूझ अपूर्व है...। तुम्हारे साथ मैत्री स्थापित करनेमें हमें गर्व है।"

युवकने अपने बायें हाथसे उसके दोनों हाथोंको एक-एक करके कंधों परसे हटा दिया, उसने कहा, "राजन्, ध्यान रखिए, राजाओंको उस समय तक प्रेम नहीं करना चाहिए, जब तक उसमें राजनीतिक स्वार्थ न हो।"

शशाङ्कके पास कोई उत्तर नहीं था।

उसी दिन मालव-नरेशके पास सन्धिपत्र भेजा गया। उसका एक-एक शब्द बंगालके नवीन उपसेनापतिके मुँहसे निकला था। आशाके अनुकूल प्रतिक्रिया हुई और मालव-नरेश फैलाये हुए जालमें भूखे पत्तीकी तरह आ फँसा। साथ ही उसने उसे क्रियात्मक रूप दिया। राज्यवर्द्धनका ध्यान उत्तरके हूणोंकी ओर केन्द्रित पाकर उसने अपनी विशाल सेनाओंको मौखरी राज्यकी ओर बढ़ा दिया। इधरसे एक हाथका सेनापति बंगालकी थोड़ी-सी चुनी हुई सेनाओंको लेकर कन्नौजकी ओर बढ़ा। यही नहीं, उसके पीछे शशाङ्क शेष बड़े भागका नेतृत्व अपने हाथमें लेकर, योजनाके अनुसार, अपने उपसेनापतिके पदचिह्नों पर चल पड़ा।

कन्नौज सहसा ही दो चक्कीके बीचमें पिस गया। जिस समय मालव-नरेश कन्नौजपति ग्रहवर्मनका सिर काटकर, उसके रुधिरसे लाल खड्ग लिये, किलेके अंतर्पटसे बाहर निकला, युवक जीतमें अपना भाग बँटानेके लिए उपस्थित था। मालव-नरेश क्षुद्रबुद्धि शशाङ्कके प्रतिनिधिको देखकर हँसा। उसने कहा, "जाओ, कन्नौजके राजमहलमें वह 'स्त्री' तुम लोगोंकी प्रतीक्षा कर रही है।"

युवकने भी हँस कर उत्तर दिया, "बधाई है, राजन्, आपने बंगालका पहला द्वार जीत लिया है।" और इससे पहले कि मालव-नरेश स्वयं

वङ्गसेनापतिके मुँहसे ये शब्द सुनकर उनका अर्थ लगा पाये, कीर्त्तिसेन आगे बढ़ गया। पीछे मालव-नरेश सोचता ही रह गया : "ये लोग अपनी स्थितिकी ओरसे चेतन हैं।"

जिस समय युवक कीर्त्तिसेन कन्नौजकी रानीके कक्षमें पहुँचा, उसके मुखपर लालिमा आँखमिचौनीका खेल खेल रही थी। एक दिन पहले वह कन्नौजकी सर्वेसर्वा था। आज एक लुटी-पिटी विधवा थी। परिस्थितियोंके दुर्दाम चक्रने उसका राज्य और श्री दोनों लूट लिये थे। जब उसने इस चक्रके प्रणेताको अपने कक्षके द्वारपर खड़ा पाया, तो वह चौंक पड़ी।

"कौन, कीर्त्तिसेन, जयकीर्त्तिका भाई।"

"हाँ, मैं ही हूँ," कीर्तिसेनने भीतर पग रखते हुए कहा। "मैंने आपकी युगोंसे संचित साध पूरी की है। आपका हृदयेश्वर, राजा शशाङ्क, कन्नौजकी राह पर है और सन्ध्या तक आया ही चाहता है।"

राज्यश्रीका मुख लज्जा, अभिमान और परितापके मिश्रित आवेगसे तमतमा गया। वह आहत बाघिनकी तरह उठ खड़ी हुई और उसकी मुट्ठियाँ भिंच गईं। विषमें बुझे हुए तीरोंकी तरह उसके मुँहसे शब्द निकले।

"नीच, जिस प्रकार तू देशद्रोही है, उसी प्रकार मुझे भी विश्वास-घातिनी समझता है। क्या तुझे मालूम नहीं कि मैं उस राज्यवर्द्धनकी बहन हूँ, जिसके प्रतापसे आज पृथ्वीकी दसों दिशाएँ काँप रही हैं? क्या मैं एक आर्य नारी होकर अपने पतिके अतिरिक्त किसी अन्य पुरुषका चिन्तन भी कर सकती हूँ? सच है, एक देशद्रोहीके अतिरिक्त किसीमें इतनी कुबुद्धि नहीं हो सकती कि वह अपनी विकृत भावनाओंकी कसौटी-पर एक सुशीला नारीकी भावनाओंको परख सके।"

युवक कीर्तिसेनके हाथोंके तोते उड़ गये। उसे मालूम हुआ कि वह इस प्रकार बीच मैदान खड़ा है, जहाँ सिर मुँड़ाते ही ओले पड़े हों! जब एक असफल राजनीतिज्ञ सहसा ही यह देखता है कि उसकी कूटनीति केवल एक निम्नस्तरकी आत्मप्रवञ्चना थी, तो सम्भवतः उसके जैसी दयनीय

स्थिति संसारमें किसी बुद्धिजीवीकी नहीं होती। जितनी देर राज्यश्री बोलती रही उतनी देर वह उसकी ओर आँखें फाड़े देखता रहा। फिर प्रयत्न करके उसने अपनेको संयत किया।

"देवी, प्रतीत होता है कि मैंने अपने जीवनकी सबसे बड़ी भयङ्कर भूल की है। अब और कोई नहीं, केवल मेरा हृदय जानता है कि मैं अदृष्ट रहकर अपने स्वार्थके साथ-साथ आपकी आकाङ्क्षा-पूर्तिमें योग दे रहा था। बंगालमें भ्रमण करते समय मुझे जनश्रुतियोंसे ही यह पता चला था कि आप शशाङ्ककी ओर आकृष्ट हैं। स्वयं राजा शशाङ्कने एक बार भी इस धारणाका खण्डन नहीं किया। मेरी शत्रुता आपसे नहीं, आपके भाई राज्यवर्द्धनसे है। एक आर्यनारीके रूपमें आप मेरी पूज्या हैं। मैंने अपनी भूलसे एक ऐसा खेल खेला है, जिसमें एक परमपूजनीया आर्य-नारीका सर्वस्व लुट गया है। ओह, मुझे दुःख है कि यह भूल कलङ्क बनकर सदा ही मुझे डसती रहेगी! किन्तु, देवी, मैं देशद्रोही नहीं हूँ। मैंने अपनी मातृभूमिको शत्रुके हाथों नहीं बेचा है।"

कीर्त्तिसेनकी बातें सुनते-सुनते राज्यश्री परितापके आवेगसे कातर हो उठी। उसने कहा, "अब भी तुम्हें यह कहते लज्जा नहीं आती कि तुम देश-द्रोही नहीं हो? कन्नौज वर्द्धन-साम्राज्यका प्रहरी था। यह कन्नौज ही था, जो छाती तनाये पूर्वसे बंगाल और पश्चिमसे मालवाके आक्रमणसे वर्द्धन-राज्यके दक्खिनी द्वारकी रक्षा कर रहा था। तुमने दोनों विरोधी शक्तियोंको एक करके इसे बीचमें रखकर पीस डाला, मेरे प्राणोंसे प्रिय पतिकी हत्या कर डाली। अरे, पापी, तूने मेरी आकाङ्क्षा पूरी नहीं की, अपने देशका द्वार शत्रुके लिए खोल दिया है!"

"नहीं, नहीं, देवी, ऐसा न कहिए", कीर्त्तिसेनने भी उसी भाँति कातर होकर उत्तर दिया। "यह द्वार अभी बन्द है। इस द्वारकी रक्षा करनेवाला मेरी योजनामें भी जीवित था और अब भी जीवित है। यदि आप शशाङ्ककी रानी बनतीं, तो भी अपनी प्रमुख शक्तिके द्वारा वर्द्धन-

साम्राज्यको जीतनेका स्वप्न उसके हृदयसे तिरोहित कर सकती थीं। कन्नौज का प्रजा-हृदय उस समय भी आपका रहता और अब भी आपका है। आप चाहें, तो वर्द्धन-साम्राज्यका यह दक्खिनी द्वार अब भी बन्द रहेगा।"

"हूँ!" राज्यश्री हुंकारी। "तुम्हारे पापका प्रायश्चित्त तो मुझे करना ही होगा, किन्तु जीवित रहकर नहीं, अपने पतिके साथ सती होकर। कन्नौजकी रक्षा करनेके लिए राज्यवर्द्धन सन्ध्या तक आया ही चाहता है।"

"नहीं, आप सती नहीं होंगी, देवी! आपके पलायन करते ही यह द्वार खुला रह जायगा। राज्यवर्द्धनको मेरी प्रतिशोधकी आगमें भस्म होना ही पड़ेगा। भगवान् जानता है कि मेरी शत्रुता अपने देशसे नहीं, अपने देशके एक व्यक्तिसे है। संयोगसे वह व्यक्ति वर्द्धन-साम्राज्यका अधिपति है। एक अधिपति जा सकता है, दूसरा उसके स्थानपर आ सकता है। हर्षवर्द्धनमें इस साम्राज्यको सँभालने और उसे विस्तृत करके अपने वंशकी कीर्त्तिपताका फहरानेकी अधिक योग्यता है। उसके हाथोंमें आते ही इस राज्यकी सीमाएँ मालवा, कन्नौज और बंगालको आत्मसात् कर लेंगी। लेकिन यह तभी होगा, जब आप चिताका आलिङ्गन न करें।"

राज्यश्रीने कहा, "यदि तुम देशद्रोही नहीं हो तो मेरे सामनेसे हट जाओ, मेरी राह छोड़ दो। एक आर्यनारी अपने कर्त्तव्यको नहीं भूल सकती! पतिके सम्मुख संसारकी सम्पदाएँ उसके लिए तुच्छ हैं।"

कीर्त्तिसेनने सिर झुका लिया, "मैं आपको रोकनेमें भौतिक शक्तियोंका उपयोग नहीं करूँगा। किन्तु इतना अवश्य कहूँगा कि पतिके पार्थिव शरीरके साथ जल मरनेके स्थानपर उसके उद्देश्योंकी पूर्त्तिमें लगे रहना ही नारीका सच्चा धर्म है।"

"मैं इस विषयमें तुमसे उपदेश सुनना नहीं चाहती। तुम हमारे वंशके हत्यारे हो और अब भी तुमने हत्यापर कमर कस रखी है। राज्य-वर्द्धनमें तुमसे उलझने योग्य बल है। तुम मेरी राह छोड़ दो।"

"आप मेरी ओरसे स्वतन्त्र हैं, देवी! आपकी इच्छापूर्त्तिमें अब कोई बाधक नहीं बन पायेगा," कहकर कीर्त्तिसेन मुड़ा और कक्षसे बाहर निकल गया।

सन्ध्या होते-न-होते शशाङ्क कन्नौजमें आ धमका। मालव-नरेश देवगुप्तके कपटी हृदयसे अपना दूषित हृदय मिलाकर वह महलोंके सामने आया। किन्तु वहाँ कीर्त्तिसेन अपने अङ्गरक्षकोंके साथ डटा खड़ा था। शशाङ्कने अश्व छोड़ते ही उसके कन्धोंपर हाथ रखकर कहा, "हम अपने उपसेनापतिको इस प्रथम विजयके अवसरपर बधाई देते हैं। कहाँ है हमारी मोहिनी?"

कीर्त्तिसेनने तिरस्कारसे होंठ सिकोड़ लिये। "वह आपकी मोहिनी नहीं है, महाराज शशाङ्क! आपने मुझे धोखेमें रखा। वह सच्ची आर्य नारी है और अपने पतिके अतिरिक्त अन्य किसी भी पुरुषका ध्यान करना उसके लिए सबसे बड़ा पाप है। मेरे रहते आप उसको छू भी नहीं सकते।"

शशाङ्कने उसके कन्धे परसे अपने हाथ हटा लिये। "यह कैसा विश्वासघात है! हम तुमसे यह आशा नहीं करते थे। क्या हमारा आपसी समझौता तुम्हें स्मरण नहीं रहा?"

"वह मुझे खूब अच्छी तरह स्मरण है," कीर्त्तिसेनने कहा, "किन्तु वह तभी पूरा हो सकता था, जब देवी राज्यश्रीकी इच्छा आपके साथ जानेकी होती। मैं आज तक यही समझता रहा कि देवी आपकी ओर आकर्षित हैं। उनसे बातें करनेपर यह धारणा मिथ्या सिद्ध हुई। अतः अब उनके सतीत्वकी रक्षा करना मेरा पहला कर्त्तव्य है, जिसे आप मेरे रहते पूरा नहीं कर सकते। वङ्गभूमिमें पहुँचकर आप इसके लिए मुझे दण्ड दे सकते हैं। यहाँ आपकी शक्ति तुच्छ है। इस समय वङ्ग-सेनाओं का मैं सेनापति हूँ।"

शशाङ्कने होंठ भींच लिये। पर वह विवश था। कुछ देर बाद वह

अपनी विमूढ़तासे निकलकर हँसा, "अच्छी बात है। हम तुम्हें अवश्य दण्ड देंगे। इस छोटी-सी बातके लिए हम तुम्हें एक इतना छोटा-सा दण्ड देंगे, जो हमारे उपसेनापतिके गौरवके पूर्ण अनुरूप होगा। राज्यवर्द्धनकी सेनाएँ कन्नौजकी सीमाएँ छू रही हैं। पहले हमें उसका स्वागत करना है!"

राज्यवर्द्धनसे सन्धि करनेके लिए शशाङ्क और मालव-नरेश दोनोंकी ओरसे एक राजदूत गया। तय हुआ कि तीनों राजाओंका एक सम्मिलित भोज होगा और उसीमें सब सन्धिकी शर्त्तोंपर विचार होगा। राज्यवर्द्धनने इस बातको मान लिया। जहाँ तीसरा राजा भी हो, वहाँ विश्वासघातकी सम्भावना नहीं थी। फिर साथमें अङ्गरक्षक रहेंगे। तीनों सेनाओंके मिलन-स्थलपर एक शिविरमें इस भोजका प्रबन्ध किया गया।

अगले दिन सुबहके समय इस शिविरमें राज्यवर्द्धनका स्वागत किया गया। कहना न होगा कि राज्यश्रीको इस समस्त कार्यवाहीसे अनजान ही रखा गया और महलपर इस बीच बड़ा पहरा रहा ताकि कोई व्यक्ति न भीतर जा सके, न बाहर आ सके।

जब भोज समाप्त हो गया और बातचीत आरम्भ होनेको हुई, तो सहसा ही कीर्त्तिसेन कमरमें खड्ग लटकाये, अपना कटा हुआ हाथ खोले अपने शत्रुके सामने जा खड़ा हुआ। अपने शत्रुको सम्बोधन करके वह बोला, "ओ वर्द्धन-साम्राज्य के कलङ्क, तुझे पहले मुझसे बातें करनी हैं। इस हाथको देख, इसे तूने काटकर यह समझा था कि तूने पृथ्वीसे शौर्यका नाम उठा दिया है। मैं तुझे अपने इस बायें हाथसे ही युद्ध करनेके लिए ललकारता हूँ। यदि तू कायर नहीं है और पराक्रमी प्रभाकर-वर्द्धनका पुत्र है, तो सामने आ।"

राज्यवर्द्धन एक लम्बे-चौड़े राज्यका अधीश्वर था। उसने हूणों, गुर्जरों और महासेन गुप्तसे लोहा लेकर उनके दाँत खट्टे किये थे। उसमें इतनी बात सुननेकी सामर्थ्य नहीं थी। उसने अपने अङ्गरक्षकसे खड्ग

लिया और आसनसे नीचे कूद गया। "मुझे अपनी भूल ज्ञात हो गई थी," उसने कहा। "किन्तु प्रतीत होता है, दैवने मेरे ही हाथों तेरी मृत्यु लिखी है।"

कीर्त्तिसेन ठहाका मारकर हँसा। "किसकी मृत्यु किसके हाथों लिखी है, यह तो निकट भविष्य बतायेगा। किन्तु यदि तू युद्धमें मारा गया, तो अपने अङ्गरक्षकोंको कह दे कि चुपचाप सिर धुनते वापस लौट जायें। यदि मैं मारा गया, तो मैं भविष्यवाणी करता हूँ कि वङ्गभूमि और मालवा तेरे चरणोंपर लोटेंगे।"

राज्यवर्द्धनने अपने अङ्गरक्षकोंको इच्छित आदेश दिया और शिविरसे बाहर विस्तीर्ण मैदानमें दोनों शूरवीरोंका द्वन्द्वयुद्ध आरम्भ हुआ। कुछ ही देरके द्वन्द्वमें दर्शकोंपर प्रकट हो गया कि वर्द्धन-साम्राज्यके अधीश्वरसे जीतना वङ्गसेनापतिके लिए दुरूह है।

मगर कौन जानता था कि यह राज्यवर्द्धनको उत्तेजित करनेकी एक चाल थी। युद्धका अन्त आया समझकर उसने अनवरत प्रहार करने आरम्भ कर दिये और उसका आत्मरक्षाका पक्ष ढीला पड़ गया। कीर्त्तिसेन इसी अवसरकी खोजमें था। नरपतिका वार बँचाकर उसने अपने बायें हाथके एक ही प्रहारसे उसका सिर धड़से अलग कर दिया।

कीर्तिसेनका स्वप्न पूरा हुआ। राज्यवर्द्धनके अङ्गरक्षकोंके हाथ पहले ही बँध चुके थे। विस्मयान्वित हुआ राजवर्द्धनका सिर अभी तक फड़क रहा था। किसी प्रकारकी जयके नारे नहीं लगाये गये। तीनों सेनाओंके मिलन-स्थल पर उत्तेजना वर्जित थी। राज्यवर्द्धनके अङ्गरक्षक अपने स्वामीके विलग अङ्ग उठाकर वापस अपनी सेनाको लौट गये। सन्ध्या होते-होते वर्द्धनोंकी पूरी सेना शोकमें मग्न हो गई। सबकी भुजाएँ भड़क रही थीं, मगर उनका मूल प्रेरक नहीं था। तत्काल हर्षवर्द्धनके पास, थानेश्वरमें यह दुःखद समाचार भेजा गया।

इधर मालव-नरेशने कन्नौजकी क़िलेबन्दी की। कीर्तिसेनने राज्यश्रीकी

पाल्की सजवाई और शशाङ्कसहित उसने बंगालकी ओर कूच कर दिया। जाते-जाते कीर्तिसेनने अपनी वीरतासे प्रभावित मालव-नरेशसे क्या वचन लिया यह शशाङ्क न जान सका।

कीर्त्तिसेनके सेनापतित्वमें भेजा हुआ यह अग्रिम दल शीघ्र ही शशाङ्कके अधीन बंगालके शेष शक्तिसे जा मिला, जिसकी सेनाओंने कन्नौजसे काफ़ी बचकर अपने पड़ाव डाल रखे थे। यहाँ पहुँचते ही शशाङ्कने सेनाओंको सज्जित होनेकी आज्ञा दी और अपने सेनापतिकी हर हालतमें रक्षा करनेकी शपथ खाये हुए उसके अङ्गरक्षक-दस्तेसे अलग हट जानेको कहा। किन्तु वीर योद्धाओंने उसकी आज्ञा माननेसे इनकार कर दिया। इसी बीच कीर्त्तिसेन आगे आ गया।

"महाराज शशाङ्क," कीर्त्तिसेनने कहा, "आपके प्रति ये लोग नहीं, मैं उत्तरदायी हूँ। मैं जानता था कि निराश प्रेमी कहाँ चलकर चुटीले साँपकी तरह अपना डंक मारेगा। मेरी साध पूरी हो गई है। मैं दण्डके लिए अपनेको आपके सामने प्रस्तुत करता हूँ।"

शशाङ्कने कहा, "उँह ! हम वीरताका सम्मान करनेवाले नरपति हैं ! हम ऐसे वीरको पृथ्वीसे उठाना नहीं चाहेंगे, जो अपनी समानता नहीं रखता। हमारा पुरस्कार हमारे सामने है। हमारा रास्ता छोड़ दो। हमारी नज़र उस पालकीपर है।" और उत्तरकी प्रतीक्षा किये बिना ही राजा शशाङ्कका अश्व उछलता हुआ पालकीके सम्मुख पहुँच गया, जहाँ पालकीके वाहक इस काण्डको देखकर सहमे हुए-से खड़े थे।

पालकीके पास पहुँचते ही शशाङ्क चिल्लाया, "पालकीका आवरण हटा दो!"

कहारोंने हड़बड़ाकर उसकी आज्ञाका पालन किया।

किन्तु यह क्या ! पालकी खाली थी ! राज्यश्रीके स्थानपर वहाँ कुछ बड़े-बड़े पत्थर रखे थे। शशाङ्कका चेहरा देखते-देखते अग्निका पुञ्ज बन गया। उसके नेत्र क्रोधके अतिरेकसे फैल गये। वह तुरन्त घोड़ा कुदाता

हुआ वापस लौटा और उसने अपने सैनिकोंको आज्ञा दी, "इस विश्वास-घातीको पकड़ लो ! हम इसे ऐसी सज़ा देंगे कि यह भी याद रखेगा।"

युवक कीर्त्तिसेनके मुँहपर एक अपूर्व तेज था। "वङ्गपति, सज़ा पानेके लिए ही मैं यहाँ तक आया हूँ। संसार ही इस तथ्यको पहचानेगा कि मैं विश्वासघाती हूँ; देशद्रोही हूँ, या कीर्त्तिसेन हूँ। देवी राज्यश्रीका ध्यान मनसे हटा दीजिये। वह महासती है, और इस समय मालव-नरेशके प्रबन्धमें अपने पतिके मृत शरीरके साथ चिताकी ज्वालाओंका आलिङ्गन कर रही होगी। उसके लिए वह आलिङ्गन आपके शरीर-स्पर्शसे कहीं अधिक सुखदायी होगा।"

"ओह !" शशाङ्क क्रोधसे दाँत किचकिचाता हुआ चिल्लाया, "इसे सामनेके पेड़से बाँध दो !" उसने अपने सैनिकोंको आज्ञा दी।

सैनिकोंने अपने सेनापतिकी आज्ञाका पालन किया।

कीर्त्तिसेनकी यही स्थिति थी; जब हर्षके अधीन उसके भाई जयकीर्त्तिके नेतृत्वमें वर्द्धनोंकी विशाल सेनाएँ कन्नौजमें मालव-नरेशका मानमर्दन करती हुई, राज्यश्रीको चितावरोहणसे रोककर कन्नौजकी विधवा महा-रानीके पदपर प्रतिष्ठित करती हुई, शशाङ्कका मस्तक नवानेके लिए बंगालके पथपर बढ़ी चली आ रही थीं। शशाङ्क कभीका वहाँसे पलायन कर चुका था। उन सेनाओंका स्वागत करनेके लिए रह गया था केवल एक निःसहाय युवक, वृक्षसे बँधा हुआ, दो दिनका भूखा-प्यासा, मैला कुचैला, शारीरिक प्रवृत्तियोंकी यातनाओंसे त्रस्त, किन्तु जिसके प्रतिशोधकी आग अब उसे नहीं जला रही थी।

हर्षका हाथी सामने इस विचित्र दृश्यको देखकर ठिठका। तत्काल सेनापति जयकीर्त्ति आगे आया और जब उसने छातीकी ओर झुका हुआ उस युवकका सिर ऊपर उठाया, तो एकबार उसकी आँखें छलछला आईं। उसने पुकारा, "कौन, कीर्त्तिसेन !"

क्षीणस्वरमें कीर्त्तिसेनने कहा, "हाँ।"

बस, स्नेहकी प्रवृत्तियोंने यहीं तक काम किया। देखते-देखते जयकीर्त्ति का स्वाभिमान अंगडाई लेकर उठ खड़ा हुआ और वह चिल्लाया, "रे नीच, तूने मेरी माँकी कोखसे क्यों जन्म लिया। क्या तेरे जैसे साँपको रहनेके लिए कोई और बाँबी नहीं मिली थी? रे देशद्रोही, क्यों तू अभी-तक पृथ्वीके ऊपर अपना भार डाले उसे दहला रहा है!"

युवकके मुँहपर क्षीण और उदासीन मुसकराहट आई। उसने उत्तरमें कहा, "इन सब प्रश्नोंका एक ही उत्तर है! मैं अभीतक अपने उस भाई की कीर्त्तिको देखनेके लिए जी रहा हूँ, जिसने उसी माँकी कोखको पवित्र किया था, जिससे मेरा जन्म हुआ था।"

"क्या तू मुझे अपना भाई कहता है?" जयकीर्त्तिने आँखें तरेरकर कहा, "तेरी ज़बान नहीं कटकर गिर पड़ती!"

जयकीर्त्तिने तत्काल अपने आदमियोंको सङ्केत किया और उन्होंने कीर्त्तिसेनको वृक्षसे खोल दिया। एक पूरी चादरमें लिपटे उसके शरीरसे ऐसा लगता था मानो प्रेतात्मा प्रेत-लोक छोड़कर दिनमें ही भूपर उतर आई हो। बड़ी कठिनाईसे उसने खड़े रहने योग्य शक्ति एकत्र की।

जयकीर्त्तिने कहा, "सुना है तूने अपने बायें हाथसे ही धराको कम्पित-कर रखा है? सुना है तूने बड़े-बड़े अधीश्वरोंके सिर इसी कलङ्कित हाथसे काट डाले हैं! ले यह खड्ग, आज भाईका सिर भी काट!" उसने खड्ग उसकी ओर फेंकी, जो आधार न पाकर कीर्त्तिसेनके क़दमोंमें जा गिरी। जयकीर्त्तिने कहा, "क्यों, खड्ग उठाते भी लज्जा आती है! उस समय लज्जा नहीं आई, जब तूने थानेश्वरको अनाथ किया था, जब तूने महा-देवीको पतिविहीन किया था, जब तूने अपने दूषित पग शत्रुके दरबारमें रखे थे? अब क्यों लज्जा करता है? उठा खड्ग, मैं भी रास्तेका हारा-थका हूँ और तू भी शायद भूखा सिंह है...उठा, नहीं तो भगवान्की सौगन्ध खाकर कहता हूँ कि तेरा सिर इस खड्गसे अलग कर दूँगा।"

कीर्त्तिसेन अब भी एक फीकी हँसी हँसकर रहा गया। उसने कहा, "भैया, तुम्हें उत्तर देकर अब मैं और अधिक दुःखी नहीं करना चाहता। अब मैं तुमसे किस लिए लड़ूँ? मेरा उद्देश्य पूरा हो गया है। मेरे स्वाभिमानके साधन समाप्त हो गये हैं, इसलिए तुम जो जीमें आये कहकर अपने ऊपरसे मेरा कलङ्क धो सकते हो। अब मुझे जीनेकी रंचमात्र भी साध नहीं रह गई है, इसलिए तुम मेरा सिर काट सकते हो। किस भाईको इतना बड़ा सौभाग्य मिल सकता है कि मरते समय उसका सिर अपने बड़े भाईके क़दमोंमें लोटता हो।"

जयकीर्त्तिपर इन बातोंका कोई असर नहीं हुआ। उसने उसी आवेशमें कहा, "रे अधम, मैं जानता हूँ कि तूने तक्षशिलामें खूब साहित्य घोटा है। तू पत्थरको पानी बना देने वाले वाक्योंकी रचना कर सकता है। अच्छी बात है, यदि तू अपने उस पापी हाथको भी प्रयोग नहीं करना चाहता, तो यह ले", और उसने अपना खड्ग उठाकर एक ही प्रहारमें कीर्त्तिसेनका सिर उसके धड़से अलग कर दिया।

कटे हुए उस सिरके मुँहपर अभी तक झीनी मुसकराहट थी। मालूम नहीं उसमें जीवनका कौन-सा दर्शन छिपा था। किन्तु सम्भवतः अपनी अन्तिम इच्छाके कारण ही वह बड़े भाईके क़दमोंमें जाकर गिरा। उसके धड़की चादर जहाँ-तहाँसे उधड़ गई, और उस समय हर्षवर्द्धनके साथ जयकीर्त्ति तथा अन्य महावीरोंने देखा कि उस सिरसे हीन धड़में दायें हाथके साथ-साथ बायाँ हाथ भी कटा हुआ था।

• प्राणोंका मूल्य

प्राण संसारमें सबसे महँगी वस्तु समझी जाती है, क्योंकि यही एक ऐसी वस्तु है, जिसे मनुष्य सब कुछ खोकर भी देना नहीं चाहता किन्तु मनुष्य मनुष्यताके प्रारम्भसे ही कुशल व्यापारी भी रहा है। उसके पास कोई ऐसी वस्तु नहीं, जो बेची न जा सके। इसलिए समय-समयपर उसने प्राणोंको भी बेचा। समय-समयपर प्राणोंका मूल्य भी भिन्न-भिन्न रहा है, और ऐसा भी समय भारतीय इतिहासमें आया है, जब भारतीयोंने यह अनमोल वस्तु वृद्धा संस्कृतिकी अर्थीपर खुले हाथोंसे बिखरा दी। यह कहानी ऐसे ही एक समयकी है।

मेवाड़पतिके महाराणा प्रतापका भाई शक्तसिंह सतरह पुत्रोंका पिता था। ये सतरहके-सतरह बेटे प्राणोंके व्यापारी थे। अपने पिताके नामपर इनके वंशका नाम शक्तावत पड़ा। जब शक्तसिंहकी मृत्यु हो गई, तो सबसे बड़े पुत्र भांजीको छोड़कर शेष सोलह पुत्र पिताके शवको श्मशान तक ले जानेके लिए मैंसरोरके क़िलेसे निकले। अन्त्येष्टि-क्रिया सम्पन्न हो जानेपर जब वे वापस लौटे, तो उन्होंने देखा कि क़िलेके फाटक बन्द हैं और फ़सील पर मोर्चाबन्दी है। मेहराबके ऊपर भांजी दोनों हाथ कूल्हों पर रखे तना हुआ खड़ा था। जब शक्तावतोंमें से एक भाई बालोने पुकार कर कहा, "भांजी, यह क्या बात है? फ़ाटक कैसे बन्द हैं?" तो भांजीने उत्तर दिया, "जब एक म्यानमें दो तलवारें नहीं रह सकतीं, तो सतरह कैसे रह सकती हैं! मैंसरोरके क़िलेमें केवल एक ही तलवार समा सकती है।"

दूसरे भाई जोधाने चिल्लाकर कहा, "निकालना था, तो लड़कर निकालते, भाइयोंको धोखा देते लज्जा नहीं आई!"

उतने ही तीव्र स्वरमें भांजीने उत्तर दिया, "वे भाई और होते हैं, जो भाइयोंसे लड़ते हैं, तुम सबमें जिसकी इच्छा हो मेरी जगह आ जाये। मैं तुम सोलहके साथ मिल जाऊँगा। मगर मैंसरोरमें एक ही भाई रहेगा। हम सब शक्तावत हैं, एक-एक भाईमें एक-एक क़िलेको सर करनेकी शक्ति है। घरसे बाहर निकलकर देखो संसार कितना बड़ा है, और उसमें इतना यश है कि सारी उमर मेहनत करके बटोरा नहीं जा सकता। तुम सब उसे मिलकर बटोरो, नहीं तो कहो, मैं तुम्हारे साथ चलता हूँ। लेकिन मैंसरोरमें केवल एक शक्तावत रहेगा।"

सोलहके-सोलह भाई एक दूसरेके मुँहकी ओर ताकने लगे। कौन कायर बनकर भांजीकी जगह जाये? बहुत देरके वाद-विवादके बाद निश्चय हुआ कि भांजी ही शायद ठीक कहता है। बालोने कहा, "अच्छा, हम यश ही बटोरेंगे, और इतना बटोरकर मरेंगे कि तुमसे जीते जी पचेगा नहीं। हमारे घोड़े और हथियार भिजवा दे।"

भांजीने हँसकर कहा, "बहुत अच्छा, तुम यश लाभ करो और मैं सुन-सुनकर मोटा होता रहूँगा। तुम्हारे घोड़े और हथियार पहलेसे ही पहाड़ीके नीचेवाले एक पेड़से बँधे हैं।"

सोलह भाइयोंने जन्मभूमिकी मिट्टी माथेसे लगाई और आँखोंमें उसके प्यारका जल लिये पीठ मोड़कर चल दिये। पहाड़ीके नीचे पहुँचने पर उन्हें वाञ्छित सामान मिल गया और उन्होंने संसारकी विस्तृत राह पर अपने घोड़े छोड़ दिये।

ईदरके राजाने इन मतवालोंको अपने यहाँ शरण दी। ईदरके सङ्कुचित क्षेत्रमें उन्होंने कुछ दिनों तक आनेवाली परीक्षाके लिए अपने बदन माँजे, हथियार पैने किये और उन्हें अपने हाथोंसे सधाया। आखिर वह समय भी आ गया, जो हर आदमीके जीवनमें एक-न-एक बार आता है। अवसर पहचाननेवालोंने उस समयको पकड़ा।

महाराणा प्रतापका पुत्र अमरसिंह मुग़लोंसे लड़ते हुए अभी तक अपने

वंशके गौरवकी रक्षा कर रहा था। भामाशाहका ख़ज़ाना अभी तक समाप्त नहीं हुआ था। जब राणा अमरसिंहको यह मालूम हुआ कि उसके सोलह चचेरे भाई ईदरमें टिके हुए हैं, तो उसने उन लोगोंके लिए साँडनी भेजी। साथमें एक पत्री भेजी : "...राजपूतोंका गौरव अभी तलवारकी नोक पर टँगा है। तलवारें नीची न करो, अभी माँ को उनकी ज़रूरत है। मेवाड़के राणाकी बाँहें तुम्हें छातीसे लगा लेनेके लिए तड़प रही हैं..."

सोलह भाइयोंने उसी समय घोड़े कस लिये। जब घोड़े सज गये, तो बालोने कहा, "भाइयो, तलवारें ऊँची और नज़रें नीची कर लो। भांजी हाथ मल-मलकर रो न दिया, तो बालो नाम नहीं...।"

वायुवेगसे सोलह भाई महाराणा अमरसिंहकी बाँहोंमें जा सिमटे। मेवाड़को एक अपूर्व शक्ति मिली—शत्रुओंके कलेजे दहल गये, चिरकालसे बिछुड़े हुए एक ही रक्तके दो अणु जैसे एक-दूसरे से आकर्षित होकर आपसमें लुढ़कते-पुढ़कते मिल गये हों।

मगर समय बीतते-न-बीतते राजपूत सैनिकोंको यह शीघ्र ही पता चल गया कि इन सोलह भाइयोंमें राजकुमारों-जैसी कोई बात ही नहीं थी। डेरे गाड़नेसे लेकर पानी खींचने तकके काममें एक-न-एक शक्तावत दिखाई पड़ता था। शायद ही कोई सैनिक बचा हो, जिसे शक्तावतके हाथका परोसा भोजन न मिला हो। शायद ही कोई घोड़ा ऐसा हो, जिसके मुँह पर किसी शक्तावतका हाथ न फिरा हो। शायद ही कोई सरदार ऐसा हो, जिसने बालोके शारीरिक बलके करतब न देखे हों। आदमी क्या था देव था—पाँच मन पक्केका वज़न दोनों हाथोंसे मेमनेकी तरह उठा लेता था।

कुछ ही दिनोंमें सोलह शक्तावतोंने राणा अमरसिंहका मन मोह लिया। अन्य भी कितने सरदारोंका मान उनकी दृष्टिमें ऊँचा था, और

उनमें चूड़ावत सरदारका रुतबा सबसे ऊँचा था। राणाकी सेनाके अग्र-दलका नेतृत्व चूड़ावत सरदारके हाथमें ही था। यह मान परम्परासे उनके वंशमें चला आता था। एक दिन अकारण ही बालोसे इन चूड़ावत सरदारकी भिड़न्त हो गई।

बात कुछ भी नहीं थी। सेनाके उपयोगके लिए लकड़ियाँ बनानेको पेड़ गिराये जा रहे थे। बड़े-बड़े आरे लगे हुए थे। अचानक कुछ मन-चले नौजवानोंमें ठहर गई कि एक मोटेताज़े पेड़को बिना आरेसे चीरे ही गिरा दिया जाये। पेड़में रस्से बाँध दिये गये और जवान उस रस्सेपर जूझ गये। काम सालुम्बराके सरदार चूड़ावतकी देख-रेखमें हो रहा था। वह शानके साथ मूँछोंकी नोकोंको मरोड़कर ऊपर करनेकी चेष्टा करते हुए यह तमाशा देख रहे थे। उसी समय उधरसे बालोका गुज़र हुआ। उसने एक नज़र पेड़पर डाली, एक उसे गिरानेके प्रयत्नमें रत जवानोंपर और एक चूड़ावत सरदार पर। उसने पास आकर चूड़ावत सरदारसे हँसते हुए कहा : "सरदार साहब, मूछोंकी नोक इस तरह मरोड़नेसे ऊँची नहीं होगी, इनपर पसीनेका लुआब लगाइये।"

सरदार चूड़ावतने आँखें तरेरकर नौजवान बालोकी तरफ़ देखा। तबतक बालो रस्सेके साथ जूझ गया। छातीमें साँसभर, उसने रस्सेको अपनी कमरके चारों तरफ़ लपेट लिया और जवानोंने पीछेकी ओर ज़ोर किया। कुछ देर तक मालूम दिया कि पेड़ इस समस्त संघर्षको व्यर्थ करके ज्यों-का-त्यों आकाशमें सिर ऊँचा उठाये खड़ा रहेगा। अनजाने ही चूड़ावत सरदारके होंठोंपर एक व्यङ्गपूर्ण मुसकान खेल गई। किन्तु उसी समय सहसा भारी आवाज़के साथ पेड़का तना चरमराया और देखते ही देखते उसका विशाल शरीर मानव-शक्तिका सम्मान करनेके लिए भूमिपर दण्डवत् लेट गया।

बालोने देरसे रोकी हुई साँस छोड़ी, जैसे अजगरने फुङ्कार मारी हो! पैर सीधे करके वह तनकर खड़ा हुआ। पुष्ट गरदनको घुमाकर उसने

चूड़ावत सरदारकी ओर मुँह किया। उसके मुँह और शरीरपर उभरे बड़े-बड़े स्वेदकणोंके कलेवर सूर्यकी किरणोंको चूमकर तड़प गये। उसके होंठों पर भी एक मुसकान हौलेसे उभरी। चूड़ावत सरदारने इस मुसकानमें व्यंग्यका अनुभव किया। उन्होंने कहा, "बालोजी, इतना ही ज़ोर रणमें दिखाओ तो तुर्क एक दिनमें भारतकी सीमाके बाहर हो जायें..."

उँगलीसे माथेका चुहचुहाता हुआ पसीना समेटकर भूमिपर गिराते हुए बालोने उत्तर दिया, "जिस दिन नेतृत्व जवानोंके हाथमें आयगा, उस दिन दुश्मन भारतसे ही नहीं, धरासे उठ जायगा।"

चूड़ावत सरदारने अपनी लम्बी और सफ़ेद मूँछोंको दाँतोंसे नोचा। जी चाहा कि तलवारसे उसका सिर धड़से अलग कर दें। उनके वंशके एकमात्र अधिकारको चुनौती देनेवाला बालो निमिषमात्रमें उनकी आँखोंके खूनमें उतर गया। यही सरदार चूड़ावत थे, जिन्होंने युद्धके भयसे पीछे क़दम हटाते हुए राणा अमरसिंहकी विलास-क्रीडाके प्रतीक, एक आदमक़द शीशेको फ़रशका पत्थर मारकर चूर-चूर कर डाला था और राणाको घिघियाते बच्चेकी तरह कमरसे उठाकर घोड़ेकी पीठपर सवार करा दिया था। जिस महावीरने मेवाड़के राणाकी अक्ल ठिकाने लगा दी थी, उसीके गौरव और अधिकारको आज एक शक्तावत ललकार रहा था!

चूड़ावत सरदारने कहा, "बालो जी, मुँहमें ज़बान है, तो इसके अर्थ ये नहीं कि दाँतोंकी पहरेदारी जाती रहे। राणाके सम्मुख तुम्हें अपनी उच्छृङ्खलताके लिए उत्तरदायी होना पड़ेगा।"

और बालो केवल हँसकर रह गया। उसकी चौड़ी छातीने शान्तिके साथ साँस लेना आरम्भ कर दिया।

दिन बीता और रात आ गई। डेरोंके बाहर सैनिकोंने आग जलाई और भोजनके लिए बाजरा पकना आरम्भ हो गया। राणा अमरसिंहने डेरेसे कुछ दूरीपर दरबार जोड़ा और सभी प्रमुख सामन्त चारों ओर

यथासम्मान आसीन हो गये। बीचोंबीच लकड़ियोंका एक बड़ा अम्बार लगाकर आग जलाई गई और जाड़ेसे सुरक्षित होकर सरदारोंने आगे युद्धकी योजनाके लिए अपने-अपने विचार रखने आरम्भ कर दिये।

मुगलोंकी सीमापर पड़नेवाले सबसे पहले क़िले ऊनतालकी दृढ़ दीवारोंको भेदनेका प्रश्न उठा। राणाने चारों ओर निगाह पसारकर कहा, "सरदार चूड़ावत दिखाई नहीं देते, क्या बात है?"

उसी समय एक शक्तावतने आकर लकड़ियोंका एक गट्ठर बीचमें जलते हुए आगके टीले पर डाल दिया। भभकती हुई आगसे शक्तावतका मुँह जैसे लाल आभासे प्रदीप्त हो उठा। राणाने श्रमके पुतले बालोको एक क्षण प्रशंसाकी दृष्टिसे निहारा और फिर बोले, "बालोजी, अब तो थक गये होगे। छोड़ दो अब कामको।"

बालोने मुखर होकर उत्तर दिया, "राणाजीने अभी शक्तावतोंकी शक्ति नहीं देखी, इसीलिए ऐसा कहते हैं। जिस छातीपर हाथी भी गुज़र जाये, तो साँस न छूटे, उसमें थकानका अनुभव कैसे हो सकता है?"

इस गर्वोक्तिपर सरदार लोग चौंके। यह तो प्रकट था कि बालोमें अपूर्व बल था, मगर हाथीमें भी कुछ वज़न होती है। राणाने हँसकर कहा, "हमारे सरदारोंमें प्रथा है कि जो ज़बानसे निकल जाये उसे पूरा करके दिखाते हैं। जो किया नहीं जा सकता उसकी डींग मारना वीरोंके लिए शोभाजनक नहीं होता, बालोजी।"

इतनी-सी बातपर बालो तनकर खड़ा हो गया। "मैं इसी समय, सब सामन्तोंके सामने जो मैंने कहा है वह पूरा करके दिखाऊँगा। हाथी मँगाया जाय।"

बालोकी गर्वोक्ति सुनकर एक बार तो सभी सनाका-सा खा गये। पलक मारते वह सैनिक-राजसभा खेलका अखाड़ा बन गई। राणा अमर-सिंहने उसी समय अपना खास हाथी मँगवाया। यह हाथी जहाँ बहुत

अधिक बलवान् था वहाँ अत्यन्त आज्ञाकारी भी था। राणाका विचार था कि यदि अदूरदर्शितासे बालो हाथीके पैरोंतले कुचलने भी लगा, तो वह उसी क्षण हाथीको आज्ञा देकर अपना पग पीछे हटानेके लिए मज़बूर कर सकते थे।

दूर-दूर तक पड़ी राजपूत छावनीमें यह समाचार पहुँच गया। दो घड़ीके भीतर-भीतर सारा जङ्गल इस अद्भुत खेलके दर्शकोंसे भर गया। बालो प्रसन्न था! उसने ईदरमें रहकर समय व्यर्थ नहीं खोया था। अन्तमें जब खेलकी तैयारी पूरी हो गई तो राणाने फिर निगाहें पसारकर देखा। चूड़ावत सरदार कहीं भी दिखाई नहीं पड़ रहे थे। उन्होंने उसी समय अपने अङ्गरक्षकको उन्हें डेरेसे बुला लानेके लिए भेजा। कहलवाया कि ऐसा अद्भुत खेल उन्होंने सारे जीवन नहीं देखा होगा।

कुछ देरमें सन्देशवाहक चूड़ावत सरदारका उत्तर लाया : "राणाजीका निमन्त्रण सिर आँखोंपर, मगर चूड़ावत वंशके वीर कभी इस तरहके बचकाना खेलोंमें रस नहीं लेते। उनका मनोरञ्जन रणस्थलीके अतिरिक्त और कहीं नहीं होता..."

राणा अमरसिंहके मनको आघात लगा। कोई किसीकी गर्दन पकड़कर सही रास्तेपर भले ही लगा दे, मगर जिसकी गर्दन पकड़ी जाती है वह एकबार उसे हाथोंसे सहलाता ज़रूर है, एकबार अपने उद्दण्ड शुभचिन्तककी ओर रोषभरी दृष्टिसे देखता ज़रूर है। चूड़ावत सरदारकी पहली उद्दण्डताका कोई बीज अभीतक राणा अमरसिंहके मनमें कहीं छितरा हुआ था। यह दूसरी बार उसमें खाद पड़ी, और वह खूनका घूँट पीकर रह गये। जो व्यक्ति इस वीरतापूर्ण अद्भुत प्रदर्शनमें रस ले रहे थे, चूड़ावत सरदारने उन सभीको बच्चोंकी श्रेणीमें डाल दिया था।

जब तक राणा इन विचारोंमें डूबते-उतराते रहे, तब तक खेलका आरम्भ भी हो गया और वह हाथीके द्वारा पहुँच सकनेवाली हानिके प्रति सचेत नहीं रह सके। सहसा द्वेष-निद्रासे चौंककर उन्होंने देखा कि

बीच मैदानमें, छाती पर लकड़ीके तख्ते रखे, बालो साँस फुलाये पड़ा है और सधा हुआ हाथी एक क्षणके लिए अपने चारों पैर तख्तेपर रख-कर उतर चुका है। हाथीके अलग हटते ही शक्तावत भाई बालोकी ओर दौड़े। साथ ही दौड़े सब सरदार, अपने-अपने हृदयमें आशङ्का छिपाये—शायद इस वीरकी कुचली हुई लाश ही देखनेको मिले!

मगर बालो धौंकनीकी तरह साँस छोड़ता हुआ उछलकर खड़ा हो गया। शक्तावतोंने भाईको कन्धोंपर उठा लिया और सामन्त-सरदारोंने उसकी पीठ ठोंकी। जब शक्तावत बालोको कन्धोंपर उठाये राणा अमरसिंहके सामने लाये तो वह नीचे कूद पड़ा और राणाने उसे अपने वक्षसे लगा लिया। फिर उल्लासपूर्ण स्वरमें बोले, "तुमने अपनी मेहनत और बलसे यहाँ उपस्थित सभी सरदारोंका मन मोह लिया है। हम नहीं समझ पा रहे हैं कि हम तुम्हें पुरस्कारमें क्या दें—फिर भी, हमारी सेना-ओंके अग्रदलका नेतृत्व अबसे शक्तावतोंके हाथमें रहेगा।"

राणाके इस असामयिक पुरस्कार-दानको सभी उपस्थित जनोंने सुना और दातोंमें उँगली दबा ली। जिस अधिकारपर आज तक चूड़ावतके वंशका आधिपत्य था वह अकारण ही निमिषमात्रमें उससे छिन गया था। इस अधिकार-हननका रौद्र रूप भविष्यमें क्या होगा इसकी कल्पना न कर पानेके कारण सरदारोंके हृदय आशङ्कासे काँप गये। क्या चूड़ावत-सरदार इस अपमानको इतने ही सहज भावसे पी जायेंगे?

मगर शक्तावतोंके डेरोंमें घीके चिराग़ जले। जो सम्मान उन्हें मिला था वह अकल्पनीय था—फिर चाहे वह किसीके भी अधिकार-क्षेत्रसे नोचकर दिया गया हो। आज वे उस दिनको सराह रहे थे, जिस दिन भांजीने धोखा करके उन्हें मैंसरोरके बन्द फाटक दिखाये थे। वे यश खोजनेके लिए निकले थे और उन्हें यश मिला था।

इस समाचारको चूड़ावत-सरदारके पास वह व्यक्ति लेकर गया, जो उसे सबसे अधिक उत्तेजक ढंगसे सुना सकता था। वह था चूड़ावत

सरदारका भाट। उसने गीतोंमें चूड़ावत वंशके उन कृत्योंका उद्बोधन किया, जिन्हें सुनकर चूड़ावतोंकी ही नहीं, साधारण राजपूतोंकी बाहुएँ भी फड़क उठती थीं। गौने आई पत्नीने एक समय अपने हाथों अपना सिर काटकर मोहसे ग्रस्त पतिके पास भिजवाया था : "जाओ, अब निश्शङ्क होकर लड़ो। तुम्हारी मोह-मूर्ति तुम्हारे पास रहेगी।" और चूड़ावतने रानीका सिर अपने गलेमें बाँध लिया था। उसके हाथोंमें रणचण्डी उतर आई थी और आँखोंमें साक्षात् अग्नि फूट निकली थी...कहाँ गये वे समय? कहाँ हैं वे वीर? कहाँ हैं वे...।

तड़पकर चूड़ावत-सरदार बाहर निकले। "बन्द करो यह गाना! क्या तुम किसीको शान्तिसे बैठने नहीं दोगे! क्यों पागल आदमीकी तरह चिल्ला रहे हो?"

भाटने सिर झुका दिया। "चुप ही रहूँ, राणावतजी, अब आखिरी बार इस गीतको गा रहा हूँ। फिर नहीं गाऊँगा। कलसे केसरिया ध्वज शक्तावतोंके हाथमें जा ही रहा है।"

"क्या बकते हो!" चूड़ावत-सरदार गरजे। "जानते नहीं किससे बातें कर रहे हो!"

"जानता हूँ, राणावतजी..." और उसने बीते हुए काण्डको अक्षर-अक्षर जोड़कर इस तरह कहना आरम्भ किया, इस तरह दुहराया कि यदि स्वयं चूड़ावत सरदार भी वहाँ उपस्थित होते, तो इस प्रकार नहीं देख सकते थे। भाटके बोल ज्यों-ज्यों उसके कानोंमें पड़ते गये त्यों-त्यों मानो ढला हुआ सीसा उनमें ढलता रहा। झपटकर उन्होंने म्यानसे तलवार खींची और राणा अमरसिंहके डेरेकी ओर चल पड़े, जहाँ शक्तावतों सहित सामन्तगण फिरसे ऊनतालके क़िलेको सर करने की योजना बना रहे थे।

समस्त सरदारोंकी निगाह एक साथ ही द्वारकी ओर उठ गई, और सबके नेत्र आश्चर्यसे फटे रह गये। चूड़ावत सरदार हाथमें नंगी तलवार

लिये उपस्थित जनोंपर नेत्रोंसे आग बरसा रहे थे। सरदारोंको सम्बोधित होते देखकर उन्होंने गरजकर कहा, "कौन माईका लाल है, जो चूड़ावतोंके हाथसे केसरिया पताका लेगा—शेरनीका दूध पिया हो, तो सामने आये!"

बालो उछलकर खड़ा हो गया। जोधाने तलवार फेंकी और वह बालोके हाथमें जादूके मन्त्रकी तरह आ गई। क्षणमात्रमें सभी सामन्त उठ खड़े हुए। बाहर प्रज्वलित अग्निका प्रकाश डेरेकी विशाल दीवारोंपर छायाके साथ आँखमिचौनी खेलने लगा।

निकट ही था कि बिजलियाँ कौंध जातीं कि राणा अमरसिंह बीचमें आ गये। ललकारकर उन्होंने चूड़ावत-सरदारसे कहा, "राणावतजी, तलवार ही लेकर आये हो, तो उड़ा दो हमारा सिर। चूड़ावतोंके हाथसे यही काम होना बाक़ी रह गया है!"

चूड़ावत-सरदारने अपमानको पीकर कहा, "आप ही इस काण्डके उत्तरदायी हैं—आप बीचमेंसे हट जाइये, राणाजी!"

"ठीक है," राणाने कहा, "हम उत्तरदायी हैं, तो हम ही उत्तर देंगे। नेतृत्व परम्पराकी बपौती नहीं है, नवीनताका अनुगामी है। बाप्पा-रावलके गौरवको बने रहना है, तो नेतृत्व वृद्ध हाथोंसे जवान हाथोंमें देना ही होगा। तलवारको म्यानमें करके जवाब दो, नहीं तो हमारी नज़रोंसे दूर हो जाओ। हमें उद्दण्ड सरदारोंको सहनेकी आदत नहीं है।"

चूड़ावत-सरदारको अब अपनी स्थितिका भान हुआ। उन्होंने राणा और सरदारोंके दृढ़ मुखोंकी ओर देखा और शान्तिके साथ तलवारको कमरपेटीमें खोंस लिया। फिर बोले, "आयु ही वीरताका प्रमाण नहीं होती, राणाजी, मेरे वंशका परम्परागत अधिकार मुझसे छीननेसे पहले आपको नवीन शक्तिकी श्रेष्ठता प्रमाणित करनी थी। हाथीको छातीपरसे गुज़ार देना एक बात है और तुर्कोंकी अक्षौहिणी सेनाको गुज़ारना

बिलकुल दूसरी। बच्चोंके खेल वीरताके मापदण्ड कभी नहीं बन सकते।"

इस मारपीटके श्रीगणेशसे एक-न-एक दिन अन्य सरदारोंको भी अपने परम्परागत अधिकार छिननेका भय हुआ। इसलिए सभी एक स्वरमें बोल उठे, "राणावतजी ठीक कहते हैं।"

शक्तावतोंने आशङ्कासे राणा अमरसिंहके चेहरेको देखा। देखें अब राणा अपना दिया हुआ पुरस्कार किस प्रकार वापस लेते हैं! राणाने कुछ क्षण विचार करके कहा, "अच्छी बात है, परीक्षा ही प्रमाण होगी। चूड़ावतों और शक्तावतोंमेंसे जो सबसे पहले ऊनतालके क़िलेमें प्रवेश करेगा वही वंशानुक्रमसे केसरिया ध्यजका रक्षक रहेगा।"

सरदारोंने महाराणा प्रताप और महाराणा अमरसिंहके नामका जयघोष किया। जब यह कलरव धीमा पड़ा, तो सबने देखा कि वहाँ डेरेमें न चूड़ावत सरदार थे और न शक्तावतोंमेंसे कोई था। वे जल्दीसे-जल्दी अपनी-अपनी सेनाओं सहित ऊनतालके क़िले तक पहुँचनेके लिए बिदा हो चुके थे। रात्रिके समय ही राजपूती शिविरोंमें रणभेरी बज उठी। चारों दिशाओंमें वनप्रदेश जैसे सिंहकी ललकारोंसे गूँज उठा।

शक्तावतोंने अपने हाथियों सहित कभीका कूच बोल दिया था। शत्रुको गुमान भी नहीं हो सकता था कि सीमापर हमला करनेमें दुश्मन इतनी अकल्पनीय शीघ्रता करेगा। बालो और जोधाकी योजना थी कि ऊनतालके रक्षकोंको बेख़बरीमें धर दबोचा जायेगा, और यदि वे समय रहते खबरदार हो गये, तो मुख्य द्वारपर हाथी हूल दिये जायेंगे। इस महाप्रयाणके पथपर कौन गिरेगा, कौन बढ़ेगा, इसकी चिन्ता न किसीको थी, न होने वाली थी।

चूड़ावतोंने अपने घोड़ोंपर भरोसा किया। ऊनतालको पीछेकी ओरसे टपना ही उनका उद्देश्य था। अपनी घुड़सवार सेनाके साथ शक्तावतोंसे पहले ही पहुँचकर वे शत्रुको चकित कर सकते थे। साथमें पाँच सौ भील

धनुर्धर थे, जो ऊनतालकी फ़सीलोंपर उभरने वाले एक भी सिरको बिना तीरका निशाना बनाये न छोड़नेकी क़सम खाकर चले थे।

भारतीय इतिहासमें प्राणोंका शुल्क देकर खेली जानेवाली यह प्रतियोगिता अद्वितीय थी, अपूर्व थी।

किन्तु दोनों ही पक्षोंके अनुमान ग़लत निकले। शत्रु उतना अचेत नहीं था, जितना सोचा गया था। प्रातःकालके उठते हुए बालरविकी किरणोंमें ही दूरसे चमकती हुई धूलको बुर्जोंपर खड़े हुए सन्तरियोंने देख लिया। तत्काल भेरी बज उठी और क्षणभरके भीतर-भीतर मुग़ल फ़सीलोंपर आ गये। उन्होंने धोखा खाया, तो सिर्फ़ एक बातमें, उन्हें यह स्वप्नमें भी गुमान नहीं था कि आक्रमण एक साथ दो तरफ़से होगा, और आक्रमण-कारी क़िला सर करनेके लिए नहीं आये हैं, बल्कि बाज़ी सर करनेके लिए आये हैं—और इसमें अक्लको दख़ल नहीं होगा।

राजपूतवाहिनीके निकट आते ही क़िलेपर मार पड़नी आरम्भ हो गई। चूड़ावतोंने दीवारकी रेखाके समानान्तर भीलोंकी एक दुहरी पङ्क्ति बनाई और तीरोंकी छाया तले चूड़ावतोंके अश्व लम्बी-लम्बी रस्सीकी सीढ़ियोंको लिये हुए तेज़ीके साथ पहाड़ीपर चढ़ने लगे। क़िलेकी बुरजियोंसे बारूदी तोपें दगनी शुरू हुईं। पत्थरोंके छोटे-बड़े टुकड़ोंके साथ धूल और गुब्बार, और उसमें राजपूत सैनिकोंके कटे-फटे अङ्ग आकाशमें उछलने लगे। मगर क़िलेकी दीवार तक पहुँचना टेढ़ी खीर थी। मृत्युके मुँहमें निर्भय होकर प्रवेश करनेवाले सैनिकोंको उसके विकराल दाँतोंसे बचानेके लिए न वहाँ असंख्य हाथी थे, न पहियोंदार खड़े तख्ते थे। हर राजपूत शत्रुके पैने हथियारोंके सम्मुख छाती ताने आगे बढ़ रहा था।

क़िलेकी दूसरी ओर शक्तावतोंने हाथियोंकी सहायतासे ज़ोर बाँध लिया था। लोहेकी मोटी जालीके अभेद्य कवच धारण किये शक्तावत अपनी सारी सेनामें हर स्थानपर मौजूद दिखाई पड़ते थे, बालो और जोधा मुख्य

फाटकको हाथियोंके मस्तकोंकी चोटोंसे तोड़ देनेका उपक्रम कर रहे थे। दूसरी ओरसे ज्यों-ज्यों उन्हें चूड़ावतोंका रणघोष सुनाई पड़ जाता था, त्यों-त्यों उनके शरीरोंमें मानो साक्षात् बिजली भर जाती थी। तोपोंकी गरज इधर भी रह-रह कर सुनाई पड़ जाती थी। मगर एक-एक करके शक्तावतोंने शत्रुके तोपचियोंको ही बेकाम कर दिया था। उनके निशाने अचूक थे।

दोपहर तक इसी प्रकार युद्ध चलता रहा। इस बीच चूड़ावत खाई पार करके क़िलेकी दीवार तक पहुँच चुके थे और उनकी रस्सियोंकी सीढ़ियाँ अनगिनत संख्यामें दीवारके कंगूरोंमें फँस गई थीं। सैकड़ों बाँसकी बनी सीढ़ियाँ दीवारके साथ लग चुकी थीं और उनपर राजपूत, ऊपरसे बरसते हुए पत्थरों और शस्त्रोंसे आहत होकर गिरते-पड़ते ऊपरकी ओर चढ़नेका प्रयत्न कर रहे थे। इधर बालो और जोधाने लोहेकी मोटी जालीकी झूल पहनाकर, माथेपर भारी लोहेका तख्ता लगाकर, तीरोंकी छायामें पहला हाथी मुख्य द्वारकी ओर हूल दिया था।

हाथी द्वारको लक्ष्य बनाकर तेज़ीके साथ लपका। किन्तु आँखोंपर लोहेका तख्ता बँधनेसे पहले ही सम्भवतः हाथीको यह भान हो गया था कि जिस द्वारसे वह टक्कर लेने जा रहा है, उनमें भारी, मोटी और पैनी कीलोंके छत्ते-के-छत्ते लगे हुए हैं। यदि किसी कारण उन पैनी कीलोंके कलेवर उसके माथेमें घुस गये, तो स्वयं ब्रह्मा भी उसके प्राणोंकी रक्षा नहीं कर सकता। जानवरकी भावना कौन समझे? द्वार तक तो हाथी तेज़ीके साथ झपटता चला गया और शत्रुके शस्त्र उसके कवचसे आ-आकर टकराते रहे। मगर द्वारके पास पहुँचते ही सहसा वह ठिठका, और महावतके लाख अङ्कुश चलानेपर भी वह लौटकर अपने ही लोगोंको कुचलता हुआ भाग खड़ा हुआ।

समय नहीं था। दूसरी ओरसे चूड़ावतोंका रणघोष तीव्र-से-तीव्रतर होता जा रहा था। जोधा दूसरे हाथी पर स्वयं सवार हुआ। अङ्कुश हाथ

में लिया और हाथीके मस्तकमें ज़ोरसे चुभो दिया। उन्मत्त हाथी चिंघाड़कर आगेकी ओर भागा। जब तक वह ठिठके, जोधाने एक अङ्कुश और मारा और हाथीने तड़पकर द्वारकी कीलोंमें मस्तक देकर सारे शरीरका वेग तौल दिया। द्वारकी चूलें ज़ोरके साथ हिलकर चरमराईं और ढेर-सा पत्थर उनमें भड़कर नीचे गिर पड़ा। किन्तु मज़बूत कीलोंने हाथीके मस्तकपर लगे भारी लोहेको तोड़ दिया था और कीलें हाथीके मस्तकमें घुस गईं थीं। हाथी जोरसे चिंघाड़कर बीस-पच्चीस क़दम पीछे हटा, सूँड़ ऊपर उठाकर मुँह खोला, फिर एक गगनभेदी चिंघाड़ मारी और वहीं भूमिपर पहाड़की तरह पसर गया।

जोधा दूर जाकर पड़ा। साथ ही फिर चूड़ावतोंका रणघोष सुनाई पड़ा और बालोने देखा कि तीसरा हाथी क़दम पीछे हटा रहा है। वह ज़ोरके साथ चिल्लाया : "या तो अब, नहीं तो कभी नहीं...।" महावतने हाथीको पुचकारा, बहलाया, अङ्कुश चलाया, मगर हाथीको शायद अपने साथीकी चीत्कारोंका कारण मालूम हो चुका था। वह आधी दूर जाकर उलटे पैरों वापस लौट गया। बालोने भेरी बजाई।

कुछ देरमें सोलह-के-सोलह शक्तावत एक स्थानपर एकत्र हो गये। सामने कायर हाथी खड़ा था और बालोका मुख सन्ध्याके सूर्यकी भाँति क्रोधसे लाल हो रहा था। उसकी चौड़ी छाती रह-रहकर उठती बैठती थी और उसका जी चाह रहा था कि हाथीको कच्चा चबा जाये। सहसा एक विचार उसके मस्तिष्कमें कौंधा और हाँफते हुए जोधासे उसने कहा, "हाथी कीलोंके भयसे वापस लौट आते हैं।"

"हाँ", जोधाने कहा। "मस्तकके सामने लगा लोहेका तख्ता उसकी रक्षा कर पायेगा इसमें हाथीको सन्देह रहता है। काश कि इस कम्बख्त जानवरमें इतनी अक्ल न होती...।"

"अच्छी बात है," बालोने होंठ चबाते हुए कहा, "जैसा मैं कहता हूँ वैसा करो।"

"आप सरदार हैं, जो कहेंगे वही किया जायेगा," जोधाने कहा ।

बालोने सीधी आज्ञा दी, "मेरी पीठ सामने करके हाथीके मस्तकके साथ मेरे शरीरको बाँध दो । पीठ पर लोहेका तख्ता बाँधो और हाथीको हूल दो..."

यह बात सुनकर शक्तावत भौंचक्के रह गये । क्या यह संभव हो सकता था ? क्या यह सम्भव है ? जोधाने कहा, "यह आप क्या कहते हैं ! द्वारके और हाथीके मस्तकके बीचमें आप पिस जायेंगे । अगर तख्ता टूट गया, तो कीलें हाथीके मस्तकको छेदनेसे पहले आपके बदनको पार करेंगी..."

"यही तो मैं चाहता हूँ । यही हाथी चाहता है कि उसके मस्तकपर आनेवाले संकटको कोई जीवित मानव-शरीर अपने ऊपर ओट ले...। देर न करो । हमें चूड़ावतोंसे पहले क़िलेके भीतर पहुँचना है—ज़िन्दा या मुरदा, हममेंसे किसी-न-किसीका शरीर चूड़ावत सरदारसे पहले ऊनतालके भीतर होना चाहिए । जल्दी करो, समय हाथसे जाता है । मैंने हाथीको अपनी छातीपरसे गुज़ारा है, उसके ज़ोरसे मैं मर नहीं जाऊँगा ।"

जोधाका सिर चकराया । बाकी भाई एक क्षणके लिए किंकर्त्तव्य-विमूढ़से खड़े रहे । जब बालोकी आवाज़ने दहाड़कर कहा, "जल्दी करो, मूर्खो, समय जा रहा है !" तो वे सहसा मशीनके पुरज़ोंकी भाँति काम करने लगे ।

बालोके शरीरको औंधा करके हाथीके मस्तकके साथ और बालोकी पीठपर लोहेकी बहुत मोटी चादर बाँध दी गई । हाथीको अपने मस्तकपर जीवित मनुष्यके शरीरका स्पर्श हुआ और उसे सन्तोष हो गया कि कीलोंके तीखे संस्पर्शको अनुभव करनेवाला उससे पहले उसका मालिक है । इस बार एक ही अङ्कुश पर्याप्त हुआ और हाथी ऊनतालके मुख्य फाटककी ओर वेगके साथ दौड़ा, जैसे जीवित महाकाय पर्वत उड़ा जा रहा हो ।

ऊपरसे सैकड़ों शस्त्र और पत्थर बरस पड़े और हाथीके शरीरके

साथ फूलकी तरह लगकर पृथ्वी चूमने लगे। द्वारके निकट पहुँचते ही महावतने एक ज़ोरका अङ्कुश चलाया, हाथीने पागल होकर मस्तकका अग्रभाग द्वारकी कीलोंपर पूरी ताक़तके साथ दे मारा। बालोकी रुकी हुई साँस जैसे एक बार छूट जानेकी हुई, मगर रह गई। द्वारकी चूलें भी उसी अनुपातसे मानो उखड़ते रह गईं।

महावतने एक अङ्कुश और किया। उसी समय ऊपरसे एक भारी पत्थर आया और महावतकी पीठपर धमाकेके साथ गिरा। पकड़ छूट गई और वह धराशायी हो गया। हाथी वेगसे पीछे हटा और महावतको अपने पैरोंतले कुचलता हुआ फिर दूनी शक्तिसे द्वारके साथ जा टकराया... फिर तीसरी बार, फिर चौथी बार...और पाँचवी बार टक्कर मारते ही लोहेकी मोटी चादर दुहरी हो गई। एक दबी हुई चीख़ हाथीके मस्तकके ऊपरसे सुनाई पड़ी। किन्तु शोक! हाथीको लौटा लेनेवाला महावत वहाँ मौजूद था—बालोकी साँस छूट गई थी...हाथीने किसी ओर ध्यान न देकर एक बार द्वारपर उसी वेगके साथ और प्रहार किया, और भारी फाटक अरराकर पीछेकी ओर ढह पड़ा।

शक्तावत भाई प्रसन्नता और आशङ्काके सम्मिलित वेगसे अपनी सेनाओंको लिये-दिये हाथीके पीछे-पीछे क़िलेके भीतर घुस पड़े। चूडावतों का भारी रणघोष अब भी सुनाई पड़ रहा था—क़िलेके भीतरसे या बाहरसे यह कोई भी निश्चय न कर सका। उन्होंने आगे जाकर हाथीको रोका और उसे बैठाया। फिर लोहेकी चादरकी हालतको देखकर सहसा सभीका कलेजा मुँहको आ गया। चादर फट चुकी थी और गरम-गरम मानव-रक्त उसकी फटी हुई दरारोंमेंसे निकलकर, पूरी चादरको भिगोता हुआ हाथीकी सूँड़पर बह रहा था।

भाइयोंने मिलकर बालोके क्षतविक्षत शरीरको हाथीके मस्तकसे अलग किया। वह अचेत था। किन्तु साँस न जाने कैसे अभी धीमी-धीमी चल रही थी।

आस-पासके सैनिकोंने राणा अमरसिंहके आते-न-आते क़िलेको अपने अधिकारमें कर लिया। मगर आधा किला शक्तावतोंके अधिकारमें आया और आधा चूड़ावतोंके। चूड़ावत-सरदारका भी प्राणान्त हो चुका था, और उनका शव भी क़िलेके भीतर उस समय पाया गया, जब शक्तावत क़िलेको अधिकारमें ले रहे थे। बादमें चूड़ावत सैनिकोंने आकर समान रूपसे क़िलेको अधिकार में लिया।

चूड़ावत-सरदारके शव और बालोके अचेत शरीरको देखकर राणा अमरसिंहकी आँखोंसे रोकते-रोकते भी पानी बह निकला। वह एक हाथ बालोकी रक्तरंजित पीठपर और एक हाथ चूड़ावत-सरदारकी छातीपर रखते हुए भूमिपर गिर पड़े।

कुछ देर बाद उन्हें हटनेके लिए कहकर राजवैद्यने बालोकी नाड़ी देखी, और उठकर बोला, "थोड़ी देर बाद नाड़ी छूट जायेगी। मृत्युसे पहले एक बार चेतन किया जा सकता है—कहिए तो..."

"हाँ, हाँ, करो, करो," राणा अमरसिंहने कहा। "मरने से पहले उसे यह तो पता चल जाये कि उसके प्राणोंका मूल्य पूरा-पूरा उसे मिल गया है, और आजसे शक्तावतोंका यह अधिकार होगा.... ."

"ठहरिये, राणाजी," एक चूड़ावतने आगे बढ़कर राणाको आगे बोलनेसे रोका। "मेरा दावा है कि चूड़ावतोंने पहले क़िलेके भीतर प्रवेश किया।"

राणाके नेत्रोंके डोरे खिंच गये। वह कड़े शब्दोंमें बोले, "प्रमाण?"

"यह रहा प्रमाण," चूड़ावतने अपने पीछेसे कुछ साथियोंको आगे आनेके लिए जगह दी। उन लोगोंके हाथमें एक चूड़ावतका शरीर था। राणाके सम्मुख पहुँचकर उन्होंने उस व्यक्तिके कानोंमें झुककर कहा, "राणाजीके सामने हो। कह दो जो कहना हो।"

उस व्यक्तिने धीमेसे आँखें खोलीं और कहा, "राणाजी, अधिक

नहीं बोल सकता, क्षमा करें...चूड़ावत-सरदार जब फ़सील पर पहुँचे, तो उसी समय...शत्रुके तीरसे उनका स्वर्गवास हो गया ! वह फ़सीलके ऊपर ही गिर पड़े। उसी समय पीछेसे मैं पहुँचा। सामने ही क़िलेका चरमराता हुआ फाटक दिखाई पड़ रहा था। मैंने चूड़ावत-सरदारके मृत शरीरको हाथोंमें उठाकर क़िलेके भीतर फेंक दिया, और प्रमाणके लिए सामने ही टूट कर गिरते हुए फाटकमें एक तीर मारा। तीर लगनेके साथ ही साथ फाटक...पीछेकी ओर गिर पड़ा और...और मेरा तीर आपको उसके नीचे मिलेगा। पहले मेरा तीर फाटकके नीचे दबा, उसके बाद शक्तावत क़िलेमें घुसे...यही मेरा प्रमाण..." और उस वीर सैनिकने अपनी बात शेष करके, तीन बार हिचकियाँ लेकर दम तोड़ दिया।

राणाने एक घूँट-सा निगला। एक बार उनकी निगाहें फिर बालो और चूड़ावतके शरीरोंपर पड़ीं और फिर उन्होंने दोनों हथेलियोंसे उन आँखोंको ढक लिया। धीमे शब्दोंमें उनके मुँहसे निकला, "मेरे अधिकारमें कुछ नहीं है। मैं मेवाड़का राणा नहीं हूँ...ओह ! इस बाज़ीमें मैंने अपने दोनों हाथ कटवा दिये हैं...इस अपंग राणाका केसरिया ध्वज निश्चय ही चूड़ावत लेकर चलेंगे, किन्तु...कोई मुझे बताओ कि मैं इस हारे हुए विजेताको क्या दूँ !"

सभी उपस्थित जनोंके मुख शोक और परितापसे झुक गये। राजवैद्य अपनी परिचर्यामें लगा रहा। कुछ देर बाद बालोके नेत्र खुले। कुछ देर स्थिर रहकर उसकी दृष्टि चारों ओर उपस्थित चेहरोंको पहचानने लगी। राणाको देखकर उसकी दृष्टि जोधापर गई और उसके होंठ कुछ फड़फड़ाये। जोधाने कठिनाईसे, उबलकर आते हुए, कलेजेको रोककर कहा, "हाँ, हाँ, हमारी जीतका फल हमें मिल गया...।"

बालोके मुखपर एक क्षीण-सी मुसकराहट आई और उसकी आँखें सदाके लिए बन्द हो गईं।

• बन्नी

दिल्लीके बादशाहको दक्षिणमें फँसा हुआ देखकर गुजरातके सुलतान फ़ीरोज़शाहने राजपूतानेपर चढ़ाई कर दी। नागौरके राजा मानसिंहके बेटे दिल्लीके बादशाहके साथ दक्षिणमें गये हुए थे, इसलिए उसकी सैनिक शक्ति बहुत कम रह गई थी। गुजरातकी इतनी बड़ी सेनाका सामना करनेकी ताब न लाकर मानसिंहने नागौर ख़ाली कर दिया। रनिवासकी वृद्धाओं, राजरानियों और अनुपम सुन्दरी राजकुमारी पन्नाको उसने सीमा प्रदेशके एक छोटेसे पहाड़ी क़िलेमें भेज दिया। फिर अपने घरानेके मूल्यवान जवाहरातों और अपने राज्यके हर खड्गधारी सैनिकको लेकर वह भी उसी पहाड़ी क़िलेमें जा छिपा।

नागौरपर अधिकार करनेके बाद फ़ीरोज़शाहने नागौरके नरपतिको भी अपने अधिकारमें करना आवश्यक समझा, और उससे भी अधिक आवश्यक समझा उस अनुपम सुन्दरीपर अधिकार करना, जिसके लिए उसने राजपूतानेकी रेत फाँकी थी। उसने उसी पहाड़ी क़िलेकी ओर कूच बोल दिया, जहाँ अपने परिजनोंसहित उसको स्वप्न-सुन्दरीने आश्रय लिया था।

मानसिंहने उस छोटेसे क़िलेको जहाँ-तहाँसे युद्धकी साजसज्जासे सज्जित करके उस सेहीका रूप दे दिया, जो भीड़ आ पड़नेपर तनकर अपने काँटे खड़े कर लेती है। मगर जिस प्रकार दिनके बाद निशाका आगमन निश्चित होता है, उसी प्रकार इतने दिनों ऐश्वर्यका सुख भोग लेनेके बाद मान-सिंहको अपना पराभव निश्चित दिखाई दे रहा था। हार और जीतकी चिन्ता उसे नहीं थी, चिन्ता थी उन परिजनोंकी, जो उसके भाग्यके साथ

बँधे हुए थे। सबसे अधिक चिन्ता थी राजकुमारी पन्नाकी, जिसने सूरज-मुखीके फूलकी तरह सदा जीवनका प्रकाशमान पक्ष ही देखा था।

इस प्रकाशमान पक्षका चलबिन्दु था एक पन्द्रह सालका लड़का बन्नी। बन्नी एक ऐसे राजपूत सरदारका पुत्र था, जिसने मानसिंहके अधीन, शत्रुओंसे लड़ते वीरगति पाई थी। इसी पहाड़ी क़िलेकी रक्षा करते-करते उस सरदारके घरकी स्त्रियोंने जौहर किया था और जब आक्रमणकारी क़िलेमें घुसा था, तो उसे वहाँ बच्चे और बूढ़े व्यक्तियोंके अतिरिक्त यौवनके नाम एक ऐसा वीरान मिला था जिसके सामने जंगल भी रोता है। वह दृश्य इतना भयानक था कि विजेताको भी क़िलेके भीतर घुसनेका साहस नहीं हो सका था। कालान्तरमें चलकर यह क़िला किस प्रकार वापस मानसिंहको मिला, यह एक बड़ी कहानी है। बालक बन्नी इतना अधिक सुन्दर था कि एक बार अपने परिवारमें उस भोली-भाली मूर्तिको दिखाने लाकर फिर मानसिंह उसे अपने परिवारसे अलग करके धायको सौंपनेमें असमर्थ रहा।

इस तरह बन्नी और पन्ना एक साथ बड़े हुए थे। दो-चार दिनकी छोट-बड़ाई छोड़कर दोनोंकी एक ही आयु थी। बीते हुए पन्द्रह सालके अरसेमें बन्नीके रूपमें एक ऐसे व्यक्तित्वका विकास हुआ था, जो मान-वोचित सौन्दर्यमें स्त्रियोंको लज्जित करता था, हँसनेमें खिला हुआ फूल था, चपलतामें गिलहरीको मात करता था। अपना समस्त कोश लेकर उसमें स्वयं जीवन प्रस्फुटित हो रहा था।

रनिवास और राजसभाके बीच एक लम्बी और घूमघुमौवा गैलरी थी। उसी गैलरीसे बाहरकी राजसभाका रनिवाससे सम्बन्ध था। सुलतानकी सेना क़िलेके बाहर क्या-क्या कर रही है और उसके विरोधमें मानसिंहकी क्या प्रतिक्रिया है यह जाननेके लिए रनिवास बहुत अधिक उत्सुक था। बन्नी तीरकी तरह उस गैलरीमें आता था और राहमें खड़ी अनेक राज-रानियोंके द्वारा टोका जाता था :

"अब सरदारोंने क्या निश्चय किया है ?"

"क़िलेकी सेना हँसीखेल नहीं है," बन्नीका उत्तर होता था। "नाकों चने चबवा देंगे...समझ क्या रखा है !"

और इसके बाद बन्नी हवाकी तरह ग़ायब हो जाता था। किसी भी सुन्दर स्त्रीको अपनी सुन्दरतासे लज्जित कर देनेवाला पन्द्रह वर्षका वह विद्युत्की भाँति चपल लड़का अब यहाँ होता था, तो अब वहाँ। उसकी चपलताका अन्त केवल एक कक्ष होता था : राजकुमारी पन्नाका कक्ष।

रात हो गई और राजमहलमें क़िलेसे छूटनेवाली तोपोंकी आवाज़ आनी आरम्भ हो गई। क्या दासियाँ, क्या रानियाँ सब गैलरीमें एकत्र हो गये। बन्नीको बाहर गये बहुत देर हो गई थी। बाहरसे समाचार आनेका और कोई साधन नहीं था। अधिकांश रमणियोंके हृदय धड़क रहे थे, कुछके मुँहपर तेज था। एक आशङ्का थी, जो बार-बार अँधेरी रातमें बिजलीकी भाँति कौंध जाती थी : क्या वीर मानसिंह जौहरका निश्चय करेगा ?

रात गाढ़ी-से-गाढ़ी होती जा रही थी। दीपक जल उठे थे। तोपोंके दहाने रह-रहकर गरज उठते थे। इसके अतिरिक्त रनिवासमें बाहर होती हुई हलचलका कोई चिह्न नज़र नहीं आता था। तभी सहसा बन्नी आता दिखाई पड़ा। 'बन्नी आया,' 'बन्नी आया,' कहती हुई अनेक रमणियाँ आगे बढ़ीं, किन्तु आशाके विपरीत बन्नीके पगोंमेंसे चपलता कूच बोल गई थी। वह आ रहा था, जैसे कोई उठाये लिये आ रहा हो। एक साथ कई नारी-कंठोंसे प्रश्न निकला : "क्या हुआ...क्या समाचार है ?"

बन्नी चुप था। चेहरेपरसे हँसी उड़ गई थी। पलकें धीरे-धीरे झपक रही थीं ! केवल पग एक ही चालसे आगे बढ़े जा रहे थे ! राजमाताके कक्षके बाहर जाकर वे रुक गये, द्वारपर ही वृद्धा खड़ी थी। उसे देखकर

वह भीतर चली गई। पीछे-पीछे बन्नी गया, और उसके पीछे पचासों रमणियाँ भीतर पहुँच गईं।

बन्नीके मुँहपर पास ही रखे दीपकका प्रकाश हिलता रहा। दो क्षणके लिए कक्षमें ऐसी चुप्पी छाई रही, कि सूई भी गिरती तो आवाज़ सुनाई पड़ जाती। वृद्धाने पलंगपर लेटते हुए पूछा, "क्या बात है? कोई समाचार लाया है रे?"

बन्नीकी दृष्टि दीपककी लौपर जमी हुई थी। सहसा वहाँ उपस्थित नारीवर्गने देखा कि बन्नीका एक हाथ आगे बढ़ा और उसकी उँगलियाँ दीपककी लौ को छूने लगीं, तुरन्त ही चीख़ मारकर बन्नीने अपना हाथ खींच लिया और घूमकर वह स्त्रियोंके बीचमेंसे राह बनाता हुआ बाहरकी ओर दौड़ा। सब स्त्रियोंके कलेजे ज़ोर-ज़ोरसे धड़कने लगे।

"जौहर होगा!" "जौहर होगा!" "जौहर होगा!" कानों-ही-कानोंमें यह समाचार पलभरमें सारे रनिवासमें फैल गया।

बिछुवा साँपकी तरह बल खाई हुई छोटी-सी चमकदार कटार लिये पन्ना द्वारपर बन्नीके पदचाप सुनकर घूम गई। बन्नीके नेत्र आतङ्कसे फटे हुए थे। पन्नाके नेत्र विस्फारित होकर थोड़ी देरके लिए उन नेत्रोंसे मिले। सहसा पन्नाके मुँहसे निकला: "नहीं, नहीं! मुझे आगसे बहुत डर लगता है। मैं चितापर नहीं चढ़ूँगी। देखो, देखो, मेरे रोंगटे खड़े हो रहे हैं...मैं आगमें पैर नहीं रखूँगी...!"

बन्नीकी दृष्टि एक झटकेके साथ पन्नाके हाथमें थमी बिछुवा कटारपर जाकर स्थिर हो गई। फिर पन्नाके मुँहपर जाकर टिकी। कमरेके झकाझक प्रकाशमें लड़कीका मुँह सरसोंके फूलकी भाँति पीला दिखाई पड़ रहा था। चेहरेके आधे भाग तक खम्भेपर लटके हुए परदेकी छाया पड़ रही थी, मानो उसके नेत्र उस छायामें अपना आतङ्क छिपानेकी चेष्टा कर रहे हों।

बन्नीने कहा, "अभी तीन दिन तक क़िलेके भीतर अनाज और पानी है। तीन दिनमें सुलतान तोबा बोल देगा..." फिर साथ ही उसने कहा,

"मुझे सुलतानसे बड़ा भय लगता है। सुना है उसकी लम्बी-लम्बी काली दाढ़ी है और उसकी आँखें हमेशा लाल रहती हैं। वह ऐसा ही होगा, जैसा उस कहानी वाला देव; जिसमें एक राजकुमारीसे विवाह करनेके लिए एक राजकुमार अमर फल लेने जाता है, राजकुमारीको वह देव उठा ले जाता है और राजकुमार उसे देवके पंजेसे छुड़ाकर लाता है, और......"

पन्ना एकटक बन्नीका मुँह देख रही थी। वह सोच रही थी कि क्या बन्नी, संसारकी विषमताओंसे अपरिचित भोला बन्नी, उस वीर राजकुमारके स्थानपर अपनेको नहीं रख रहा है? क्या ऐसा कोई राजकुमार हो सकता है, जो इस कठिन परिस्थितिमें राजकुमारी पन्नाकी रक्षा कर सके।

तभी स्मृतिकी एक कलाबाज़ीके पीछे-पीछे उसकी नज़रोंमें अरकंडीकी पहाड़ियोंका वह धुँधला आकार साफ़ होने लगा, जो उसके कक्षकी खिड़कीसे आकाशपर खिंची हुई टेढ़ी-मेढ़ी रेखाओंके रूपमें हर संध्याको नज़र आता है। इन पहाड़ियोंसे उलझती हुई उसकी दृष्टिमें एक बाँका राजपूत युवक आया। तीन वर्ष पहले अपने दस हज़ार योद्धाओंके साथ इस युवकने उसके पिताके साथ मिलकर शत्रुओंको छकाया था, और अन्तमें विजयश्री मानसिंहको मिली थी। इसके बाद एक छोटेसे बंजर भूभागको लेकर, जो पाँच-छः पीढ़ियों पहले इस युवक उम्मेदसिंहके वंशमें चला आता था और बादमें राजनीतिक घटना-चक्रसे मानसिंहके वंशमें चला आया था। इन दोनों वंशोंमें एक तनातनी खड़ी हो गई। कितनी ही बार पन्नाने युद्धके साजमें सजे हुए उस युवकको देखकर सोचा था कि काश, भविष्यमें चलकर उसे भी ऐसा ही पति मिले। क्या उसमें इतनी सामर्थ्य है कि वह गुजरातके सुलतानके दाँत खट्टे कर सके?

कहानीकी चर्चा समाप्त करके बन्नी कह रहा था, "हम दोनों एक साथ मरेंगे...ज्वालाओंमें जलकर नहीं...इस कटार से..."

पन्नाकी दृष्टि फिर ऊपर उठी। "बन्नी, क्या तुम अरकंडीकी पहाड़ियों तक पहुँच सकते हो?"

बन्नी यह प्रश्न सुनकर चौंका। "वाह! कोई भी पहुँच सकता है। इस क़िलेमें ऐसा कौन राजपूत है, जिसे राजकुमारी पन्ना आदेश दे और वह क़िलेकी दीवारसे नीचे उतरकर सुलतानकी तेग़का शिकार बननेमें गौरव अनुभव न करे!"

"सुलतानकी तेग़का शिकार नहीं बनना है", पन्नाने संयत स्वरमें कहा, "अरकंडीकी पहाड़ियों तक पहुँचना है......किसी भी क़ीमतपर पहुँचना है। अगर जौहरकी ज्वालाओंसे इस पूरे रनिवासको बचाना है, तो किसी न किसीका उस पर्वतश्रेणी तक पहुँचना अनिवार्य है......"

"असम्भव!" बन्नीने कहा। "उम्मेदसिंहका हृदय अब वैसा नहीं रहा। इसके अतिरिक्त सुलतानकी सेनाका सागर क़िलेके पत्थरोंको चारों ओरसे छू रहा है। लेकिन राजकुमारी पन्नासे उम्मेदसिंहका क्या सम्बन्ध?"

पन्नाको आश्चर्य हुआ। बन्नीकी आँखोंमें एक अवर्णनीय ईर्ष्याका भाव दिखाई पड़ रहा था। वह हँस पड़ी, "तुम पागल हो। क्या तुम समझते हो कि पन्ना उसे विवाहका सन्देश भेज रही है?"

बन्नी तिरस्कारका भाव मुँहपर लाकर कहा, "हूँ! मानो मैं कुछ समझता ही नहीं! अभी बच्चा ही हूँ! तुम क़िलेमेंसे जिसे चाहो भेज दो। पर कहे देता हूँ, सुलतानके सागरको लाँघकर कोई अरकण्डीकी पहाड़ियों तक नहीं पहुँच सकेगा..."

"नहीं, नहीं! वह आदमी पहुँच सकता है, जिसके हृदयमें मेरे प्रति श्रद्धा होगी, विश्वास होगा, स्नेह होगा और मेरी इच्छाको पूरी करनेकी लगन होगी। इस क़िलेमें ऐसा एक ही व्यक्ति है, और वह है बन्नी। बन्नी, क्या तुम मेरे लिए इतना भी नहीं करोगे?"

"नहीं," बन्नीने कठोरताका भाव मुँहपर लाकर निश्चयके स्वरमें कहा।

पन्नाने होंठ काटे। हाथमें पकड़ी बिछुवापर उसकी मुट्ठी कस गई। फिर सहसा ही वह ढीली पड़ गई। मुँहपर हास्य छा गया। बोली, "मैं उम्मेदसिंहको राखी भेजूँगी।"

"राखी!" आश्चर्यके अतिरेकसे बन्नीके मुँहसे निकला।

"हाँ," पन्नाने कहा। "अगर उसने राखी स्वीकार कर ली, तो जौहर नहीं होगा। दस हज़ार सूरमा सुलतानकी पीठमें तीर चुभो देंगे। राजपूत चाहे बैरी भी हो, किन्तु एक कष्टमें फँसी हुई राजपूत कन्याकी राखीको अस्वीकार नहीं कर सकता। बोलो जाओगे?"

"पर...पर," बन्नीने आँखें फाड़कर कहा, "यह तो असम्भव..."

"बन्नी, एक ही लक्ष्य है: अरकण्डीकी पहाड़ियों तक पहुँचना। वीर अर्जुनको केवल चिड़ियाकी आँख दिखाई दी थी। तुम्हें भी अपना लक्ष्य दिखाई देना चाहिए। सफल होकर लौटोगे, तो पन्ना तुम्हारी प्रतीक्षामें पलकें बिछाये बैठी होगी। असफल हो जाओगे, तो समझना कि पन्ना भी साथ ही स्वर्ग पहुँच जायेगी...जाओगे?"

"आज ही?" बन्नीने आतङ्कित भावसे पूछा।

"अभी," पन्नाने विचलित स्वरमें उत्तर दिया। "रातका अन्धकार तुम्हारी सहायता करेगा।"

"तो यह बिछुवा मुझे दो।"

"क्यों?" पन्नाने सहम कर पूछा।

"इससे सुलतानकी छाती चीरूँगा—अगर उसने मेरी राह रोकी, तो यह बिछुवा उसकी छातीमें घुस जायेगा...मूठ तक।"

"तो, लो", पन्नाने बिछुवा आगे बढ़ा दिया। बन्नीकी सुन्दर आँखें एक क्षणके लिए पन्नाके रसीले लम्बे नेत्रोंसे मिलीं और बिछुवा उसके हाथोंमें आ गया।

थोड़ी-सी हिचकिचाहटके साथ मानसिंहने इस योजनाको स्वीकार कर लिया। रातके अँधेरेमें ही एक रस्सीके सहारे क़िलेकी दीवारसे बन्नीको

खाईमें उतार दिया गया। एक पत्ता तक न खड़का और बन्नी खाईके दूसरे किनारेसे जा लगा। इसके बाद खाईसे सिर उठाकर उसने चारों ओर दूर तक देखा।

मशालें-ही-मशालें नज़र आ रही थीं। सुलतानकी सेनाओंके डेरे दूर-दूरतक फैले थे। असंख्य सैनिक हाथोंमें मशालें लिये इधर-उधर गश्त लगा रहे थे। सुलताननें क़िलेकी ओरसे अप्रत्याशित गोलाबारीसे बचनेके लिए रातको दिन बना रखा था।

बन्नीकी आँखोंके ठीक सामने दो मशालें थोड़े-थोड़े समयके अन्तरसे आकर मिल जाती थीं और फिर एक दूसरीको पार करके दूर-दूर चली जाती थीं। ऐसे ही एक अवसरको थामकर वह पानीमें से ऊपर उचका और चुस्त गिलहरीकी तरह उसने एक छोटी-सी दौड़ मशालोंके दूसरी ओर दिखाई देनेवाले डेरे तक लगाई। उसने गश्ती सिपाहियोंकी पहली पङ्क्ति पार कर ली थी। मगर उसके आगे असंख्य पंक्तियाँ थीं, जिन्हें उसे पार करना था।

दो डेरोंकी आड़में खड़े होकर उसने फूलते हुए दमको साधा। सामने फैले हुए मशालोंके आकाशको एक कोमल चिड़ियाकी भाँति मिचमिचाई आँखोंसे देखा। इसके बाद उसने एक क्षणमें निश्चय कर डाला। लोमड़ी की तरह वह फुरतीसे बाहर निकला और साँपकी तरह बल खाते हुए रास्तेका तख़मीना लगाकर, अन्धकार-ही-अन्धकारमें, सिपाहियोंसे कन्नी काटता हुआ भागा।

अधिक दूरतक वह सिपाहियोंकी नज़रोंसे नहीं बच सका। तुरन्त सब तरफ़ एक शोर मच गया और सैकड़ों सिपाही उसके पीछे लग गये। अब उसने प्रकाश और अन्धकारका विचार भी छोड़ा। कभी दौड़ता-दौड़ता वह किसी मशालके घेरेमें आ जाता, और कभी अन्धेरेमें छिप जाता। किसीको धक्का देता, किसीकी मशाल गिराता बन्नी अभी आधा

मार्ग भं तै नहीं कर पाया था कि धरा गया। उसके कपड़े गीले थे, उसका साँस फूल रहा था और बदनमें से चिनगारियाँ-सी निकलती प्रतीत हो रही थीं।

जिसने पकड़ा था वह उसे ले चला। इतनेमें और भी पास आ गये। तब एकने उसका मुँह मशालके प्रकाशमें देखकर कहा, "अरे, यह तो औरत है औरत!"

"ख़ुदाकी क़सम?" दूसरेने विश्वास न करके पूछा।

"मामूली औरत नहीं, हीरा है हीरा। न हो, तो दाढ़ी मुँड़ा लूँ," पहलेवालेने कहा।

"तोबा! तोबा! जासूसीका काम औरतोंसे लेते हैं। ख़ुदाकी लानत है ऐसे काफ़िरों पर..."

"तो, सुल्तानके पास..?"

"हाँ।"

बन्नीको फ़ीरोज़शाहके डेरेमें ले जाया गया। चेहरा परिश्रम और पकड़े जानेके परितापसे लाल हो रहा था और आँखोंमें ख़ून उतर आया था। बन्नी सैनिकोंके हाथों-ही-हाथोंमें छटपटा रहा था। निगाह पड़ते ही सुल्तान मुँह बाये रह गया। "वाह! क्या हुस्न अता फ़रमाया है अल्लाहने!"

"हजूर," पकड़नेवालेने अपना महत्त्व जतानेके लिए कहा, "अभी कमसिन मालूम होती है।"

"मगर राजपूतोंमें औरतोंको जासूसी करते हमने आज तक नहीं सुना था!" सुल्तानने आश्चर्यसे कहा। "अगर यह सच है, तो ये कम्बख़्त तो धरती फाड़ डालेंगे।"

"हजूर, हाथ कङ्गनको आरसी क्या?" सैनिक बोला। "हुक्म दिया जाये, तो इसको ज़बानसे भेद उगलवाया जाये?"

"ज़रूर, ज़रूर," सुलतानने कहा। "यह काम पहला है। बता, ऐ नाज़नीं, इस तरह छिपकर आनेमें तुम्हारा क्या मक़सद था ?"

बन्नी एक बार फिर छूटनेके लिए छटपटाया। सैनिकोंने उसे छोड़ दिया! बन्नी त्रस्त हिरनकी तरह चारों ओर छूटनेका साधन खोजने लगा। हाथ और पैर भागनेकी मुद्रामें मुड़े हुए थे! वह चुप था।

फ़रमांबरदारने कहा, "जहाँपनाह, जब तक यातना न दी जायेगी इसकी ज़बान नहीं खुलेगी।"

"नहीं, नहीं," सुल्तानने वासनापूर्ण दृष्टिसे बन्नीकी ओर देखते हुए कहा। "इसे हमारी ख्वाबगाहमें ले जाया जाये। हम प्यारका हथियार इस्तेमाल करके इससे सब बातें पूछ लेंगे।"

यह योजना सभी सैनिकोंको पसन्द आई। आखिर उन्होंने जो कारगुज़ारी दिखाई है उससे सुल्तान मनोरञ्जन प्राप्त कर रहा है, उससे बढ़कर उनका सौभाग्य और क्या हो सकता था ?

कुछ ही समय बाद सुल्तान अपने उस डेरेमें पहुँचा, जिसमें पड़ा-पड़ा वह गरजती तोपोंके बीच नाज़नीनोंके ख्वाब देखा करता था। यह सही है कि बन्नीने अब तक मुँह नहीं खोला था क्योंकि ज़बानसे अधिक उसका तीव्र मस्तिष्क इस मुसीबतसे भाग निकलनेकी तरकीब सोच रहा था, मगर इस प्रकार अपमानित होनेसे वह बफरा बैठा था। कभी-कभी सुलतानकी क्षुद्र बुद्धि पर हँसी भी आती थी। सुल्तानको अकेले भीतर आता देखकर बन्नीके शरीरकी धमनियाँ तेज़ीके साथ खूनको इधर-से-उधर फेंकने लगीं!

इस स्वप्न सुन्दरीको बाहुओंमें समेट लेनेके लिए हाथ फैलाये हुए सुल्तान आगे बढ़ा। "आ, ऐ नाज़नीं, मेरी आग़ोशमें आ, और समझ ले कि तेरी क़िस्मतका सितारा पलट गया है। इस पहाड़ी इलाक़ेमें सिर्फ़ दो टकोंके लिए जासूसीका गंदा काम करनेकी अब तुझे ज़रूरत नहीं

रही। तुझपर गुजरातकी सारी दौलत क़ुरबान है..." और उसने झपट-कर बन्नीको हाथसे पकड़कर खींच लिया, जिससे वह उसकी छातीसे आ लगा।

मगर शीघ्र ही सुलतानको कुछ विचित्र-सा अनुभव होने लगा। उसके वक्षमें कोई तेज़ धारदार चीज़ चुभती जा रही थी। उसने झटका देकर बन्नीको अपनेसे अलग करना चाहा, मगर उसके दाँत मज़बूतीसे उसकी छातीके वस्त्रको पकड़ चुके थे। इसलिए झटकेसे स्वयं सुलतानका सन्तुलन बिगड़ गया और वह ज़मीन पर आ रहा।

बन्नी उसकी छातीपर चढ़ बैठा। अब सुलताननने आँखें फाड़कर देखा कि उसकी छातीपर एक बल खाई हुई चमकदार छोटी-सी कटार सीधी खड़ी थी और उसकी मूठ उस 'नाज़नीन' की गोरी मगर मज़बूत मुट्ठीमें फँसी हुई थी।

"यह क्या करती है, नाबकार! अगर तूने यह नापाक काम कर डाला, तो सारी फ़ौज तुझपर टूट पड़ेगी और तेरे टुकड़े-टुकड़े उड़ा देगी।"

अब पहली बार बन्नीकी ज़बान खुली, और उसने कहा, "तेरे इस दुनियासे उठ जानेसे हमारे क़िलेका मुहासिरा उठ जायेगा।"

"नहीं, नहीं! ओह! अगर मैं उठ भी गया, तो मेरा बेटा इस क़िलेको सर करेगा। आह! मुझे छोड़ दे। सच कहता हूँ तुझे मालामाल कर दूँगा। अपने हरमकी ख़ास मल्काका ओहदा दूँगा......आह!" बन्नी मल्का बनना नहीं चाहता था, इसलिए उसकी कटारकी बारीक नोक सुलतानकी छातीमें आधा इंच पेबस्त हो गई थी। साथ ही वह पन्नाके शब्दोंको सोच रहा था। उसे अपने लक्ष्यपर पहुँचना था। वह सुलतान की हत्यासे पूरा नहीं होगा। वह मारा जायेगा और पन्ना उसके दुःखमें प्राण दे देगी।

उसने कहा, "तो, ओ बेवकूफ़ सुलतान, सुन: मैं औरत नहीं, मर्द हूँ।

और मेरा घर अरकंडीकी पहाड़ियोंमें है। मैं अपनी बहनके लिए इस पहाड़ी क़िलेमें उसके मैकेसे भेंट लेकर आया था कि तेरी फ़ौजने क़िलेको घेर लिया। मैं वापस अपने घर जा रहा था। अब भी वहीं जाना चाहता हूँ। तू बड़े शौकसे इस क़िलेको सर कर, मगर मुझे अपने रास्ते जाने दे। नहीं तो मैं तुझे अभी यमपुर भेजता हूँ।"

"तोबा, तोबा!" सुल्तानने आँखें ऊपर चढ़ाकर कहा। "कैसी अहमकाना ग़लती हो गई है! तोबा, तोबा! लड़के, तू अपने घर जा सकता है..."

"तो उठकर ख़ास अपना घोड़ा डेरेके सामने मँगाकर खड़ा करवा," बन्नीने आज्ञासूचक स्वरमें कहा "और मैं तेरे बराबर बिछुवा लगाये खड़ा हूँ। अगर ज़रा भी इधर-उधर हुआ, तो बिछुवाके बल खाये दुधारे तेरे शरीरके भीतर जा पहुँचेगे।"

बन्नी उछलकर अलग हो गया और सुलतान तोबा-तोबा करता हुआ उठकर खड़ा हुआ। बन्नीने बिछुवा उसकी पसलीसे सटा दिया। सुलतानने पहरेदारको बुलाकर अपना घोड़ा डेरेके सामने लाकर खड़ा करनेका हुक्म दिया।

जब घोड़ा आ गया, तो बन्नीने फुरतीसे बिछुवा दाँतोंके बीच दबाया और तीरकी तरह डेरेसे निकलकर सामने खड़े घोड़ेकी पीठपर उछला। अगले ही क्षण अरबी घोड़ा भारी रेत उड़ाता हुआ हवासे बातें करने लगा। पीछे-पीछे सुल्ताननने उसे पकड़नेके लिए अपने घुड़सवारोंको भेजा। मगर सुल्तानका घोड़ा हाथ न आना था, नहीं आया। इसीलिए तो बन्नीने ख़ास सुल्तानका घोड़ा मँगाया था।

सुबह होते-न-होते बन्नी अरकंडी पहाड़ियोंके पीछे जा पहुँचा। गाँवके लोगोंको क़िलेमें जाने देनेके लिए फाटक खुल चुके थे। उन्हींके साथ लगा-लगा बन्नी महलके भीतर पहुँच गया। सजे हुए घोड़ेके मुँहसे

फेन निकल रहा था और बन्नीका शरीर एक प्रकारसे उसपरसे झुका पड़ रहा था। एक हाथसे उसने अपने सिरकी पगड़ी थाम रखी थी।

राजमहलके पास पहुँचकर उसने केवल इतना कहा, "उम्मेदसिंह..." और अचेतन होकर घोड़ेपर लटक गया। लक्ष्य आ गया था, इसलिए चेतनाने कुछ समयके लिए विश्राम ले लेना चाहा।

दोपहरसे पहले ही बन्नी ताज़ा हो चुका था। उसके मुँहसे उसकी कथा सुनकर कुँवर उम्मेदसिंह बहुत हँसे। इसके बाद बन्नीने उनके सामने पन्नाकी राखी रखी। सोनेकी कलीदार जड़ाऊ राखी देखकर कुँवर उम्मेद-सिंहका जोश भड़क उठा। उन्होंने बन्नीके देखते-देखते राखी उठाई और अपनी पगड़ीमें राखीको कसकर बाँध लिया। इसके बाद उठकर उन्होंने अपने सेनापतिकी ओर देखा : "जय भवानी!"

सेनापतिने कहा, "जय भवानी!"

मुलतानके घोड़ेपर बन्नी फिर सवार हुआ और कुँवर उम्मेदसिंहके दस हज़ार वीर अगली सुबहको राजस्थानकी रेतको अपने पाँवों तले पीसने लगे। पहाड़ी चूहेकी भाँति कुँवर उम्मेदसिंहने अपने सारे दलको पहा-ड़ियोंमें बिखरा दिया और गुजरातसे मानसिंहके क़िलेको तोड़नेके लिए आनेवाला, पुर्त्तगालियों द्वारा संचालित, भारी तोपख़ाना बीच राह में ही रोक लिया गया। साथ-ही-साथ सुलतानकी रसदकी आमदनी भी बन्द हो गई। कुछ ही दिनोंमें आसपासके राजपूत राजा भी सोई नींदसे जाग उठे। जब उन्होंने देखा कि देर या सबेर सुलतानको पीछे लौटना पड़ेगा, तो वे भी विजयश्रीमें अपना भाग बँटानेके लिए अपनी-अपनी सेनाएँ लेकर उमड़ पड़े।

मुलतानको सन्धि करके जीता हुआ इलाक़ा वापस करना पड़ा।

हर्षसे उन्मत्त अरकंडी सेना मानसिंहके क़िलेमें घुसी। साधारण राजपूत सैनिक उम्मेदसिंहके पैर चूमने लगे। हर जगह उम्मेदसिंहके नाम

की माला जपी जाने लगी। मानसिंहने उसे गलेसे लगा लिया! बोला, "जो माँग लोगे वही दे दूँगा। सब कुछ तुम्हारा है।"

कुँवर उम्मेदसिंहने पीछे खड़े बन्नीको आगे करके कहा, "और इस स्त्रीको क्या देंगे ?"

बन्नी शरमके मारे लाल हो उठा। मानसिंहने उसे पैर छूनेसे रोकते हुए हृदयसे लगाकर कहा, "पन्ना मेरी बेटी है, तो बन्नी मेरा बेटा है।"

कुँवर उम्मेदसिंहने निराश स्वरसे कहा, "तब तो मेरे लिए कुछ भी नहीं रह जाता।"

मानसिंह प्रसन्न होता हुआ बोला, "आप मुँहसे कहिये तो सही। फिर देखिये, वह वस्तु आपके सिरपर न्योछावर होती है या नहीं।"

कुँवरने कहा, "तब, मुझे अपने परिवारका सबसे सुन्दर रत्न, पन्ना, दीजिये।"

मानसिंहने कहा, "क्या! आप राजकुमारी पन्नाका पाणिग्रहण माँगते हैं! कुँवर, एक बार फिर सोचिये, राजकुमारी पन्ना आपको राखी-बंद भाई बना चुकी है।"

बन्नीका मुँह देखते-देखते सफ़ेद पड़ गया। इस वार्त्तालापके बीच उसके चेहरेपर एक रंग आ रहा था और एक जा रहा था।

कुँवरने कहा, "आप बुजुर्ग हैं, मेरा विचार है कि इतना अवश्य जानते हैं कि विवाहसे पहले संसारकी प्रत्येक नारी पुरुषके लिए माँ है या बहन है। फिर, मैंने उस राखीको अपनी पगड़ीमें रखा है, हाथमें नहीं बाँधा है।" यह कहकर उन्होंने अपनी पगड़ीमेंसे उस राखीको निकाला और हथेलीपर रखकर मानसिंहके सामने कर दिया।

बन्नीका मुँह फ़क़् हो गया। मानसिंहने कहा, "इसका निर्णय केवल पन्ना ही कर सकती है, कुँवर जी, यदि वह हृदयसे आपको भाई मान चुकी है, तो खेद है कि मेरे पास इस प्रार्थनाको पूर्ण करनेकी शक्ति नहीं होगी। यदि वह स्वीकार कर लेती है, तो पन्ना आपकी है।"

प्रसन्नतासे फूले न समाकर कुँवरने कहा, "मुझे स्वीकार है। चलो, बन्नी, हमें अतिथिगृह......।" लेकिन बन्नी वहाँसे लोप हो चुका था!

आज फिर वही गैलरी थी। वे ही रमणियाँ गैलरीमें एकत्र बिखरी हुई थीं। उसी प्रकार कुँवर उम्मेदसिंहके स्वागतके समाचार जाननेकी उत्सुकता सबके हृदयमें थी और उसी प्रकार बन्नी तीरकी तरह, उन सबके टोकनेकी परवाह न करता हुआ, पन्नाके कक्षकी ओर भागा जा रहा था। कमरेमें पैर रखते ही देखा पन्ना सजीधजी खड़ी थी। आज उसका रूप और भी अधिक तीव्रताके साथ निखर आया था। बन्नीको आते देखकर वह हर्षसे लगभग चीत्कार कर उठी : "बन्नी!"

बन्नी दरवाज़ेके पास ही खड़ा हो गया। उसके नेत्र पन्नाके नेत्रोंसे मिले और वह बोला, "तुमने जो कहा था वह मैंने कर दिया..."

"ओह! तुम कितने अच्छे हो, बन्नी!" पन्नाने कहा।

बन्नीपर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ा। उसका मुख पूर्ववत् ही गम्भीर था। वह बोला, "तुम मेरे लौटनेकी प्रतीक्षामें पलकें बिछाये बैठी थी..."

पन्ना घबराई, "तुम ऐसे क्यों देख रहे हो! क्या बात है?"

बन्नीने नहीं सुना। उसकी आँखें स्थिर थीं और उनमें असंख्य प्रश्न झाँक रहे थे। उसने आगे कहा, "और मैं यह भी नहीं समझता था कि कुँवर उम्मेदसिंहको विवाहका सन्देश भेज रही थी..."

"नहीं, नहीं," पन्नाने नकारस्वरूप अपनी हथेली आगे बढ़ाकर कहा।

"तब कान खोलकर सुनो :" बन्नीने कहा, "कुँवरने क़िलेकी रक्षा की है। कुँवरके ही कारण क़िलेमें जौहरकी ज्वालाएँ नहीं उठीं। मगर कुँवरने तुम्हारी भेजी हुई राखी भी नहीं पहनी। वह पगड़ीमें रखकर उसे यहाँ लाया है। वह राखी लौटाकर इसके बदलेमें तुम्हारा हाथ पकड़ना चाहता है। अब बात तुम्हारी हाँ या नापर अटक गई है। कहो क्या कहती हो?"

पन्नाको अपने कानोंपर विश्वास नहीं हो रहा था। पल भरमें अतीत और भविष्यके अनेक विचित्र चित्र उसकी पलकोंपर छायापटकी भाँति चिपक गये। वही कुँवर उम्मेदसिंह, जिसे देख-देखकर वह अपने भावी दूल्हेके रूपकी कल्पना करती थी, आज उसका दूल्हा होनेके लिए तत्पर है, बात उसके ऊपर अटकी हुई है...। और सामने खड़ा है बन्नी... उसका वह कल्पनाशील दावेदार, जिसने केवल उसके इङ्गितसे अपनी जानको एक टूटे हुए पत्तेकी भाँति क़िलेकी खाईके पानीमें डाल दिया था।

धीरे-धीरे वातावरण भारी-से-भारी होने लगा। प्रकाशकी जगह अन्धकारके टुकड़े काले बादलोंकी तरह घिर-घिरकर कक्षमें फैलने लगे। पन्ना लड़खड़ाई और उसने खम्भेके परदेको पकड़कर उसका सहारा लिया। उसकी पुतलियाँ विचार-सागरमें डुबकी लगाते-लगाते ऊपर चढ़ गईं और वहीं खम्भेपर अपने बदनकी रगड़ लगाती हुई फ़रशपर गिरने लगी। उसकी यह अवस्था देखता हुआ बन्नी स्थिर खड़ा था। वह केवल अपने प्रश्नोंका उत्तर चाहता था।

सहसा पन्नाकी मुद्रा कड़ी पड़ गई। नेत्र पूरे खुल गये। उसने स्थिरताके साथ खड़े होते हुए कहा, "लाओ, मेरा बिछुवा वापस करो, जो तुम मुझसे चलते समय ले गये थे।"

लेकिन एक ही लड़ाईमें भाग लेनेसे बन्नी समझदार हो गया था। उसने कहा, "तो यही है तुम्हारा उत्तर! यह बिछुवा तुम्हारे काम आ सकता है, तो मेरे भी आ सकता है।" कहकर वह वहाँ एक पल भी नहीं ठहरा।

बेटीकी चुप्पीसे मानसिंहने स्वीकृतिका अर्थ लगाया। जब तक विवाह की विधियाँ सम्पन्न होती रहीं, पन्ना आधी खुली हुई आँखोंसे सब निरखती रही। बन्नी स्थिर भावसे अपनी शक्तिभर सब कामकाजमें हाथ बँटाता रहा। जब पन्नाका डोला बिदा होने लगा, तो बन्नी दूर खड़ा उसे देखता

रहा। उसी समय एक दासीने आकर उससे कहा, "राजकुमारी पन्ना तुम्हें बुलाती हैं, डोलेमें हैं।"

एक क्षणके लिए बन्नीके भावसे मालूम हुआ कि वह पन्नाकी इस प्रार्थनाको स्वीकार नहीं करेगा। मगर फिर वह हिला और धीमे पगोंसे डोलेके पास गया, पन्नाने स्वयं अपने हाथोंसे आवरण उठा दिया। फिर बोली, "मैं जा रही हूँ!"

बन्नी चुप रहा।

"जिस दिन मैं सुनूँगी कि तुमने बिछुवा छातीमें चुभो लिया है उस दिनमें मैं भी विष खा लूँगी।" पन्नाकी आँखें डबडबा आईं।

बन्नी इस बार भी चुप रहा।

पन्नाकी आँखोंके उमड़ते आँसू उसके गालोंपर बह चले! विचलित स्वरमें उसने कहा, "बन्नी, क्या तुम नहीं समझते कि मनुष्य कितना पराधीन होता है। राजकुमारी पन्ना देवदानवकी कहानियों वाली राजकुमारी नहीं है, बल्कि अपने परिवार, समाज, राज्य और राजनीतिक घटनाओंसे बँधी हुई नारी है, काश कि कुँवर उम्मेदसिंह हमारे परिवारके रक्षक बनकर न आते, काश कि तुम उनकी जगह होते! बन्नी, इतिहाससे एक भूल हो गई है। क्या तुम इस भूलके कारण अपने स्वप्नोंकी पन्नाको दण्ड दोगे?"

बन्नीने बच्चोंकी भाँति अपने अंगरखेके पल्लेसे उमड़ती हुई आँखोंको पोंछा। यही उसका उत्तर था। उसने कहारोंको सङ्केत किया और उन्होंने डोला उठा लिया। पोंछनेपर भी बन्नीकी आँखोंसे आँसू ढलते रहे। बहुत देर तक वह पन्नाके डोलेको देखता रहा, जब तक कि वह दृष्टिपथसे ओझल होकर उसकी आँखोंकी पुतलियोंमें न समा गया।

एक मुसकराहट बन्नीके मुखपर आई और विलीन हो गई।

• मूँछका बाल

उस दिन रहस्यमय सम्राट् अकबरकी दाढ़ीपर गुलाबजल लगाते-लगाते जब नुसरत हज्जामने डरते हुए यह निवेदन किया कि वह तन्त्र-मन्त्रकी विद्यामें पारङ्गत है यहाँतक कि आदमीको जीवित ही जन्नतमें भेज सकता है, तो विद्वान् बादशाहको बड़ा कुतूहल हुआ।

बादशाहने गम्भीर होकर कहा, "नुसरत, हमारी इतनी बड़ी शहंशाहियतमें तेरे जैसा बुद्धिमान् मनुष्य और कोई नहीं है!"

थोड़ी ही दूरीपर रेशमी वस्त्रकी प्रतीक्षामें खड़ी लौंडी दाँतोंमें उँगली देकर हौलेसे मुसकराई। शायद वह बादशाहके व्यङ्गको समझ रही थी।

हज्जामने कहा, "आलीजाहके मुँहसे झरे फूलोंको चुन लूँ। हज्जाम तो आख़िर हज्जाम ही है। कौन नहीं जानता कि हजूरकी सलतनतमें अक्ल जहाँ पहुँचकर दम तोड़ बैठी है, वह राजा साहब बीरबल हैं।"

अकबर उसी मुद्रासे बोला, "मालूम होता है कि जन्नतमें तेरा कोई काम अटका हुआ है।"

नुसरत बोला, "हजूरको उमर चाँदसितारोंसे बातें करे। इन खूबसूरत चमकती गेंदोंके ऊपर, जन्नतकी रंगीन चारदीवारीके भीतर, हजूर आलीजाहके पुरखोंकी रूहें तैर रही हैं। बेटेपर अपनी जान कुरबान कर देनेवाले ग़ाज़ी पादशाह बाबर और खुदाकी इबादतकी राहमें कुरबान हो जानेवाले ग़रीबपरवर बादशाह हुमायूँकी आत्माएँ रात-दिन जहाँपनाहकी जानको सौ-सौ दुआएँ देती होंगी। इस विद्याको जानकर उनकी खैरियतका पता लगानेका ख्याल ही गुलामके दिलमें सबसे पहले उठा था। मगर सलतनतके सबसे अधिक बुद्धिमान् मनुष्यके अतिरिक्त और कोई इस विद्याको सीखकर जन्नतमें कैसे पहुँच सकता है?"

बादशाहका दिल चाहा कि उसी वक्त हज्जामका सिर धड़से अलग करनेका हुक्म दें। लेकिन वह ठंडा करके खाता था। वह ठठाकर हँस पड़ा और नुसरत सहमकर बादशाहकी ओर देखने लगा।

अकबर बादशाह किस समय विनोदको अपने हृदयमें प्रश्रय देता था और किस समय क्रोधको—इसका पता आजतक किसीको भी नहीं चल पाया था। नुसरत कोपके प्रहारसे बाल-बाल बच गया। दाढ़ी बनानेका काम खत्म हुआ और उसने जल्दी-जल्दी अपना सामान बुकचेमें बन्द करके तीन बार ज़मीनको चूमा। उसके जानेके बाद अकबर फिर एक बार जी खोलकर हँसा। लौंड़ी नज़रें नीची किये रेशमी वस्त्र और जलका पात्र लेकर आगे बढ़ी। सोनेकी तूँबीसे उसने बादशाहके हाथोंपर पाली डालकर चपलताके साथ उन्हें पोंछा। बादशाहने गुलाबजलसे मुँह धोया। उसी समय कक्षके बाहर खड़ी लौंड़ीने सेवामें उपस्थित होकर विनयपूर्वक कहा, "जहाँपनाह, राजा साहब वीरबल, मिर्जा राजा मानसिंह, हज़रत मुल्ला-दो-प्याज़ा और वज़ीर सदर अब्बुलफ़ज़ल साहब क़दमबोसी चाहते हैं।"

"बहुत खूब!" अकबर इस समय अपने इन रत्नोंका आगमन सुनकर प्रसन्न होता हुआ बोला, "हाज़िर किये जायें।"

सब लोगोंने कक्षके भीतर आते ही तीन-तीन बार माथे तक हाथ ले जाकर गिराया। बादशाहके चेहरेकी तरफ़ देखकर वीरबलने कहा, "जहाँपनाह, साफ़ हो गई!"

बादशाहने घुटी हुई ठोढ़ीपर हाथ फेरते हुए भृकुटी चढ़ाकर पूछा, "क्या साफ़ हो गई राजा साहब!"

राजा वीरबलने कहा, "हजूर, रीवाँके राजा रामचन्द्र वाली बात साफ़ हो गई..."

वज़ीर अब्बुलफ़ज़लने कहा, "हजूर, बीचमें दखलअन्दाज़ीकी माफ़ी चाहता हूँ, बात बिलकुल भी साफ़ नहीं है, बल्कि ज्यों-की-त्यों उलझी

हुई है। तीन साल हो गये, रीवाँका राजा हर बार अपने बेटोंको खिराज अदा करनेके लिए भेज देता है, मगर खुद कभी दरबारमें नहीं आता। यह ठीक है कि हम लड़ाई नहीं चाहते, मगर इसका यह मतलब नहीं कि हमारे आधीन राजा हमें बराबरी तकका दरजा न दें। तीन सालके बाद राजा रामचन्द्रके खुद आगरेके दरबारमें उपस्थित होनेकी बात थी, मगर वह इस चौथे साल भी नहीं आया..." अब्बुलफ़ज़लने कमरेमें बिछी हुई स्वच्छ चाँदनीके ऊपर अपने खंजरकी मूठकी नोकसे एक गहरी रेखा खींचते हुए कहा, "...अब रीवाँनरेश मुग़ल दरबारके सम्मानके रास्तेमें एक ऐसी लकीर बन गया है, जिसे मिटाये बिना शहंशाहियतकी भाग्य-रेखाको अपना बड़प्पन क़ायम रखना मुश्किल हो गया है।"

बादशाहने अपने रत्नको प्रशंसाकी निगाहसे देखते हुए कहा, खूब! माबदौलतने युद्धके पक्षमें फ़ज़ल साहबकी दलीलोंको सुना। आप क्या कहते हैं, राजा साहब?" अकबरका सङ्केत वीरबलकी ओर था।

राजा वीरबलने कहा, "जहाँपनाह, इस अकिञ्चनका विचार है कि फ़जल साहबने जो रेखा इस बेशक़ीमती चाँदनीके ऊपर खींचकर इसका बड़प्पन दिखाया है, वह इस रेखाको मिटाये बिना भी छोटा किया जा सकता है...।" इसके बाद वीरबलने लौंड़ीके हाथसे मोरकी पंखी ली और उससे चाँदनीपर खिंची पहली रेखाके पास ही एक और बड़ी रेखा खींचते हुए बोले, "देखिए, जहाँपनाह, फ़जल साहबकी खींची हुई युद्धकी लकीर मेरी शान्तिकी लकीरसे छोटी हो गई..."

अकबर जोशसे चिल्लाया, "वाह, वाह! आपने कमालकी दलील दी है!"

राजा मानसिंह बोले, "अगर राजा साहब इसे व्यवहारमें भी कर दिखाएँ, तो यह करिश्मा सचमुचमें बहुत बड़ा माना जायेगा।"

वीरबलने कहा, "मैं राजा रामचन्द्रको मुग़ल दरबारमें ले आऊँगा, अगर जहाँपनाहकी ओरसे यह आश्वासन प्राप्त हो सके कि उनका स्वागत

एक अधीन राजाकी तरह न होकर सम्मानित अतिथिकी भाँति होगा।"

मुल्ला-दो-प्याज़ा चहके, "अजी, खुदाका नाम लो! राजा रामचन्दर जैसा घमंडी आदमी इस दुनियाके तख्तेपर दूसरा कोई हो सकता है यह शुबेकी बात है। वह आगरेमें पैर रखनेको भी हिमाकत समझता है।"

बादशाहने कहा, "यह बात तो ठीक है। राजा रामचन्द्रका दिल माबदौलतकी तरफ़से साफ़ नहीं है। हम सारे हिन्दुस्तानको मिलाकर एक ऐसा आईना बनाना चाहते हैं, जिसमें विदेशी हमलावर अपनी सूरत देखते ही डर जाये। हिन्दुस्तानके छोटे-छोटे राजाओंकी अधीनताके बजाय साफ़दिलीकी हमें ज्यादा ज़रूरत है। न हम अपने दिलमें कोई घमंड रखना चाहते, न अपने किसी दोस्तके दिलमें अपनी ओरसे कोई ग़लतफ़हमी चाहते। अगर राजा रामचन्द्र हमारे दरबारमें आनेके लिए राज़ी हो जायँ, तो हम उनका खिराज तक माफ़ कर सकते हैं...मगर, राजा साहब, आजकल आगरेसे बाहर क़दम रखना आपके लिए खतरेसे खाली नहीं है।"

राजा वीरबलने कहा, "हजूर, जब तक जहाँपनाहका हाथ मेरे सिर पर..."

"आप पुरानी बात दोहरा रहे हैं", बादशाहने कहा। इसके बाद उन्होंने नुसरतवाली बात सबको सुनाते हुए कहा, "इससे ज़ाहिर होता है कि कुछ सिरफिरे मौलवी हर क़ीमतपर आपकी जान लेना चाहते हैं। यहाँतक कि वे बेवकूफ़ हमसे भी यह उम्मीद रखते हैं कि हम उनकी अन्धविश्वाससे भरी बातोंमें आकर आपको अपने पुरखोंकी खबर लानेके लिए ज़िंदा ही जन्नत भेज सकते हैं—नामाकूल कहींके!"

"इसके अलावा", मुल्ला-दो-प्याज़ाने कहा, "यह भी कतई ग़ैर-मुमकिन है कि राजा रामचन्द्र राजा वीरबलके समझाने-बुझानेसे ही इनके साथ-साथ आगरेकी तरफ़ चल देंगे। लातोंका भूत बातोंसे नहीं मानता।

अगर राजा साहबने इस ग़ैरमुमकिनको मुमकिन कर दिखाया, तो यह गुलाम अपनी दाढ़ी मुँड़वा देनेके लिए तैयार है।"

राजा वीरबल बोले, "मैं हजूर आलीजाहसे निवेदन करता हूँ कि माननीय मुल्ला-दो-प्याज़ाकी दाढ़ीको खास शाही हज्जामके हाथों मूँड़े जानेका सौभाग्य प्रदान किया जाये।"

अकबरने कहा, "माबदौलतको खेद है कि मुल्ला-दो-प्याज़ाकी यह इच्छा पूरी नहीं की जा सकेगी, क्योंकि नुसरत हज्जामका सिर आज ही क़लम हो जानेके लिए फ़रमान जारी हो जायगा।"

"माफ़ करें, जहाँपनाह," राजा वीरबलने कहा, "नुसरत हज्जामने सही कहा है। मैं उसकी विद्या सीखकर जन्नतसे हजूरके पुरखोंकी ख़बर ज़रूर लाऊँगा।"

बादशाह सलामत चौंके। "आप भी, राजा साहब! क्या आप भी इन मूर्खताओंमें विश्वास रखते हैं?"

"जी, जहाँपनाह, रखता तो नहीं था, मगर अब देखता हूँ कि रखे बिना काम नहीं चलेगा। हजूर जहाँपनाह मुझ नाचीज़पर विश्वास रखें और नुसरतकी कोई सज़ा देनेसे पहले मुझे स्वर्गसे वापस आ लेने दें!"

राजा मानसिंहने कहा, "राजा साहब, आप बड़े मज़ेदार राजा साहब हैं, इसलिए हम आपको अकेले-अकेले जन्नत तशरीफ़ नहीं ले जाने देंगे।"

वीरबल बोले, "मुझे कोई एतराज़ न होता, मगर अफ़सोसकी जन्नतसे अकेला वीरबल वापस आ सकता है, बाक़ी जो साथ जायेगा वहींपर रहने लगेगा!"

इसपर एक कहकहा लगा। राजा वीरबलने फिर कहा, "जहाँपनाह, क्या यह सेवक एकान्तमें कुछ निवेदन कर सकता है?"

"ज़रूर, ज़रूर," अकबरने कहा। "सज्जनों, माबदौलत एकान्त चाहते हैं।"

फ़ौरन् राजा वीरबलको छोड़कर सब लोग बादशाहके सामनेसे हटकर कक्षके बाहर चले गये। अब राजा वीरबलने कहा, "हजूर, जन्नतके रास्तेसे ही मैं रीवाँ पहुँच सकता हूँ। अगर धरतीके रास्तेसे गया, तो धर्मान्ध शत्रु ज़रूर मुझे खोज निकालेंगे और पहचान लेंगे। अगर मैं रीवाँके राजा साहबको आगरे न ले आऊँ, तो हजूरकी सेवामें नहीं आऊँगा, और सचमुच जन्नत जा पहुँचूँगा...मगर ऐसा नहीं होगा। पहले जो थोड़ा-बहुत अनिश्चय था, वह भी अब नहीं है।"

बहुत देर सलाह-मशवरा करनेके बाद आखिर अकबर बादशाहने राजा वीरबलको जन्नत जानेकी इजाज़त दे दी।

शामके समय तक सारे आगरे शहरमें यह विचित्र अफ़वाह फैल गई कि राजा वीरबलको नुसरत हज्जाम जन्नतमें भेज रहा है और वह वहाँसे बादशाहके पुरखोंका समाचार लायेंगे। सैकड़ों-हज़ारों विरोधोंके बावजूद, रोने-चिल्लाने और हँसी-ठट्ठेकी उपेक्षा करते हुए, राजा वीरबल एक विशेष चितापर बैठकर स्वर्ग सिधार गये।

×　　　　×　　　　×

तीन मासके बाद एक दिन सुबह ही सुबह, जब नुसरत हज्जाम अपने घरपर, बदनपर तेल मल-मल कर दण्ड पेल रहा था, उसकी बीवी भीतर आई और बोली, "मियाँ, दुनिया भिखारीसे बादशाह हो गई, मगर तुम यों-के-यों ही रहे। अगर इस तरह मौक़ोंको हाथसे जाने दिया करोगे, तो सारी उमर हजामत बनाते ही बीतेगी।"

हज्जामने दण्ड पेलना रोककर पूछा, "क्यों, क्या मुझे कोई बादशाहत का पैग़ाम देने आया है?"

"मुँह धो रखो," बीवीने कहा। "एक-एक सीढ़ी चढ़ा जाता है। जो आदमी जहाँ होता है खुदा उसे वहीं बरकत देता है। बाहर एक बाल खरीदने वाला खड़ा है। तुम तो रोज़ लोगोंकी हजामत मूँड़ते हो। ज़रा

बुलाकर तो पूछो कि क्या भाव लेता है। सड़कपर न झाड़े घरपर उठा लाये। आदमी तिजारतसे ही तरक्की कर सकता है!"

नुसरत मियाँ फ़ौरन् बाहरकी तरफ़ लपके, तो देखते क्या हैं कि एक बहुत बूढ़ा आदमी गलीमें आवाज़ लगा रहा है, "कोई बाल बेचो बाल!"

न जाने कम्बख्त सुअरके बाल खरीदता है या आदमी के? नुसरत मियाँने दो पल दाढ़ी खुजाई, इसके बाद आवाज़ दे ही तो बैठे: "ओ मियाँ बाल खरीदने वाले......ज़रा यहाँ आना तो।"

बूढ़ा जब पास आ गया, तो बोला, "अरे, आप तो शाही हज्जाम हैं!"

नुसरत मियाँने अकड़कर अपनी दाढ़ीपर हाथ फेरा। बोले, "कैसे पहचाना?"

"ए लो, सुनो इनकी बातें! मियाँ, तिजारत करते हैं, कोई घास नहीं बेचते। बाल खरीदनेका पेशा है, तो बाल काटने वालोंको नहीं पहचानेंगे? लाओ, है कुछ माल?" बूढ़ेने पूछा।

नुसरत मियाँने कहा, "इस वक्त तो नहीं है, मगर कलसे होने लगेंगे। तुम बताओ क्या सेरके भाव खरीदते हो?"

बूढ़ा खिलखिला कर हँसा! "मियाँ, मज़ाक करते हो! कहीं बाल भी अनाजकी तरह सेरोंके भाव खरीदे जाते हैं। हम तो छँटवा बाल खरीद करने वालोंमेंसे हैं, और एक-एक बालकी गिनकर क़ीमत देते हैं।"

हज्जामकी हालत सुनते ही बुरी हो गई। वह आश्चर्यसे बूढ़ेका मुँह ताकने लगे। "एक-एक बालकी क़ीमत! यह कैसे मुमकिन है?"

बूढ़ेने कहा, "मियाँ, तुम कुएँके मेंढक मालूम होते हो। तुम्हें क्या पता कि बालोंकी क्या क्या क़ीमतें होती हैं। अब यही लो, अगर तुम कहींसे बादशाह बाबरका एक बाल भी ला सको, तो बंदा यहीं खड़े-खड़े एक हज़ार टंका क़ीमत दे सकता है। किसी चीज़की क़ीमत होती ही इस बात की है कि वह कितनी मुश्किल और दिक्क़तसे मिल सकती है।"

उनकी बातें सुन-सुनकर आसपासके लोग इकट्ठे होने शुरू हो गये

थे, इसलिए नुसरत मियाँने बूढ़ेको भीतर आनेका इशारा किया और घरमें ले जाकर, एक चारपाईपर दरी बिछाकर उसे बैठाते हुए बोले, "भला, बड़े मियाँ, इतनी क़ीमत देकर बादशाह बाबरके बालका कोई करेगा क्या ?"

बीवी, जो दरवाजेकी ओटमें खड़ी सब सुन रही थी, मियाँकी इस बेबातकी हुज्जतपर मन-ही-मन पेंच ताव खा रही थी। वहींसे बुरका खींचते हुए बोली, "ए मियाँ, तुम्हें इन बातोंसे मतलब क्या, कोई कुछ भी करे। न हो बादशाह अकबर उसे छातीसे चिपकाकर ही सो जायें। मरहूम बादशाह बाबरकी पाक हस्तीकी कोई भी चीज़ उतनी ही पाक होगी।"

बूढ़ेने कहा, "मियाँ, माफ़ करना, तुमसे तुम्हारी बीवी ज्यादा अक़्-मन्द मालूम होती है।"

नुसरत मियाँ बीवीकी तरफ़ मुड़कर तुनकते हुए बोले, "ए, तुम जाकर बड़े मियाँके लिए शरबत बना लाओ...हाँ, तो बड़े मियाँ, अगर मैं बादशाह अकबरके बाल आपको ला दूँ, तो आप क्या क़ीमत देंगे ?"

बड़े मियाँ अपनी सफ़ेद दाढ़ीपर हाथ फेरते हुए बोले, "मियाँ, तुम तो समझकर भी नहीं समझे। जो चीज़ आसानीसे मिल सकती है, उसकी क़ीमत कुछ भी नहीं होती, जैसे पानी। फिर यह देखा जाता है कि चीज़ किस काममें आयेगी। बादशाह अकबरके बाल उनके पोते-पड़पोते अच्छी क़ीमत में ख़रीद सकते हैं, लेकिन तब तक तुम ज़िन्दा नहीं रहोगे। हाँ, अपने बालबच्चोंके लिए रख जाओ, तो रख जाओ। अच्छी वरासत रहेगी। मगर बादशाह अकबरकी मूँछका बाल ज़रूर कुछ क़ीमत रखता है। उनकी मूँछका एक बाल रखकर कोई भी महाजन लाखों रुपये कर्ज़ दे सकता है। मगर उसके लिए ज़रूरत इस बातकी है कि मूँछका बाल नोंचा हुआ होना चाहिए, उस्तरेसे कटा हुआ नहीं, क्योंकि कटा हुआ बाल किसी क़ीमतका नहीं होता।

यह सुनकर नुसरत मियाँ सिर खुजलाने लगे। इतने में बीवीने शरबत

का कटोरा लाकर थमाया और उन्होंने बड़े मियाँकी नज़र किया। फिर बोले, "बड़े मियाँ, यह तो बड़ी मुश्किलकी बात है। बादशाह अकबर हमेशा मूँछोंके उस्तरा ही लगवाते हैं। वह बाल नोचे जानेको बरदाश्त नहीं कर सकते !

बूढ़ा शरबत पीता हुआ बोला, "और अगर किसी दिन नोच डालो, तो तुम्हारा सिर धड़से अलग हो जाये। देखो, हुई न एक बालकी क़ीमत एक आदमीका सिर ?"

नुसरत मियाँने कहा, "मानता हूँ, बड़े मियाँ। आप जैसा अजीब सौदागर मैंने आज तक नहीं देखा था। और कैसे-कैसे बाल आप ख़रीद सकते हैं ?"

"देखो," बूढ़े मियाँ बोले, "वक्त-बक्तपर बालोंकी क़ीमत घटती बढ़ती रहती है। मिसालके लिए, अभी तीन दिन पहले जमुनाके किनारे दीवान-ख़ासकी मजलिस हुई थी। उसमें सुना है कि बादशाह सलामत रीवाँके राजापर इतने ख़फ़ा हुए कि अगर वह सामने होता, तो उल्टा लटकवा देते। मज़बूरन वह सिर्फ़ इतना कहकर रह गये : 'अगर वह हाथ जोड़े माब-दौलतके हज़ूरमें न आ खड़ा हुआ, तो माबदौलत उसकी मूँछें नोच डालेंगे, चाहे हमें उसके एक-एक बालके लिए अपने तख़्तका एक-एक हीरा क्यों न अदा करना पड़े' अब, बंदे ख़ुदाके, अक़्लपर ज़ोर देकर सोचो कि बादशाह सलामतके तख़्तके एक हीरेकी क़ीमत कम-से-कम एक लाख रुपये तो होगी ही। बस, समझ लो, अगर रीवाँके राजाकी मूँछका एक बाल भी नोचा जा सके, तो एक लाख रुपये उलटे हाथसे बादशाह सलामतसे वसूल किये जा सकते हैं। वसूल करनेका काम मेरा रहा, बाल तुम नोच लाओ। नक़द पचास हज़ार रुपये दूँगा। बोलो, हो तैयार ?"

भीतर नुसरत मियाँकी बीवी तो ख़ुशीके मारे ग़श खाकर गिर पड़ी। नुसरत हज्जामने बूढ़े मियाँके पैर पकड़ लिये। बोला, "बड़े मियाँ, अपना

पता बताते जाओ। आजसे एक हफ़्तेके अन्दर-अन्दर रीवाँके राजाकी मूँछका बाल नोचकर न ला दिया, तो मेरा नाम नुसरत हज्जाम नहीं।"

"अच्छी बात है", बड़े मियाँ खड़े होते हुए बोले। "तुम मुझे एक हफ्ते बाद शाही मसजिदकी सीढ़ियोंपर देखते रहना। किसी-न-किसी वक़्त वहीं मिल लूँगा। मैं घूमता-फिरता आदमी हूँ, कोई एक ठिकाना नहीं है।"

बड़े मियाँ तो चले गये, मगर नुसरत हज्जामने रीवाँके सफ़रकी तैयारी शुरू कर दी। अर्ज़ी लिखकर बादशाह सलामतसे गैरहाज़िरीकी माफ़ी तलब की और मिलनेपर दोपहर होते-न-होते रीवाँकी तरफ़ कूच बोल दिया।

तीसरे दिन रीवाँके राजाके सामने हाज़िर होकर नुसरत हज्जामने सिर झुकाया और निवेदन किया: "हज़ूर, हिन्दुस्तानके शहंशाहका खास नाई हूँ। गुलाबजल दाढ़ीपर लगाते हुए ज़रा चुटकी सख्त हो गई, तो खड़े-खड़े निकलवा दिया। महाराज, मेरे बराबर सफ़ाईसे हजामत बनाने वाला सारे हिन्दुस्तानमें मिल जाय, तो मूँछें मुड़ा दूँ। हजामत बनवानेवाला सो जाता है, और जब जागता है, तो देखता है कि दाढ़ी साफ़ हो गई है। सरकार क़दरदानी करें।"

बादशाह अकबरसे दण्डित हुआ व्यक्ति रीवाँके राजाके यहाँ शरण पाये, तो इसमें स्वयं राजा साहबकी ही बड़ाई थी। रीवाँके राजाने उसी दिन दाढ़ी बनवाई और नुसरतको राजकीय नाईका पद मिल गया।

अगले दिन हजामत बनाते-बनाते नुसरतकी नरम उँगलियोंने राजा रामचन्द्रकी लम्बी-लम्बी मूँछोंके दो-चार बालोंको भी रगड़ा और उनकी जड़में उसके नाखूनसे निकली हुई कोकीन लग गई। हजामत खत्म होने तक कौशलके प्रयोगसे उसके हाथ तीन बाल आये। नुसरतकी कुशल उँगलियोंने उन्हें खींच लिया और राजाको बिलकुल भी दर्द महसूस नहीं हुआ।

दूसरे दिनकी हजामतके वक्त़तक नुसरत रीवाँ छोड़ चुका था।

बात-चीतके एक सप्ताह बाद, अपने वादेके अनुसार, बड़े मियाँ शाही मसजिदकी सीढ़ियोंके पास मिले। नुसरतको देखते ही बड़ी उत्सुकतासे उन्होंने पूछा, "लाये ?"

"एक नहीं, तीन," नुसरतने प्रसन्नतासे फूलकर उत्तर दिया।

"देखो, भाई," बड़े मियाँने कहा। "इस वक्त़ तो मेरे पास पचास हज़ार रुपये हैं। इसलिए एक बाल दे दो। अगर बादशाह सलामतसे इसकी क़ीमत वसूल हो गई, तो बाक़ी दोनों भी मैं ले लूँगा। मंजूर है ?"

नुसरतको क्या इनकार हो सकता था। उसने पचास हज़ारको माले-ग़नीमत जाना। बड़े मियाँने बड़ी बारीक़ीसे बालका मुआयना किया और जब इतमीनान हो गया, तो पचास हज़ार रुपये नुसरतके हाथपर रखे। नुसरत हैरतके साथ इस विचित्र सौदेको सम्पन्न होता देखता रहा और जब बूढ़े मियाँ वहाँसे चले गये, तब कहीं जाकर उसे यक़ीन हुआ कि एक बाल पचास हज़ार रुपयेकी क़ीमतका हो सकता है।

× × ×

इसके एक सप्ताह बाद रीवाँके प्रमुख सरदारोंमें एक हलचल मच गई। जो भी सामन्त रीवाँके राजासे मिलने आता उसके मुँहपर एक संशयका भाव दिखाई पड़ता और वह रीवाँके राजाको विचित्र दृष्टिसे देखता। आखिर राजा रामचन्द्रसे न रहा गया और एक प्रमुख सरदारको बिदा करते समय उसने कहा, "क्या बात है, आज जो कोई मुझसे मिलता है, ऐसे मिलता है, जैसे मैं राजा रामचन्द्र नहीं, कोई और हूँ ?"

"श्रीमान् ही इस रहस्यको भलीभाँति जानते हैं," सामन्तने कहा, "किसे मालूम था कि महाराज रामचन्द्र रीवाँका प्रतापी राज्य बादशाह अकबरके यहाँ बन्धक रख सकते हैं ?"

"क्या कहा ?" राजा रामचन्द्रकी त्योरियाँ चढ़ गईं। "रीवाँका राज्य बन्धक रखा...मैंने ! असम्भव ! यह हमारा अपमान है।"

"क्षमा चाहता हूँ, सरदारोंके पास इसका प्रमाण है..."

"किन सरदारोंके पास है ?...तुम्हारे पास है ?" राजा रामचन्द्रने मूँछें चबाते हुए कहा।

"जी, श्रीमान्, इसी सेवकके पास है। बादशाह अकबरका राजदूत आज मन्त्रीजीके पास आया था। उसका कहना है कि राजा रामचन्द्र चार दिनके भीतर-भीतर रीवाँका राज्य ख़ाली कर दें क्योंकि जो रक़म श्रीमान्ने आगरेके बादशाहसे ली थी उसे वापस नहीं कर सके।"

"आप क्या बक रहे हैं !" राजा रामचन्द्रकी आँखें क्रोधसे लाल हो गईं। "कहीं आप सब लोगोंने मिलकर आज भाँग तो नहीं पी ली ?"

"श्रीमान्, यह ख़बर जल्दी ही सारे राज्योंमें फैल जायेगी और राजपूतोंके हौसले पस्त हो जायेंगे। उस समय सभी लोग भाँग पिये हुये होंगे यह नहीं समझा जा सकता।"

"उस राजदूतको हमारे सामने उपस्थित किया जाये", राजा रामचन्द्र ने कहा।

कुछ देर बाद ज़र्कबर्क पोशाकमें एक सफ़ेद दाढ़ी वाला बूढ़ा वहाँ आकर उपस्थित हो गया। पीछे कई सामन्त खड़े थे। राजा रामचन्द्रने कहा, "यह ग़प इन सरदारोंको आकर तुम्हींने सुनाई है कि हमने आगरेके बादशाहके यहाँ अपना राज्य गिरवी रख दिया है ?"

"जी, श्रीमान्," बूढ़ेने निवेदन किया। "यह सत्य मेरी ही वाणीसे प्रकट हुआ है।"

राजा रामचन्द्रकी उत्सुकता बढ़ गई। मन-ही-मन उबाल खाकर उसने पूछा, "तुम्हारे पास इसका प्रमाण है ?"

"जी, श्रीमान्," बूढ़ेने फिर विनयपूर्वक कहा, "इतना बड़ा प्रमाण जिसे कोई भी झुठला नहीं सकता। श्रीमान्ने तीन साल पहले आगरेकी सल्तनतसे एक ऐसी चीज़ ली थी, जिसकी क़ीमत रीवाँका राज्य है।

श्रीमान्ने वचन दिया था कि या तो तीन सालके भीतर-भीतर उस चीज़को वापस कर देंगे, नहीं तो रीवाँका राज्य बादशाह अकबरको सौंप देंगे…"

"सरासर झूठ है," राजा रामचन्द्रने तलवारकी मूठपर हाथ रखते हुए अपना क्रोध प्रदर्शित किया।

"कृपा करके मेरे सिरको एक राजदूतका सिर समझिए," बूढ़े व्यक्तिने राजा रामचन्द्रकी तलवारकी मूठपर नज़र गड़ाकर कहा। "मेरे पास प्रमाण है, और वह है श्रीमान्की मूँछका एक बाल, जिसे रीवाँके राज्यके बदले श्रीमान्ने आगे काम आनेके लिए बादशाह अकबरके हजूरमें बंधक रखा था।"

"ओह!" राजा रामचन्द्रने अपने कानोंपर हाथ रख लिये। "इतना बड़ा झूठ आज तक नहीं सुना था…"

लेकिन तब तक बूढ़ा एक नक्काशीदार सोनेकी खूबसूरत और क़ीमती डिबिया अपने कपड़ोंके भीतरसे निकाल चुका था। उसने उसे खोला और राजा रामचन्द्रके सामने रख दिया। "प्रमाण उपस्थित है, श्रीमान्, अपने राज्यके अच्छे-से-अच्छे पारखीको बुलाकर हजूर इस बालकी पहचान करवा सकते हैं।"

राजा रामचन्द्रने स्वयं डिबिया उठाकर उसमेंसे बालको निकाला। उसे एक ही नज़र देखकर उन्होंने कहा, "नहीं, कोई ज़रूरत नहीं है। हम इसे पहचान सकते हैं। यह हमारी ही मूँछका बाल है।"

"श्रीमान्की परख बेदाग़ है," बूढ़े व्यक्तिने कहा।

"लेकिन हमारे साथ चालाकी खेली गई है।"

"वह क्या चीज़ थी, जो हमने अपना राज्य बंधक रखकर ली थी?"

"सद्भावना।"

"क्या!" रीवाँनरेश आश्चर्यसे बोले।

"जी, श्रीमान्, तीन साल हुए आपने बादशाह अकबरको वचन दिया था कि आप जल्दीसे-जल्दी उनके द्वारा आपको दी हुई सद्भावनाको

लौटा देंगे। बादशाह अकबरने तीन साल तक उसकी प्रतीक्षा की, मगर आप आगरेके दरबारमें अपने राजकुमारोंको भेजते रहे, स्वयं कभी नहीं गये। आपको भय था कि शायद बादशाह अकबरके सामने आपको सिर झुकाना पड़े। भय और सद्भावना साथ-साथ नहीं रह सकते। बादशाह अकबर आपको अपने अधीन नहीं रखना चाहते। वह सारे हिन्दुस्तानको एक शक्तिके रूपमें देखना चाहते हैं। बिखरी हुई ताक़तोंमें एकको दूसरीसे मिलानेके लिए दो ही चीज़ें होती हैं: युद्ध या शान्ति। सन्देह और भय युद्धको जन्म देते हैं, सुविचार और सद्भावना शान्तिको। यदि युद्ध होगा, तो रीवाँका राज्य आगरेकी ताक़तके सामने नहीं बचेगा; शान्ति होगी तो आप आगरेके बादशाहके साथ तख्तपर बराबर-बराबर बैठेंगे, और ऐसा तभी होगा, जब आप आगरा जायेंगे—अपनी मूँछका बाल वापस लेनेके लिए आपको आगरे जाना ही होगा।"

राजा रामचन्द्रकी दृष्टि स्थिर थी। सहसा नज़रें नीची करके वह बोले, "और अगर हम न जायें?"

"तो आप रीवाँका राज्य हार बैठे हैं, यह बाल इसका प्रमाण होगा" बूढ़ेने कहा। "सारा रीवाँ राज्य आपको घृणाकी दृष्टिसे देखेगा।"

राजा रामचन्द्र खिलखिलाकर हँस पड़े "और जो हमें घृणाकी दृष्टिसे देखेगा वह इस ज़मानेके चाणक्य राजा बीरबलको नहीं पहचान जायेगा। वाह, राजा बीरबल, यह आपकी ही अक़्लका नमूना है...!"

सामन्तगण आश्चर्यसे यह व्यापार देख रहे थे। बीरबलका नाम सुनते ही उनकी आँखें फट गईं। राजा बीरबल सीधे हो गये और क्षणभरमें ही दोनों राजा एक दूसरेके गले लगे हुए थे।

कहनेकी आवश्यकता नहीं कि राजा बीरबल रीवाँके राजाको अपने साथ लेकर आगरा लौटे और बादशाह अकबरने उनका असाधारण सम्मान किया। लेकिन राजा बीरबल तो साथ-ही-साथ स्वर्गसे बूढ़ों वाली दाढ़ी भी बढ़ाये आये थे और बादशाहके पुरखोंका समाचार भी लाये थे।

किस प्रकार उन्होंने बादशाहको आकर बताया कि स्वर्गमें नाइयोंकी कमी है, बादशाहके पुरखोंके बाल बढ़े हुए हैं, और किस प्रकार बादशाहने यह सोचा कि नुसरतसे अच्छा हज्जाम स्वर्गमें उनके पुरखोंकी सेवा करनेके लिए नहीं मिल सकता—यद्यपि उसके जलनेके लिए जो चिता बनाई जायेगी वह किसी सुरंगके मुँहपर बनी हुई नहीं होगी—और किस प्रकार नुसरत हज्जामने बीरबलके पैरोंपर माथा टेककर, उनके पचास हज़ार रुपये सूद सहित लौटाकर अपनी जान बख्शी करवाई और मुल्ला-दो-प्याज़ाकी दाढ़ी मूँड़नेका सम्मान प्राप्त किया, ये सब बादशाह अकबर और राजा बीरबलकी लोकप्रिय जनश्रुतियोंकी बातें हैं।

• रामराज्यका सपना

आजसे पूरे दो सौ बरस पहलेकी बात है : ये ही दिन थे, यही समय था, इसी तरहकी राजनीतिक हलचलोंसे भारतके पूर्वका समुद्री प्रवेशद्वार अपने जर्जर ढाँचेमें आश्चर्यके साथ दरार पड़ती देख रहा था। इस दरारमें औरंगज़ेबके पौत्र और बंगालके सूबेदार आज़मशाहकी कृपासे गोरी जातिके पाखण्ड-पण्डितोंने कलकत्ता, गोविन्दपुर और छूतानटीकी जागीर पाकर उसमें अपने पैर जमा लिये थे।

ऐसे समयमें एक दिन कलकत्तामें बंगाल और बिहारके वाणिज्याधिपति जगत्सेठ अमीचन्दकी कोठीमें दैनिक चहल-पहल कुछ अधिक बढ़ गई थी। कारण था कुछ विशिष्ट राजपुरुषोंका असाधारण आदर-सत्कार और उसके लिए जगत्सेठके सेवकोंकी असामान्य तत्परता।

कोठीके एक बहुत बड़े कमरेमें दीवारके सहारे-सहारे चारों ओर मसनदें लगी हुई थीं और उनपर विभिन्न प्रकारके लोग बैठे थे। कोई ऐसा नहीं था, जिसकी कमरमें भवानी न हो और मूँछोंपर हाथ न हो। जो आयुदोषके कारण अभीतक मुच्छविहीन ही थे उनकी बात जाने दीजिये, किन्तु शेषको देखकर यह भली प्रकार कहा जा सकता था कि बंगालका वीररस वहाँ एकत्र हो गया था। इन सबकी केन्द्र-मूर्त्तियाँ थीं नवाब सिराजुद्दौलाके प्रधान सेनापति मीरजाफ़रके सहकारी दुर्लभराम और उनका नौजवान बेटा छतरसिंह, जिसकी चौड़ी छातीको देखकर कवि लोग हाथीके मस्तकसे उपमा चाहे न दें, पर उसकी भीगी हुई मसें उसके शरीरके भीतर उबलते हुए खूनका परिचय दे रही थीं।

दुर्लभरामके माथेपर सलवटें थीं, होठोंपर किसी अदृष्टके प्रति अवज्ञा और तिरस्कारकी भावना थी और हाथोंकी उँगलियोंमें कुछ-न-कुछ शीघ्र ही

कर डालनेकी चञ्चलता थी। जगत्सेट इतने बड़े कमरेके एक कोनेमें नितान्त अकिञ्चन बने एक शाल ओढ़े बैठे थे। सहायक सेनापति कह रहे थे :

"अन्यायका प्रतिकार न हो, तो फिर वही सिरपर चढ़ जाता है। आँखें मींचकर चलनेसे रास्ता समतल होता न कहीं देखा न सुना।"

जगत्सेठने एकबार शान्तिसे पलकें झपकीं, फिर बोले : "अन्यायका प्रतिकार तो होना ही चाहिए। यह सत्य जिस प्रकार भगवान् रामके युगमें प्रतिष्ठित था उसी प्रकार आज भी है। किन्तु न्याय क्या है और क्या नहीं, इसकी परिभाषा भगवान् रामके समयमें और थी, नवाब मन्सूरूलमुल्क सिराजुद्दौलाके समयमें और हो गई है...", उन्होंने एक क्षण रुककर उपस्थित लोगोंके चेहरोंको सूक्ष्मदृष्टिसे देखा और बातका प्रवाह रखते हुए कहा, "यही आप कहना चाहते हैं न, सेनापति जी?"

मेज़बानका इतना सहारा पाकर अतिथिका रोष उबल पड़ा। इतनी देरसे जो कुछ हृदयमें दबाये बैठे थे वह सब अनायास प्रवाहित हो चला।

"रामराज्य एक आदर्श राज्य था। तब जो कुछ सत्य था वही सत्य शाश्वत और चिरन्तन है। योग्यता और वीरताके कारण तब एक वानरतकको भगवान्की सेवाका अवसर था। आज सत्य नहीं बदल गया है उसका रूप कुरूप हो गया है। जो राजा हो जाये उसीकी आज्ञा मानना कर्त्तव्य हो गया है। परन्तु जहाँ वीरताका सम्मान नहीं, वह राज्य त्याग देने योग्य है।"

इस लंबी-चौड़ी नीति-वार्त्ताके भीतरसे कौन-सा सत्य प्रकट होने वाला है, इसका अभी कुछ पता नहीं था। उस सत्यको उभारकर धरातलपर लानेके उद्देश्यसे जगत्सेठने कहा, "किन्तु वीरताका सम्मान करने वालोंकी कमी अब भी नहीं है। पुत्र छतरसिंहने तलवारबाज़ोंमें इब्न-

मोहम्मदको पछाड़कर हम लोगोंका मुँह उज्ज्वल किया है, इसके लिए हम उसे बधाई देते हैं और वचन देते हैं कि पुरस्कार भी देंगे। आज सारे कलकत्तेमें छतरसिहकी चर्चा है। वीरताका सम्मान न होता, तो यह सब कैसे होता ?"

अब तक छतरसिंह चुप था। अब वह बोला, "वीरता म्यानमें बन्द पड़ी रहे, तो उससे क्या होता है, चाचा जी ? नवाब हजूरवालाने इब्न-मोहम्मदको दूसरे सहायक सेनापतिका पद दिया है। जीता हुआ खिलाड़ी मुँह ताकता रहे और हारा हुआ राजसेनामें सेनापतिका पद पाये, इससे बढ़कर अन्याय और क्या होगा ?"

तब अतिथियोंके साथ आये हुए एक सज्जन बोल उठे, "मुसलमान भाई-भाई हैं..."

दुर्लभराम चौंके। प्रश्नको यह रूप देने का मंशा उनका नहीं था। हो सकता है हृदयमें कहीं यह बात चुभ रही हो, लेकिन ऊपरका मन उसे नहीं जानता था। बोले, "हिन्दू भी मुसलमानोंके भाई हैं..."

"लेकिन सौतेले", जिसकी बात बीचमें कट गई थी उसने फिर उसका सिरा पकड़ते हुए कहा। "म्लेच्छोंकी सेवा स्वीकार करके हम स्वयं म्लेछ बन गये हैं। इतनेपर ही बस नहीं है। दिल्लीसे लेकर बंगाल तक मुहम्मद साहबके चेलोंने रामकी सन्तानका जीना दूभर कर रखा है।"

इस बातपर इस छोटी-सी घरेलू सभामें अकस्मात् असाधारण चुप्पी छा गई। मानसिक प्रतिरोधको प्रकट करने आकर सम्भव है दुर्लभरामको भी यह गुमान न हो कि बात राजभक्तिकी सीमा पार कर जायेगी। यही नहीं, उस सीमाके समाप्त होते ही देशद्रोहीकी जो सीमा है उसमें भी काफी दूर तक बात पहुँच गई थी। दुर्लभरामने कहा :

"मैं राजद्रोह की गंध पा रहा हूँ।"

"मुसलमानोंको इस देशसे निकाल बाहर करनेपर ही रामराज्य

स्थापित हो सकता है, इस छोटेसे तथ्यको प्रकट करना भी यदि राजद्रोह है, तो म्लेच्छोंकी तरह मांस-मदिराका सेवन करना ही शायद सबसे बड़ी राजभक्ति गिनी जाने लगे।"

दुर्लभराम उठ खड़े हुए। "मैं इस पापाचारकी बातको सुननेसे पहले उठ जाना ही अच्छा समझता हूँ।"

जगत्सेठ मिची-मिची आखोंसे सब कुछ देखते-सुनते रहे। राजभक्ति और राजद्रोहके इतने महत्त्वपूर्ण विषयपर उन्होंने अपनी कोई भी सम्मति प्रकट नहीं की। जब दुर्लभरामको लेकर सारी सभा उखड़ने लगी, तो उन्होंने कहा :

"सम्मानित अतिथियोंके लिए भोजन और विश्रामका प्रबन्ध झीलके किनारे वाली कोठीमें है। बाहर सेवक तैयार खड़े हैं। छतरसिंह, मुझे तुम्हारे पुरस्कारके बारेमें दो-चार बातें करनी हैं, इसलिए चाचाका अनुरोध स्वीकार करके तुम्हें यहीं रुक जाना है।"

छतरसिंह और जगत्सेठ अमीचन्दको छोड़कर सारा कक्ष उसी समय खाली हो गया। तब एकान्त पाकर जगत्सेठने कहा : "छतरसिंह, तुम्हारी चाचीने तुम्हें बहुत दिनोंसे नहीं देखा है। क्या तुम्हें अपनी चाचीसे मिलकर प्रसन्नता नहीं होगी?"

"मेरे मुँहकी बात आपने छीन ली है," छतरसिंहने कहा। "वास्तवमें चाचीजीके दर्शनोंकी कामना ही मुझे यहाँ तक खींच लाई है। नहीं तो मुर्शिदाबादमें अब भी रंगरलियोंकी कमी नहीं है।"

जगत्सेठ मुसकराये। दुशाला सँभलकर उनके कन्धोंपर आ गया और पैरोंमें हल्की ज़रीकी खड़ाऊँ डालनेके लिए उन्होंने उन्हें नीचे लटकाया। फिर उठते हुए बोले, "इधर तुम्हारी चाचीकी अवस्था ही दूसरी है। इस बार तुमसे मिलकर वह तुम्हें वापस आने देंगी, इसमें सन्देह ही है।"

उसी समय उस बड़े कमरे का बाहर जाने वाला दरवाज़ा खुला और

एक मनुष्यने भीतर प्रवेश किया। उसकी ओर उत्सुकतासे ताककर जगत् सेठने अपने लटकते हुए गालोंको ऊपर उठाया और बोले, "क्या है ?"

हाथ जोड़कर भृत्यने निवेदन किया, "दो फिरंगी आपसे भेंट करना चाहते हैं। मैंने उन्हें बहुत देरसे वाटिकामें बैठा रखा है।"

सुनते ही जगत्सेठकी आँखें अलक्ष्य भावसे चमक उठीं। उन्होंने कहा, "अच्छा, अच्छा। तुम इन्हें लेकर ज़नानखानेमें जाओ। मैं देखता हूँ उन लोगोंको मुझसे क्या काम है। ये लोग फेरी वालोंकी तरह सुबहसे लेकर शाम तक अपने व्यापारकी धुनमें बस चक्कर ही काटा करते हैं।"

छतरसिंहको उसकी चाची ही रोक रखना चाहती हो यह बात नहीं थी। वहाँ एक और भी आकर्षण था, जो स्वयं उस वीर सिपाहीको रुक जानेके लिए कम प्रेरित नहीं करता था। कल्पना ही कल्पनामें उसने सोचा– शायद जगत्सेठकी कन्या अब तो बहुत बड़ी हो गई होगी। उसे देखनेके लिए तो वह मुर्शिदाबादसे रोज़ कलकत्ता आ सकता है। लेकिन कौन आता है और कौन आने देता है ?

जगत्सेठका अन्तःपुर छोटा नहीं था। कमोबेश सौ स्त्रियोंका परिवार था। इन सबमें कितनी कुलवधुएँ थीं और कितनी दासियाँ थीं, इसका कुछ ठीक अन्दाज़ न होनेपर भी छतरसिंहको सौन्दर्यका नया-से-नया रूप वहाँपर दिखाई पड़ रहा था। कौन जगत्सेठकी साली लगती थी और कौन भानजी-भतीजी इसका कुछ हिसाब न था। लम्बे-चौड़े दालानों, बग़ीचों और बड़े-बड़े कमरोंके बीचमेंसे होकर जब वह गुज़रा, तो सारी विगत स्मृतियाँ लौट-लौटकर उसके मस्तिष्कको छूने लगीं।

फिर चाचीका कक्ष आया, जहाँ एक बड़े पलंगपर राजरानियोंकी तरह इस विस्तीर्ण गृहकी देवी विश्राम कर रही थी। दो दासियाँ पैर दबाने में लगी थीं और दो पंखा झल रही थीं। दो-तीन कुलवधुएँ कुछ सीना-पिरोना लिये बैठी थीं। सेवकने द्वारपर रुककर सूचना दी : "सहायक

सेनापति दुर्लभरामके सुपुत्र छतरसिंह पधारे हैं। अनुमति हो, तो भीतर ले आऊँ !"

कुछ देर उत्तरकी प्रतीक्षा करनेके बाद भीतरसे किसी नारी-कण्ठने कहा, "अनुमति है। नहीं भी होगी, तो क्या ये लौटकर थोड़े ही जायेंगे ?"

सेवकने मुस्कराकर मार्ग छोड़ दिया और छतरसिंह कक्षके भीतर चला गया। पलंगपर पड़ी स्त्रीने तनिक उठंगकर कहा, "आओ बेटा ! इतने दिनों बाद आये हो और ऐसे आ गये, जैसे अचानक वर्षा आ जाती है। बैठो।"

बैठते-बैठते छतरसिंहने प्रणाम किया और जुड़े हुए हाथोंके बीचसे उसने कक्षके भीतर एक विहङ्गम दृष्टि डाली। कुलवधुएँ सीना-पिरोना अपनी आँखोंके और निकट ले आई थीं। दासियाँ अपने कामोंमें और भी अधिक तीव्रताके साथ प्रवृत्त हो गई थीं। केवल एक लड़की एक खुली हुई खिड़कीमें ज्यों-की-त्यों बैठी थी। खिड़कीके एक पल्लेसे पीठ टिकाकर उसने दूसरे पल्लेसे पैरोंके पंजे टिका रखे थे और उसके मुड़े घुटनोंपर एक किताब खुली हुई थी। प्रणामके जुड़े हुए हाथ नीचे गिराकर छतरसिंह कुछ अधिक देर उसकी ओर देखनेका लोभ-संवरण नहीं कर सका।

चाचीने कहा, "इस नटखटको क्या देखता है, बेटा ! यह तो पुरुष होती और इसे कोई बड़ा-सा ओहदा नवाब साहबके यहाँ मिल जाता, तो ठीक था। जानते हो क्या-क्या करती रहती है ! अब फिरंगियोंकी भाषा सीखनेकी धुन सवार हुई है !"

लड़कीने अपनी लम्बी-लम्बी पलकें ऊपर उठाईं और तमककर बोली "टिड्डी दलकी तरह ये फिरंगी जो हमारी खेतियोंपर मँडरा रहे हैं, माँ जी, सो खेती चाटनेकी कैसी-कैसी तरकीबें इनकी भाषामें लिखी हैं यह सब ए बी सी डी पढ़कर ही तो पता लगेगा न। सुना है इंगलिस्तान

में इनके खेतोंमें अनाज नहीं लोहा पैदा होता है, इसीलिए दूसरोंकी रोटी छीननेको सात समुन्दर पार करके ये लोग हिन्दुस्तानमें आये हैं..."

"लो, और सुनो !" चाचीने कहा, "यह सब इसने सुना है ! मैं कहती हूँ यह सब इसने इन निगोड़ी किताबोंमें पढ़ा है। थोड़े दिन और पढ़ेगी, तो इसके लिए यहीं घरके भीतर एक कचहरी खोलनी पड़ेगी, और, बेटा, इन न्यायाधीश्वरीके सम्मुख अपराधियोंको पकड़-पकड़कर तुम लाया करोगे।"

छतरसिंह मुसकरा उठा। वह बोला, "सबसे पहला अपराधी तो मैं ही हूँ, चाची जी।"

तब उन कुलवधुओंमेंसे एकने कहा, "तुम कैसे अपराधी हो, लाला ?"

अब छतरसिंहके मुँहसे झोंकमें निकले शब्दोंका गूढ़ अर्थ लगाकर सभी हल्की-हल्की मुसकराहटके साथ उसकी ओर देखने लगे, तो वह लज्जित होते हुए बोला, "सिराजुद्दौलाकी दरबारी प्रतियोगितामें मैं एक अपराध आज कर आया हूँ।"

इस बातपर लड़की झटसे बोल उठी, "मुझे मालूम है, माँ जी, नवाब हजूरके दरबारमें इन्होंने एक मक्खी मार दी थी।"

इसपर जो कहकहा उस स्थानपर उपस्थित नारी-समाजमें लगा, तो युवकको मुँह छिपानेके लिए जगह नहीं मिली। उसने झेंपकर कहा, "माँ जी, युग बदल गया है। काग़ज़पर अक्षरोंके कीड़े-मकोड़े मारने वालोंके सामने सचमुचकी मक्खियाँ मारने वालोंकी पूछ कहाँ।"

इसपर फिर एक सुसभ्य ठहाका लगा और खिड़कीपर बैठी लड़कीने झल्लाकर किताब बन्द कर दी। फिर उसने कहा, "हूँ! ये ही सचमुचकी मक्खियाँ मार-मारकर तो यहाँ रामराज्य स्थापित होगा !"

युवक चौंक पड़ा। "यह रामराज्यकी बात यहाँ तक कैसे आई ?"

पलंग पर पड़ी चाचीने कहा, "इसपर आश्चर्य न करो, बेटा। जगत्-

सेठके घरकी दीवारोंके भी कान होते हैं। अन्तर केवल इतना ही है कि बात घरकी घरमें ही रहती है, बाहर नहीं जा पाती।"

"बात भी तो झूठी नहीं है," एक कुलवधूने कहा।

कौन बोला यह देखनेके लिए युवकने गरदन फेरी, किन्तु कुछ मालूम न हो सका। उसने कहा, "माँ जी, अब म्लेच्छोंका राज्य असहनीय हो उठा है। सरकारी नौकरियोंमें, वाणिज्य-व्यापारमें, जीवनके हर क्षेत्रमें इन-जैसा पक्षपाती देखनेको नहीं मिला। हम भारतवर्षमें इतने हिन्दू हैं, क्या प्रयत्न करनेपर हम यहाँ रामराज्य स्थापित नहीं कर सकते?"

शायद माँ जी कुछ कहतीं, लेकिन उनकी सुपुत्री उनसे बहुत अधिक मुखर थी। फिरंगियोंकी भाषा पढ़-पढ़कर उसने शायद सबसे पहला गुण यही सीखा था। वह तुरंत बोल उठी, "नहीं।"

इसपर उस बड़े कक्षमें उपस्थित प्रत्येक मानव-प्राणीकी दृष्टि उस छोकरीपर पड़ गई। सबकी आँखोंमें आश्चर्य था। उसकी माँने कहा, "यह क्या तेरी कोई नई वाचालता है, री?"

"नहीं, माँ जी" लड़कीने कहा। "सम्राट् अशोक और विक्रमादित्य का युग ही जब हम निकटसे वापस नहीं ला सकते, तो दूरगामी रामका युग ही कैसे वापस आ सकता है? संघर्षसे बचकर निकल जानेकी चाहमें हम अतीतको वापस लाना चाहते हैं, लेकिन यह भूल जाते हैं कि संघर्ष तो अतीतमें भी था। लङ्काका महायुद्ध, कौरव-पाण्डवोंका महाभारत, कलिङ्गकी महाहिंसा और सिकन्दर, महमूदके सर्वनाशी आक्रमणोंको फिरसे लाना हो, तो पुराना युग वापस लाओ। राईमें सरसों मिलाकर तेल निकल जानेके बाद दोनोंको अलग करना आता हो, तो निश्चय ही भारतवर्ष से मुसलमान निकल जायेंगे। फिर प्रत्येक असम्भव बात संभव हो जायगी और आश्चर्य नहीं कि रामराज्य भी वापस आ जाय! पर, मां जी, कहीं ऐसा न हो कि इन दोनों तेलोंको अलग-अलग करनेके चक्करमें कोई तीसरा बीचमें आकर सारा तेल ही बिखरा दे।"

विद्यालय-जैसा वातावरण वहाँ क्षणभरमें छा गया। सबको लगा मानो कोई बड़ा पण्डित कक्षामें उपस्थित विद्यार्थियोंको इतिहासका पाठ पढ़ा रहा हो। पलंग पर अधलेटी नारीने एक लंबी सांस खींचकर लड़की को सम्बोधन करते हुए कहा, "छोकरी, कलसे यह पोथी-पुस्तक उठाकर रख दे, नहीं तो जगत्सेठसे कहकर मैं तुझे इस अन्तःपुरसे निकाल बाहर करूँगी। तेरे सामने सबको ऐसा लगता है, जैसे दुधमुँही बच्चियाँ हों..."

उसी समय बाहरसे पदचाप सुनाई दिये और सेवक-सी आवाज़ सुनाई दी : "जगत्सेठ भैया छतरसिंहको बुला रहे हैं।"

छतरसिंह तुरन्त उठ खड़ा हुआ। उसने श्रद्धासे चाचीके पैर छुए और फिर दर्शन करनेकी कामना प्रकट करते हुए एक छिपी हुई नज़र उस ओर डाली, जहाँ फिर पोथी खुल चुकी थी। क्षणभरको होंठोंकी झीनी-झीनी मुसकराहट लिये हुई पुस्तकवाली दृष्टि उठी और अदृश्य रूपसे होंठोंके हास्यका विस्तार करके फिर जहाँकी-तहाँ लग गई।

युवक छतरसिंह अनमना मन लिये हुए वहाँसे वापस लौट चला। वह बहुत कुछ सोच चुका था, बहुत कुछ सोच रहा था और बहुत कुछ सोचनेको उसके पास शेष था। बस, उस समय उसके मनकी स्थिति लगभग यही थी।

बड़े कक्षमें बहुतेरी मसनदोंकी खाली पंक्तियोंके पार उसी कोने वाली मसनदपर जगत्सेठ उठँगकर लेटे हुए थे। छतरसिंह कमरेमें आ भी गया और जाकर उनके सामने बैठ भी गया। फिर भी उनकी बन्द आँखें नहीं खुलीं। युवक प्रतीक्षा करने लगा। कुछ देरमें आँखें बन्द रखे-रखे ही जगत्सेठने कहा :

"बेटा, ऐसा प्रतीत होता है, जैसे मुझे भविष्य-दर्शन हो रहा हो। मेरे सम्मुख भविष्यका चित्र इस तरह खिंच रहा है, जैसे मैं अपनी सूरत दर्पणमें देखता हूँ।"

"कैसा चित्र है, चाचाजी?" युवक छतरसिंहने पूछा।

जगत्सेठकी आँखें बन्द-की-बन्द ही रहीं। वह बोले, "मुझे लगता है कि जिस अन्तःपुरमें तुम अब होकर आये हो, उसपर असंख्य सैनिकोंका आक्रमण हो रहा है।"

"ऐं!" छतरसिंह आश्चर्यके उद्रेकसे चमककर बोला। 'यह आप क्या सोच रहे हैं!"

"मैं नहीं सोच रहा हूँ," जगत्सेठने कहा, "मुझे भविष्य-दर्शन हो रहा है। मुझे लगता है कि असंख्य सैनिक, शायद नवाब सिराजके सैनिक मेरे मानसम्मानको मिट्टीमें मिलानेके लिए मेरे अन्तःपुरमें घुसे जा रहे हैं। रक्षाका प्रबन्ध भी कम नहीं है। शायद मुख्य प्रवेशद्वारपर एक सजीला, लड़ाका सेनापति मेरी रक्षा करनेके लिए दोनों हाथोंमें तलवार लिये खड़ा है। जबतक वह वहाँ खड़ा है, तबतक इससे आगेका चित्र मेरे सामने स्पष्ट नहीं होता...न जाने क्यों? जानते हो वह सेनापति कौन है?"

"कौन है?" जैसे प्रतिध्वनिमें किसीने पूछा हो।

"तुम!" जगत्सेठने मानो बेचैनीसे सिर हिलाते हुए कहा, "तुम्हें इस रक्षाभारसे मुक्त करके मैं आगेके चित्रकी यथार्थ कल्पना नहीं कर पाता।"

"लेकिन क्यों, चाचा जी?" युवकने घबराकर पूछा। "आप ऐसा निरर्थक स्वप्न क्यों देख रहे हैं?"

"स्वप्न नहीं," जगत्सेठने कहा। "यथार्थकी कल्पना है। पहले भी लोगोंको इस तरहका भविष्य-दर्शन करते सुना है। हो सकता है इसका कारण मेरी समझमें आ गया हो।"

"अब आपकी बात समझमें आ रही है, चाचाजी," युवकने कहा, "कोई-न-कोई कारण होना ही चाहिए। मुझे बताइये वह क्या है?"

जगत्सेठकी आँखें खुल गईं। उनमें किसी उत्तेजनाके कारण लाली छा गई मालूम पड़ती थी। तकियेपर रखे उनके हाथकी उँगलियोंने अलक्ष्य

रूपसे तकियेपर २ का चिह्न बनाया और फिर उसके ऊपर वह उँगली घूम-घूमकर छः बिन्दियाँ बना गई। उन्होंने किंचित् मुसकराकर युवककी ओर देखा, फिर तुरन्त ही गम्भीर होकर बोले, "मैं वङ्ग-भूमिपर फिरसे रामराज्य की स्थापनाका निश्चय कर चुका हूँ। मेरा सारा धन इस काममें होम हो जाये, तो भी मैं अपना पग पीछे नहीं हटाऊँगा। हिन्दू प्रजाका कल्याण अब इसीमें है कि समस्त भारतवर्षमें रामराज्यकी पुनःस्थापना हो। नहीं तो जीना व्यर्थ है और इस जीवनको धिक्कार है।"

"लेकिन यह सब होगा कैसे ?" युवकके मुखपर अब चिन्ताके चिह्न स्पष्ट रूपसे परिलक्षित होने लगे।

"कैसे होगा ?" जगत्सेठने गरदन नीचे कर ली। "जिस विश्वासघात, क्रूरता, दमन और युद्धसे कलियुगने सतयुगपर विजय पाई है, उन्हीं मार्गोंमें होकर गुज़रना होगा। राजनीतिके बन्धन राजनीतिसे कटेंगे। शत्रुकी नीतिसे ही शत्रुपर विजय प्राप्त की जायेगी। बेटा, अपना मन टटोलकर बताओ तो सही उसमें कितना दम है ?"

युवक सब कुछ सुनकर सन्न रह गया। रामराज्यकी कल्पना उसके मस्तिष्कमें भी मौजूद थी, लेकिन यह योजना इतनी जल्दी बन जायेगी, इसका विचार तक उसे नहीं था। किन्तु जिस वीरताने इब्नमोहम्मदको सरे दरबार हराया था, वह आड़े वक्तमें सिर उठाकर सामने खड़ी हो गई। उसने उत्साहसे कहा, "मर मिटनेकी साध पूरी हो जायेगी, तो बादमें मनके टटोलने वालोंकी भी कमी नहीं रहेगी, चाचाजी।"

"तब रास्ता साफ़ है," जगत्सेठने कहा। "व्यापारका लोभी फिरंगी अपना जन-बल और धन-बल हमें देनेको तैयार है। तुम्हारे ऊपर तीन काम हैं : अपने पिता दुर्लभरामको तैयार करना, उनके द्वारा प्रधान सेनापति मीर जाफ़रको बंगालकी गद्दीका लोभ दिलाकर फोड़ लेना, और सबके बाद इस अन्तःपुरके मुख्य द्वारकी दलबल सहित रखवाली करना।

तीनों काम कठिन हैं, ऊपरसे देखनेपर असम्भव हैं, लेकिन करने योग्य हैं। रामराज्य लानेके लिए यह सब आवश्यक है।"

युवकको ऐसा प्रतीत हुआ, जैसे पास ही से कोई गहरी साँस खींच रहा हो। किन्तु इधर-उधर नज़रें पसारकर देखनेपर कुछ नहीं दिखाई दिया। फिर उसने उस कमरेकी दीवारोंपर एक नज़र डाली। उसके मस्तिष्कपर कुछ शब्द उभर आये। 'इन दीवारोंके कान हैं!'

वह आगेकी ओर झुक गया। जगत्‌सेठके कानोंमें उसने कहा, "चाचाजी, चिन्ता न कीजिये। तीनों काम होंगे। उसके बाद क्या होगा यह आप सोच लें, कहीं ऐसा न हो..."

जगत्‌सेट मुसकराये। "घबराओ मत। घबरानेसे आगे बढ़नेमें रुकावट आती है। हमारी योजना पक्की है। फिरंगीको व्यापारकी सुविधाएँ चाहिए। हिन्दुओंका राज्य स्थापित होनेपर उन्हें व्यापारकी सुविधाएँ मिलेंगी, किन्तु वैसी ही सुविधाएँ और सबको भी मिलेंगी और हमारे देशका व्यापार नहीं कटेगा। मीरजाफ़रको राजगद्दी मिलेगी, लेकिन राजकोषके रूपमें उसके पाये नहीं होंगे। फिरंगीसे हमें नक़द बीस लाख रुपया मिलेगा...बीस लाख और मेरा समस्त धन मिलाकर यहाँ हिन्दुओंकी एक ऐसी अखण्ड प्रभुता स्थापित हो जायेगी, कि मराठोंको हमारे साथ मिलना पड़ेगा। इसके बाद, बेटा, मैं चाहता हूँ कि तुम्हारे प्रयत्नोंका जो ऋण मुझपर चढ़ जायेगा और पहलेसे ही कन्याका जो ऋण मेरी छातीपर रखा है उन दोनोंसे मैं एक साथ ही मुक्त हो जाऊँगा।"

इतने सारे चित्रोंने मिलकर, जिसमें विकृत और उज्ज्वल सभी प्रकारके चित्र थे, युवककी कल्पनापर एक ऐसा विशाल चित्रागार उपस्थित कर दिया, जिससे मुक्त होना शायद किसी भी युवकके लिए सम्भव न होता। उसने जगत्‌सेठके चरणोंमें सिर झुकाया।

दुर्लभराम पहले तो बेटेकी बात सुनकर तड़का-भड़का, लेकिन राम-राज्यका सुनहरा स्वप्न उसके भीतर भी हिलोरें ले रहा था। ऊपरसे

कर्मठ पुत्रकी तत्परता और हठ उसे विचलित करने लगे। आखिरकार उसने अपनी स्वीकृति दे दी।

मीरज़ाफर इस प्रस्तावको सुनकर हो हो करके हँसा। ख़ुदा जब देता है छप्पर फाड़कर देता है। कितने दिनोंसे बंगालकी गद्दी उसके हृदयके भीतर बैठी हुई थी! आज अवसर मिला, तो उसे छोड़ना नितान्त मूर्खता लगी। वह विश्वासघातपर उतारू हो गया।

फिरङ्गी कमेटीके अध्यक्ष क्लाइव और सेनापति वाट्सने अपने हस्ताक्षरोंसे सन्धिपत्र तैयार किये और सिराजुद्दौलाके अन्तिम संस्कारपर सबके हिस्सोंकी मोहर लग गई! सन् १८५७ ई० के भारतीय स्वतन्त्रता संग्रामसे ठीक सौ साल पहले प्लासीके मैदानमें बंगालके नवाब सिराजुद्दौलाके भाग्यका फैसला हो गया। ऐन समयपर पैंतालीस हज़ार सेना अपने साथ लेकर प्रधान सेनापति मीरजाफ़र फिरंगियोंकी तरफ़ चला गया। इसके बाद मुर्शिदाबादकी सड़कोंपर फिरंगियोंके बूट भारत माँकी छातीको रौंदते हुए चलने लगे। शेष घटना इसके बाद की है।

जगत्सेठ अमीचन्दकी कोठीके बाहर लगभग पाँच सौ सैनिकोंके साथ युवक छतरसिंहका पहरा था। उसकी आँखोंके सामने-सामने बंगालकी राजधानीका सुहाग लुट चुका था। कलकत्तामें भी फिरंगियोंने कम उत्पात नहीं मचाया था। और अब गोरी फ़ौजके सैनिक संगीन चढ़ाये दलबन्द पागल कुत्तोंकी तरह घूम रहे थे।

जगत्सेठको उसका हिस्सा देनेके लिए क्लाइव और स्क्राफ़्टन साहब दलबल सहित उनकी कोठीपर पधारे। वही युवक, जो जगत्सेठके अन्तःपुरकी रक्षा करनेके लिए सन्नद्ध हुआ था, चुपचाप सहस्रोंकी संख्यामें फिरंगी बूटोंको कोठीके भीतर जाते देखता रहा। वे तो रक्षक थे, उनसे सुरक्षा कैसी!

वही बड़ा कक्ष था। वे ही मनसदें थीं, वे ही दीवारें थीं। क्लाइवके ठीक सामने जगत्सेठ उसी मुद्रासे दुशाला ओढ़े बैठे थे। उनके मुखपर

प्रसन्नताकी तरंगें मनमें उमंगोंके साथ नाच रही थीं। अब रामराज्य आ गया है!

क्लाइवने मुसकराकर सन्धिपत्र पढ़ा। इसमें बीस लाख रुपयेकी कोई चर्चा नहीं थी, हिन्दुओंके रामराज्यकी स्थापनाकी कोई बात नहीं थी। मीरजाफ़रको बंगालका नवाब बनाकर फिरंगियोंसे क्या-क्या बच रहेगा इसका कोई हवाला नहीं था।

जगत्सेठ काँपते हुए उठ खड़े हुए। "यह क्या है! यह वह सन्धि-पत्र नहीं है, जो मुझे दिखाया गया था। वह लाल काग़ज़पर था।"

"और यह सफ़ेद काग़ज़पर है, यही कहना चाहते हैं न?" क्लाइवने कहा। "लेकिन, सेठ साहब, लाल रंग अशान्ति और युद्धका रंग होता है और सफ़ेद रंग शान्ति और सन्धिका रंग होता है। हम-जैसे शान्तिके रक्षक अपने साथ लाल रंग लिये कैसे घूम सकते हैं? स्क्राफ़टन साहब, शायद सेठ साहबको कुछ भ्रम हो गया है। सच्ची बात बता दो ना।"

स्क्राफ़टन साहबने खँखारकर गला साफ़ किया। "जगत्सेठ, लाल रंग वाला सन्धिपत्र जाली था और सफ़ेद रंग वाला असली है। बस, इतना-सा फ़रक है। खेद है कि आपके नाम इसमें एक कौड़ी तक नहीं है।"

जगत्सेठके पैर लड़खड़ा गये। वह धड़ामसे ज़मीनपर गिर पड़े। फिरंगी सरदार कुछ क्षणों तक हक्के-बक्के खड़े देखते रहे। फिर उन्होंने कमरेमें चारों ओर मूल्यवान वस्तुओंपर निगाह जमाई और साथ ही एक बड़े ज़ोरकी दिल दहला देने वाली चीख़ किसी ओरसे आकर कमरेमें उपस्थित सभी लोगोंके दिलोंको कम्पायमान कर गई। फिर जैसे सचेत होकर क्लाइवने चिल्लाते हुए अपने सैनिकोंसे कहा: "लूट लो!"

और सबसे बड़ी लूटका माल तो अन्तःपुरोंमें होता है...

ड्योढ़ीपर छतरसिंह मूँछोंपर ताव देता हुआ कोठीकी रक्षा कर रहा था। चीख़की आवाज़ उसके कानों तक पहुँची और वह हक्का-बक्का-सा

खड़ा देखता रहा। किन्तु शीघ्र ही उसे चेतना आई और वह अपने सैनिकोंके एक दलके साथ भीतरकी ओर भागा।

फिरंगी सैनिकोंसे मुठभेड़ हुई और उसके साथी पीछे छूटते चले गये। वह दोनों हाथोंसे तलवार घुमाता हुआ सीधा अन्तःपुरमें पहुँच गया। लेकिन वहाँ एक और ही दृश्य उसकी दृष्टिकी प्रतीक्षा कर रहा था।

जगत्सेठके अन्तःपुरकी समस्त कुलवधुओंके शरीर भूलुंठित पड़े थे। किसीका सिर ही धड़से अलग था, तो किसीकी छातीमें कटार घुसी हुई अपना दस्ता ऊपर उठाये हँस रही थी। फिरंगियोंके हाथ सबकुछ लगा था, किन्तु भारतीय ललनाओंका सतीत्व उनकी पहुँचके परे था।

युवकके नेत्र फट गये। उसने पागलोंकी भाँति चारों ओर देखा। फिर उसके पैर चाचीके उसी कक्षकी ओर बढ़े, जहाँ वह पहले एक बार आया था और फिर कई बार आ चुका था।

कक्ष खाली था। केवल उसी खुली खिड़कीपर, एक पल्लेसे पीठ टिकाकर दूसरे पल्लेसे पैरोंके पंजे टिकाये, घुटनोंपर असहायकी भाँति हाथ रखे एक लड़की बैठी थी। यह लड़की खूब जानी-पहचानी थी। उसने उसके पास पहुँचकर उसका हाथ पकड़कर हिलाया, किन्तु वह निर्जीव स्तम्भ-सा लटक गया। उसके उन्नत वक्षःस्थलपर भी कटारका एक दस्ता हँस रहा था। उसके होंठ फड़फड़ाये, युवकने अपने कान पास ले जाकर सुना :

"अब रामराज्य आ गया है!" और लड़कीका सिर लटक गया।

उसी समय पीछेसे एक धाँयकी आवाज़ हुई और युवक तड़पकर लड़कीकी गोदीमें लुढ़क गया।

जगत्सेठके भविष्य-दर्शनमें थोड़ी-सी भूल रह गई थी।

• हरमका क़ैदी

बेरहमीसे अपने भाईको क़त्ल करके सत्ता हासिल करनेकी जो मिसाल औरङ्गजेबने क़ायम की उसके बेटे-पोतोंने उसपर पूरा-पूरा अमल किया। उसके छोटे बेटे मुहम्मद मुअज्ज़मने अपने बड़े भाई मुहम्मद आजमशाहकी कब्र अपने हाथोंसे बनाई और उसपर अपना तख्त बिछाया। वही बादमें शाहआलमके नामसे प्रसिद्ध हुआ। अपने जीवन-कालमें ही अपने चार बेटोंमें वही लक्षण प्रकट होते देखकर छः वर्ष हुकूमत करनेके बाद वह भारी असन्तोष और चिन्तासे मरा। उसके सबसे बड़े बेटे मौजुद्दीनने किस प्रकार धोखाधड़ी और ऐयारीसे अपने तीन भाइयों—मुहम्मद आजम, रफीउल-कादिर और खुजिश्ता अख्ताका नामनिशान, दुनियासे मिटाकर तख्त हासिल किया यह एक लम्बी और शर्मनाक कहानी है उसने अपनेको जहांदारशाहके नामसे विख्यात किया!

इतना सब करके जहांदारशाहने अनुभव किया कि उसे और तो सब कुछ मिल गया है, लेकिन निरन्तर उपेक्षा करके वह अपने अन्तःकरणसे हाथ धो बैठा है। क्रूर रक्तपात और घृणित परिश्रमसे हाथ आये हुए वैभव-का बेतहासा उपभोग करनेके लिए वह सिरसे पाँवतक विलासितामें डूब गया। उसके पास गमको ग़लत करनेके लिए यही एकमात्र तरीक़ा रह गया था। इस विलासितामें केन्द्रमूर्ति विगत शाहआलमके दरबारकी एक खूबसूरत गायिका और नर्तकी लालकुँवर थी।

लालकुँवर असाधारण सौन्दर्यकी स्वामिनी थी। बोलते समय उसकी ज़बानकी मिठास लक्ष्य करनेकी वस्तु थी। कलाकी निरन्तर सेवासे शाह-आलमके दरबारमें उसने ऊँचा पद प्राप्त किया था। किन्तु वैभवके शिखर-पर पहुँचकर कलाकारने अनुभव किया कि शाह जहाँदारके पास उसकी

कलाकी अपेक्षा उसके शरीरका ही मूल्य अधिक है। वह उसके ठुमकोंपर जान जानेकी दुहाई देता है, उसके मीठे बोलोंको आँखें मीचकर सुनते ही रहनेकी कामना प्रकट करता है, तो उसके शरीरको भूखे भेड़ियेकी तरह घूरता भी है। इस भावनाका अनुभव करके नर्तकीका मन घुटने लगता। लगता कि दिल्लीका शाहीमहल एक क़ैदख़ाना है, जहाँ रोज़-रोज़ उसकी कलाके मरणपर फ़ातिहा पढ़ा जाता है। शाह उसके नृत्य और गीतोंकी तारीफ़ करता-करता उसके अङ्ग-विन्यासमें उलझ जाता है। वह उसके शरीरके उतार-चढ़ावपर प्रशंसाओंके पुल बाँधता है। उसके प्रेम-निवेदनमें प्रेमीकी व्याकुलता नहीं है, शक्तिका मद है।

एक दिन इसी प्रकार जब शाह शराबकी अधिक मात्रा पी लेनेसे नशेमें बकता-झकता बेहोश हो गया, तो लालकुँवर तनकी थकान मिटानेके लिए बाहर बारहदरीमें निकल आई। अटारीसे नीचेकी छोटी-सी बग़ीचीमें चाँदनी छिटकी हुई थी और बेलेकी मधुर महक ऊपर उठी आ रही थी। लालकुँवर थकानके मारे निढाल हो रही थी। उसने एक बार ऊपर आकाशकी ओर दृष्टि उठाई। सोचा—काश कि उसमें इस बन्धनसे मुक्त होकर इस नीले-नीले आकाशमें स्वच्छन्द वायुमण्डलमें उड़नेकी ताक़त आ जाती। तब वह भी पंख फैलाकर उड़नेवाले पक्षीकी तरह दुनियासे अलग रहकर उसपर छाई रहती।

उसे थकानसे चूर देखकर बारहदरीमें खड़ी एक सोती-जागती लौंड़ी गुलाबपास उठाकर उसपर सुगन्ध छिड़कनेके लिए आगे बढ़ी, लेकिन उसने उसे इशारेसे रोक दिया। फिर धीरे-धीरे वह चौड़ी सीढ़ियोंसे नीचे बग़ीचीमें उतर गयी।

बग़ीचीके एक अँधेरे कोनेमें उसके आकस्मिक स्वागतके लिए एक व्यक्ति पहलेसे ही उपस्थित था। वह इतिहासप्रसिद्ध बादशाहोंको बनाने और बिगाड़नेवाले दो सैयद भाइयोंमेंसे एक था जिनके नाम हसनअली-ख़ां और अब्दुल्लाखां उस समय शैतानकी तरह मशहूर थे। अँधेरेमें

सैयदकी दाढ़ीकी छाया हरी घासकी चाँदनीपर पड़ी देखकर लालकुँवर भयसे लगभग चिल्ला उठी।

हसन अलीने उसका मुँह दबोचकर चीख़की आवाज़को निकलनेसे रोका। "क्या कहती है? एक हफ्तेसे तेरी एक निगाह इधरसे फेरनेके लिए मैं एक टाँगसे रातभर यहाँ खड़ा रहता हूँ और तू अब कुत्तोंकी मौत मरवाना चाहती है?"

हसनअलीके रोबदार चेहरेको पहचानकर लालकुँवरको सान्त्वना मिली, और फिर उसके मुँहपर थकानके कारण उत्पन्न वितृष्णाके भाव उभर आये। लापरवाहीसे उसने कहा,—"इस दुनियामें बड़े-बड़े आशिक हैं, सिरके बल आने वाले, एक टाँगसे खड़े रहनेवाले और सिरपर पाँव रखकर भाग जाने वाले। आपने कुछ अजीब नहीं किया, सैयद साहब!"

"क्या बकती है?" सैयदने कानपर हाथ रखकर तोबा करते हुए कहा। "मुझे भी क्या उस नामुराद शाह जैसा समझ लिया है, जो यह भी नहीं जानता कि ग़म क्या होता है, लेकिन उसे हमेशा ग़लत करनेकी फ़िकरमें रहता है? मैं सैयद हूँ और दुनियाको गुनाहोंसे पाक रखना ही मेरा पहला फ़र्ज है। तुझ जैसी गुनहगार चीज़से इश्क करना मेरा काम नहीं है।"

बहुत अधिक थक जानेके कारण लालकुँवर सैयदके सामने ही चाँदनी पर बैठ गयी। "आज तक कोई इस गुनहगार दुनियाको गुनाहोंसे पाक नहीं कर सका है, सैयद साहब! आप चाहें तो ख़ुद अपनेको पाक कर सकते हैं।"

"जबानदराज लड़की, मैं तुझे मिल्लतका हुक्म देने आया हूँ, तुझसे बहस करके अपना क़ीमती वक्त़ बरबाद करने नहीं आया। तुझे शाहने मुँह चढ़ा रखा है इसलिए तेरी ज़बान बड़े-छोटेका लिहाज नहीं करती। मैं एक राज़की बात तुझसे कहना चाहता हूँ। क्या तू पाकपरवरदिगारको

हाजिरनाजिर जानकर क़सम खायगी कि इस राज़की बातको कभी तालूपर भी नहीं लायेगी ?"

लालकुँवर उठ बैठी। उसने खड़े हुए सैयदको बैठे-बैठे ही शोख़ीसे आदाब बजा लाकर कहा, "कनीज इतनी भारी इज्जत बख्शी जानेके लिए शुक्रिया अदा करती है। लेकिन लोग कहते हैं कि क़सम खाने वाले झूठे होते हैं। अगर कोई राज़की बात है तो मुझ नाचीज़को उससे अनजान ही रखे जानेकी रहमत फरमाई जाये। शायद कनीज उस राज़दारीको न निभा सके।"

"नहीं।" सैयद चिन्तामग्न हो गया। तुझसे कहे बिना काम नहीं चलेगा। साथ ही अगर तू इस राज़के कामको अमलमें न ला सकी, तो तुझे फ़ौरनसे पेश्तर इस दुनियासे उठा दिया जायेगा।"

"यह तो जनाबकी किसी क़दर ज्यादती है, बुजुर्गवार। जिस गुनाहमें कनीज फँसना नहीं चाहती उसमें उसे घसीटना बेजा है। इससे अच्छी तो इश्ककी बातें ही होती हैं, जिन्हें सुनकर दो घड़ी ख़ुशीका आलम तो रहता है।" लालकुँवरने शैतानीसे सैयदकी तरफ़ देखा।

सैयदने कानोंपर हाथ रखकर एक बार फिर तोबा की। "लेकिन तेरे बिना कोई यह काम कर नहीं सकेगा। इस कामकी पाकीजगीसे जो सबाब होगा उससे तू आगे तरक्की करेगी, अगर उज्र करेगी तो दोजख़की आगमें जलेगी।"

"कनीजके लिए तो यही दोजख है, सैयद साहब।" लालकुँवरने इत्मीनानका प्रदर्शन करते हुए कहा।

बार-बार इस तरह झुठला दिये जानेसे सैयदकी भौंहें तन गयीं। उसने धीमी किन्तु रोबदार आवाज़में गम्भीरताके साथ कहा,—"लड़की।"

लालकुँवर सारी शोख़ी भूलकर सहम गयी। उसने झुककर माथेपर हाथ ले जाते हुए कहा, "हजूर।"

"यह उसका हुक्म है; जो कलामे पाकको रोज-रोज अपनी ज़बानसे अदा करता है। तुझे यह हुक्म मानना ही पड़ेगा।"

"अगर कनीजको पहले ही यह हुक्म दे दिया जाता तो अब तक वह अमल भी हो चुका होता। उसके लिए जन्नतका लालच और दोजख़का डर दिखानेकी बिलकुल भी ज़रूरत नहीं थी, हजूर आली।"

"'तो सुन," आवाज़को और भी धीमी करके सैयदने अपने अमामेमेंसे एक सफ़ेद पुड़िया निकालते हुए कहा—"शाह जहाँदार एक निकम्मी शख्सीयत और शरीयतका मुजरिम है। वह दिन-रात बुरी चीज़को होठोंसे लगाये पड़ा रहता है, खल्के ख़ुदा उसके गुनाहोंसे बेजार है। शरीयतके हामी एक जान होकर तुझे यह हुक्म देते हैं कि तू इस कातिल ज़हरके जरिये इस ग़ाफिल बादशाहको हमेशाके लिए गफलतकी नींद सुला दे, ताकि वह उस पाकपरवरदिगारके हजूरमें जाकर अपने गुनाहोंकी तोबा कर सके।

सैयदकी बात सुनकर लालकुँवर चौंककर दो क़दम पीछे हट गयी। "सैयद साहब, यह आप क्या फरमा रहे हैं।"

"अल्लाहके वास्ते जिस कामकी नीयत की जाती है उसपर यक़ीन करना चाहिए। उसके महत्त्वको समझना चाहिए।" बात खुल जानेके बाद सैयदने एक क्षण पैनी निगाहोंसे लालकुँवरकी मुखाकृतिको आशङ्काके भावसे देखा।

"फिर क्या होगा ?" लालकुँवरने पूछा।

"इस अत्याचारी और विलासी बादशाहको तख्तसे उतारकर हम दूसरे बादशाहको तख्तपर बिठायेंगे, जो रहमदिल होगा और रियायाका हिसाब करेगा।"

"और अगर उसने भी जनताको इन्साफ न दिया तो ?" लालकुँवरने पूछा।

"कोशिश करना इनसानका फ़र्ज है," सैयदने उत्तर दिया।

"नहीं, सैयद साहब, कोई बादशाह इन्साफ़ करनेके लिए इन्साफ़ नहीं करता। बादशाह इन्साफ़ करनेके लिए पैदा ही नहीं हुए। बादशाह तो एक व्यापारी है। कोई व्यापारी न्यायकी तराजूमें पासंग रखना ही अधिक लाभकी बात समझता है तो कोई दयानतदारीके बहाने रियायाका पैसा लूटता है। बादशाहोंको अदलाबदलीसे इस बिगड़े हुए ज़मानेकी रंगत कब ठीक हुई है? सैयद साहब, हिम्मत हो तो इस रंगतके ख़िलाफ़ आवाज़ उठाइए, सेनाओंके बलपर नहीं, क़त्लके बलपर नहीं, उन लोगोंके बलपर जो अपने ख़ूनपसीनेकी कमाई शासन-सत्ताके गलेके नीचे न चाह कर भी उतार देते हैं, और इस तरह उन्हें ताक़त देते हैं कि वे हम जैसी कनीजोंको जरखरीद ग़ुलाम बनाकर विलासिताका जीवन व्यतीत करें। पर इसमें हाथका कौशल काम नहीं आयगा, हृदयका साहस और बुद्धिका बल काम आयगा।" लालकुँवरका मुँह चाँदनीको एक किरण पाकर चमक उठा।

तलवारके योद्धापर इस विनम्र उपदेशका कोई असर नहीं पड़ा। वह उकताकर तीखे स्वरमें बोला, "लड़की, मैं मिल्लते-क़ौमकी तरफ़से तुझे हुक्म देता हूँ कि जो कुछ तुझे कहा गया है उसपर अमल कर।"

लालकुँवर तनकर खड़ी हो गई। "नहीं, नहीं, कनीज इस हुक्मपर अमल करनेसे साफ़ इन्कार करती है।" ओर उसके ख़ूबसूरत चेहरेपर भयकी घटाएँ घुमड़ आईं।

क्षणमात्रमें सैयदके हाथोंमें एक खमदार चमचमाती हुई कटार दिखाई देने लगी। "याद रख, तू सैयदके सबसे अजीज राज़की मालिक है, ओर सैयद कोई काम अधूरा नहीं छोड़ता, और वह फतेह हासिल करता है क्योंकि वह अपने लिए कोई काम नहीं करता। सैयद सिर्फ़ खुदाकी मरजीका पाबन्द है।"

लालकुँवर कातर होकर बोली, 'हाँ, बुजर्गवार, मार दो इस कनीजको, ताकि वह इस बादशाहतके जलील और चक्करदार गोलदायरेसे जनात पा

सके । लेकिन लालकुँवरके हाथों एक इन्सानका ख़ून नहीं होगा, नहीं होगा । कनीजकी छातीमें यह कटार पेवस्त कर दो क्योंकि यही एक चीज़ उन घिनौनी चीज़ोंमेंसे रह गई जिन्होंने कनीजकी छातीको छूकर नापाक़ किया है ।" और चाँदनीमें उसके वक्षके उतार-चढ़ावकी गति स्पष्ट रूपसे परिलक्षित होने लगी ।

सैयद दो क़दम आगे बढ़ा । "लड़की, अपने अगले-पिछले गुनाहोंको याद कर । ख़ुदाके हज़ूरमें उनकी तोबा कर । तेरी रूहको इस फ़ानी जिस्ममें अब बहुत देर रहनेकी इजाजत नहीं दी जा सकती ।"

"कनीजने कोई गुनाह नहीं किया है, सैयद साहब," लालकुँवरने कहा । "लोगोंने मेरे बहाने गुनाह किये हैं, और कर रहे हैं । अगर ख़ुदाको उनकी तोबामें यक़ीन हो सके, तो वे ही अपने गुनाहोंकी तोबा करें । कनीज मरनेके लिए तैयार है । हक़ीकतमें कनीजको अबसे बहुत पहले मर जाना चाहिए था । लेकिन ताअज्जुब है किस तरह इन्सानकी ज़िन्दगी इतनी बदबू से गुज़र जाती है !"

सैयदकी बेधड़क दृष्टि लालकुँवरके चेहरेपर जा टिकी । वहाँ उदासी और उपेक्षाके भावोंने उसके मुखको करुणाजनक बना दिया था । सैयद की विकराल छाया अन्धेरेसे निकलकर दो क़दम आगे बढ़ी । हरी घासपर उसकी परछाईं लम्बाकार होकर फैल गई । लालकुँवर आँखें बन्दकर जहाँ-की-तहाँ पत्थरकी मूरतकी तरह खड़ी रही ।

क़त्ल करना सैयदका अभ्यास था । वही उसका पेशा था । औरङ्गज़ेब के बाद न जाने कितने भाग्यहीन उसकी चमचमाती कटारको चूमकर दम तोड़ चुके थे । किन्तु लालकुँवरकी कमज़ोर, लाचार और शान्त मुद्राके सामने उसकी मज़बूत कलाई भी काँप गई और कटारको अछूती रखकर वह बोल उठा, "लालकुँवर !"

लालकुँवरने उसके बोलका उत्तर नहीं दिया । वह बोली, "कनीज अचानक आपको सामने देखकर आदाब बजाना भूल गई थी । अब वह

जाते वक्त ऐसी गुस्ताखी नहीं करेगी, सैयद साहब ! कनीज आदाब अर्ज़ करती है ।" और वह घुटनोंके बल झुक गई ।

क़ातिलने आज पहले-पहल क़त्ल करते हुए हिचकिचाकर कहा, "न जाने क्यों, तुझे मारनेको जी नहीं चाहता ।"

लालकुँवर अब भी आँखें मीचे रही । "नहीं, सैयद साहब, खेल न खेलाइये । आगे बढ़कर अपना काम खतम करिये । अगर कोई दूसरी दुनिया है, तो वह कम-से-कम इस दुनियासे तो खूबसूरत होगी ।"

सैयदने कटार म्यानमें रख ली । "नहीं शायद खुदाकी यही मरज़ी है । वादा कर कि यह राज़ राज़ ही रहेगा ।"

लालकुँवरने आँखें खोल दीं । उसने आश्चर्यके साथ सैयदके अन्दर कुछ देरके लिए उभरे हुए इन्सानको देखकर कहा, "सैयद साहब, जब तक राज़ राज़ रहेंगे दुनियासे गुनाहोंका जनाज़ा नहीं उठ सकेगा ।"

हताश होकर सैयदने कहा, "जा, मैं तेरी भोली सूरतपर विश्वास करता हूँ । जब तू गुनहगार इन्सान तकको मरने नहीं देती, तो पाक जिस्म तेरे हाथोंसे फना नहीं हो सकेंगे ।"

लालकुँवरने उत्तरमें कहा, "काश कि यही विश्वास दुनिया वालोंको हमेशा-हमेशा रहता ।" वह फिर आदाबके लिए झुकी । सैयद उसे तसलीम करके पीछेके घने अन्धकारमें लोप हो गया ।

लालकुँवर मुड़कर अटारीके ज़ीनेकी तरफ़ बढ़ी । धीमे-धीमे थके हुए पग रखती वह ज़ीनेसे ऊपर चढ़ गई । वहाँ बारहदरीमें लौंडी अपनी नियत जगहपर नहीं थी यह उसने लक्ष्य नहीं किया । वह उसके पीछे-पीछे गुलाबपाश लेकर बग़ीचेमें गई थी यह भी उसे ध्यान नहीं था । बग़ीचेसे लालकुँवरके जानेके बाद वह पेड़ोंके झुरमुटसे घबराहटके साथ निकली । एक हाथ अपने धड़कते हुए हृदयपर रखकर वह घबराहटके साथ ज़ीनेकी ओर बढ़ी । जहाँपनाहको इस षड्यन्त्र और उससे लालकुँवरकी अद्भुत पवित्रताका पता देनेसे भारी इनाम मिलने की आशा थी ।

अगली सुबह होशमें आते ही शाहके सामने वह वफ़ादार लौंडी पेश हुई और उसने पिछली रातका कुल हाल उसके सामने खोल दिया। लेकिन वक्त हाथसे निकल चुका था। सैयद हसनअली खाँ और सैयद अब्दुल्लाखाँ उसे तख्तसे उतारनेका पक्का इरादा कर चुके थे। इससे पहले कि शाहंशाहके विशेष अङ्गरक्षक उनकी गिरफ्तारीका परवाना लेकर पहुँचे वे दोनों बंगालकी ओर कूच कर चुके थे, जहाँ विगत मुहम्मद आज़मके बेटे और वर्त्तमान सुलतानके भतीजे फरुखसियरको निमन्त्रण दिया जाना था कि वह जहाँदारशाहको तख्तसे उतारकर स्वयं उसकी रौनक़ बढ़ायें, दूसरे शब्दोंमें मुगलिया सलतनतके डगमगाते हुए सिंहासनपर उठे हुए काँटोंपर गिरकर अपनी आँखें फोड़ ले, अपनी जान दे दे, जिसका साक्षी उस समय कोई न था केवल आनेवाला इतिहास था।

जहाँदारशाह अब भी मुगल शाहंशाहियतकी अपार सेनाओंका स्वामी था। सैयद भाइयोंको पकड़ न पानेकी अपनी सफलतापर उसने उपेक्षासे सिर हिलाया और फिर नृत्य और गायनसे अपने हृदयकी धड़कनको दबा देनेके लिए वह लालकुँवरमें उलझ गया। दीवानेखासको रङ्गमंचका रूप दिया गया और लालकुँवरको उसपर सुराही और जामके साथ उतार दिया गया।

शाहकी निगाहोंमें लालकुँवर पहले एक परी थी। बीती हुई रातकी घटना सुनकर वह उसके लिए देवी हो गई। साथ-ही-साथ उसने अपनेको भी देवता मान लिया, और देवताओंका काम होता है अपने लिए हलवे-माँडेका प्रबन्ध करके कुत्तोंको रोटी देनेका दम्भ करना। शाहकी जानकारीसे अनजान लालकुँवरने जब रोजकी तरह अपने चेहरेपर बलपूर्वक एक मुसकान लाकर नृत्यका एक चक्कर लगाया और सुराही उठाकर शराबका एक जाम उसके सामने पेश किया, तो वह आह्लाद और मस्तीसे झूम उठा। तड़पकर उसने कहा, "आज शाहंशाह हिन्दकी तबियत है कि

तू उनके हज़ूरसे दुनियाकी बेशक़ीमती-से-बेशक़ीमती चीज़ माँगे और वह तुझे अदा फ़रमायें ।"

लालकुँवरने सहज स्वभावसे हास्यके साथ कहा, "जो कनीज अपने हाथोंसे किसीको ज़हर पिलाती है वह इतनी बड़ी इनायतके क़ाबिल नहीं है।" और उसने मद्यरूपी विषसे भरी सुराहीकी ओर उँगली बढ़ाकर उसे छलका दिया।

लालकुँवरकी इस भोली अदापर हज़ार जानसे न्यौछावर होते हुए शाहने कहा,—"नहीं, हम उसे कुछ देना चाहते हैं, जिसके हाथोंमें आकर यह ज़हर भी अमृतका काम करता है। माँग ले, लालकुँवर, अगर तू हमसे हमारी अजीज़तरीन चीज़ भी माँगेगी, तो हम देनेसे उज्र नहीं करेंगे।"

बादशाहकी आँखोंमें दानका वह अपूर्वभाव देखकर लालकुँवरकी आँखोंमें उसकी सबसे अधिक इच्छित वस्तुका रूप घूम गया, किन्तु साथ ही उसकी अलभ्यताका अनुमान करके उसके उन भोले नेत्रोंमें जल छलक आया। सहसा वह शाहके सामने घुटने टेककर गिड़गिड़ा उठी, "शाहंशाह आलमकी इस क़द्र मेहरबानी देखकर कनीजकी ज़बान नहीं खुलती। अगर जहाँपनाहका यही रहम व करम है, तो कनीजको उसकी सबसे अजीज़तरीन चीज़ अता फ़रमाई जाये। उसे उसकी आज़ादी वापस लौटा दी जाये।" एक बार रुककर फिर उसने अपनी प्रार्थना दोहराई। "दीजिये, शाहंशाह हिन्द, लौंडीका गला इस घुटने वाले वातावरणकी उँगलियोंसे आज़ाद कर दीजिये।"

जहाँदारशाह चमककर उठ खड़ा हुआ, उसे तत्काल अपनी भूलका अनुभव हुआ। अपने संकल्पके महत्त्वसे अवगत होकर उसने लालकुँवरको घबराहट की ललचाई दृष्टिसे देखा, "हः हः, आजादी भी कोई चीज़ है, जो शाहंशाहोंसे माँगी जाती है? तू हमसे हमारे ताजका सबसे बड़ा हीरा माँगती, हम तेरे क़दमोंपर उसे चूमकर रख देते, तू हमारे हरमका सबसे ऊँचा

ओहदा माँगती, हम तुझे अपने सिर आँखोंपर बिठाकर अपनेको खुश-किस्मत समझते। लेकिन तू हमारी आँखोंसे दूर होकर हमारी खुशी हमसे छीन लेना चाहती है। यह कैसे हो सकता है?"

न देने वाले कर्ज़दारकी आँखोंमें जो चमक होती है वही उस समय शाहकी आँखोंमें देखकर लालकुँवर दूसरेके सामने अपने मनके अचानक खुल गये धागोंको यत्न करके समेटने लगी। इस दुनियामें न जाने कितने इन्सान बन्धनकी दम घुँटनेवाली परिस्थितियों और घृणापूर्ण वातावरणमें पड़कर छटपटाया करते हैं। लालकुँवर स्वतन्त्रताके लिए पिंजरेकी तीलियों पर सिर मारते हुए पंछीकी तरह जहाँदारशाहकी ठोकरोंमें लोट गयी, "जहाँपनाह अगर कनीजको आज़ादी नहीं दे सकते, तो उसे उसकी मौत ही दे दी जाये।"

"यह तो सबसे बड़ी आज़ादी है, लालकुँवर," शाहने कुटिलतासे होंठ वक्र करके कहा, "तेरा दिमाग़ आज अपनी जगहपर नहीं है, माबदौल्त तुझे आराम करनेका हुक्म देते हैं।"

शाह चला गया और लालकुँवर जहाँ-की-तहाँ चित्रलिखित-सी बैठी रही। कैसा उत्पीड़क है यह बन्धन, जहाँ आराम करनेका भी हुक्म मिलता है।

शामके समय जब फिर शाहजहाँदारकी खुमारीका वक्त आया और वह दिन भर असाधारण रूपसे हरमसे दूर रहनेसे उकता गया, तो फिर लालकुँवरकी हाज़िरीका हुक्म दिया गया, कुछ देर बाद लालकुँवर उसके सामने पहुँची, तो वह उसे देखकर ठकसे रह गया।

आज लालकुँवरने जी भरकर शृङ्गार किया था। उसके अङ्गोंसे सुगन्धिका सागर उमड़ा पड़ता था। हीरोंसे उसकी पोशाक झिलमिला रही थी। एक लाल पन्ना उसके माथेपर खूनका रङ्ग बिखेर रहा था। शरीरमें चपलता भरी थी। उसे देखते ही जहाँदारशाह पलकें झपकाना

भूल गया। क्या आज तक जो इस परीने सिगार किया था वह नहींके बराबर था? वह प्रसन्नतासे चिल्लाया :

"शुक्र है खुदाका, कुँवर, बड़ी जल्दी तुझे अक्ल आई। भला क्या-क्या ख्यालात तुझे आये हम भी तो सुनें?"

लालकुँवर मुसकराई। "कनीजने सोचा कि शाहंशाह तो आख़िर शाहंशाह हैं।"

"हाँ।"

"और कनीज कनीज ही है।"

"बहुत खूब।"

"और शाहंशाह सबसे बड़ा है।"

"वाह, वाह!"

"लेकिन शाहंशाहसे भी एक बड़ी चीज़ है।"

"वह क्या?" जहाँदारशाहने खुमारीसे चौंककर पूछा।

"व्यवस्था, जिसे आमलोग चलन कहते हैं। जहाँपनाह! शाहंशाह आज सिर्फ़ इसलिए शाहंशाह हैं कि व्यवस्था उनके पक्षमें है। कनीज सिर्फ़ इसलिए कनीज़ है कि चलन उसके विपरीत है! शाहंशाह सिर्फ़ इसलिए सबसे बड़ा है कि चलनने उसे सबसे बड़ा मान रखा है।"

"सही है," शाहने किसी क़दर खुश होते हुए कहा।

लेकिन इस चलनमें भी एक खराबी है, जहाँपनाह! आग जिस तरह जितनी बढ़ती है उतने ही अपने शत्रु पैदा कर लेती है। इसी तरह कोई व्यवस्था जितनी फैलती है उतने ही उसके दुश्मन पैदा हो जाते हैं। यही वजह है कि शाहंशाह शाहंशाह नहीं रहते, कनीजें कनीजे नहीं रहतीं, कुछ मर जाती हैं कुछ बदल जाती है। ज़माना आगे बढ़ता है यही नियम है और चलन जब तक खत्म नहीं हो जाता तब तक अपने ही तनको नोचता रहता है और..."

जहाँदारशाह जैसे स्वप्न देखते-देखते भयसे चिल्ला उठा, "चुप रह, लड़की ! तेरे मुँहसे आज बदअमनीकी बू आ रही है। खुदा खैर करे, न जाने क्या ऊल-जलूल बकती जा रही है। माबदौलत हुक्म देते हैं कि..."

लेकिन अभी जहाँदारशाहकी बात पूरी भी नहीं हुई थी कि ज़रूरी दूतके आगमनकी सूचना देनेवाला घड़ियाल ज़ोरके साथ बज उठा "कौन है, हाजिर किया जाये" शाहने हुक्म दिया।

कासिद हाजिर हुआ। उसने फर्शी सलाम झुककर अर्ज की, "पचास हज़ार फ़ौजके साथ सैयद हसनअली, सैयद अब्दुल्ला खाँ और हज़रत फरुखसियर मारामार दिल्लीकी तरफ़ बढ़े चले आ रहे हैं। जानबख्शीकी अमान चाहता हूँ। सब क़ातिल फ़ौज हैं और उनमें चालीस हज़ार घुड़सवार हैं।"

शाह उछलकर खड़ा हो गया। उसने दरवाजेकी ओर क़दम बढ़ाये कि रहस्यमयी लालकुँवरने उसे बाजूसे पकड़कर रोक लिया। "इस ज़रा-सी बातके लिए शाहंशाह खुद तकलीफ़ गवारा कर रहे हैं!"

निश्चय और अनिश्चयके बीचमें झूलते हुए परेशानीसे शाहने लाल-कुँवरकी ओर देखा। वह आँखोंमें मस्ती भरकर मुसकरा रही थी और उसके माथेका झूमर शाहको जाने देनेकी वर्जनामें हिल रहा था। झूमरका लाल पन्ना मानो शाहको रुक जानेके लिए लाल हिलती हुई रोशनी दिखा रहा था।

शाह माथेपर हाथ रखकर बैठ गया। फिर सिर उठाकर उसने सिर झुकाये कासिदको आज्ञा दी, "वजीर आली जनाब जुल्फिकार खाँ साहबको हाजिर होने का हुक्म दिया जाये।"

"जो हुक्म, जहाँपनाह", कहकर दूत वहाँसे प्रस्थान कर गया।

विद्रोहियोंके विरुद्ध पन्द्रह हज़ार अश्वारोहियोंके साथ अपने बेटे यासुद्दीनको भेजकर भी शाह निश्चिन्त नहीं हो सका। एक ओरसे लाल-कुँवरने अपने समस्त आकर्षणोंके तार खींच रखे थे, दूसरी ओरसे

भविष्यका दुःस्वप्न और अतीतके चलचित्र बेरहमीसे उसे खींचे जा रहे थे। भोग-विलासके क्षण बदहजमीके कौर थे, जिन्हें न खाते बनता था न उगलते।

शिवलरमकी लड़ाईमें यासुद्दीनके भाग्यका फैसला भी हो गया। वह बुरी तरह पराजित होकर आगरेकी ओर भागा, और उससे भी पहले जब उसका दूत पासा पलटनेका समाचार लेकर दिल्ली आया, तो शाहजहाँदार लालकुँवरके प्यालोंके प्रतापसे मदहोश पड़ा था। दूतका स्वागत लालकुँवरने उसी बारहदरीमें किया जहाँके कालीन उसके परिश्रमके पसीनोंसे भींग-भींगकर सूख गये थे।

"कहो, क्या समाचार लाये?" उसने पूछा।

दूत शाहके निकट उसके रुतबेको जानता था। वह बोला, "जहाँपनाहसे अर्ज करनी है, हमारी फ़ौजें बड़ी बहादुरीसे लड़ीं, लेकिन क़िस्मत खिलाफ़ थी, इसलिए दुबारा ताक़त हासिल करनेके लिए शाहज़ादे साहब वापस तशरीफ़ ला रहे हैं।"

लालकुँवर मुसकराई। "तो क़िस्मत खिलाफ़ भी होने लगी, इतनी जल्द! जाओ, जहाँपनाहके आराममें खलल न डालो। गोकुलदास जहाँपनाहके सबसे बड़े अजीज हैं। उन्हें ही यह समाचार सुनाओ।"

अपनी जिम्मेदारी बाक़ायदा कम करनेके लिए दूतने वजीर जुल्फिकार और गोकुलदास दोनोंको एकके बाद एक यह दुःसमाचार सुना दिया। दोनों ही योद्धा थे, लेकिन आपसमें द्वेष रखते थे। वक़्तकी कमान किसके हाथमें रहे इसके ऊपर बादशाहकी गफ़लतमें बड़ा तूलतवील मचा, और जब दोनों योद्धा आपसमें लड़कर भी इस बातका फैसला न कर सके, तो खूनमें लथपथ वे दोनों सुबह-ही-सुबह शाहके हजूरमें हाज़िर हुए, जो अधखुली आँखोंसे इस वक़्त भी आधे नशेमें चूर नये दिनके आरम्भको दार्शनिक दृष्टिसे देख रहा था।

वह भी बाहर निकल आया। दोनोंको लहूलुहान देखकर वह उनकी

पीठ ठोंकता हुआ बोला, "वाह, दुश्मनको मारकर आये हो। माबदौलत तुम्हारी बहादुरीकी क़दर करते हैं। कहाँ है दुश्मनका सिर ?"

"गुस्ताखी माफ़ हो, जहाँपनाह", लालकुँवर बोल उठी, "दुश्मनका सिर अभी तक उसके धड़पर मौजूद है, और वह दिल्लीसे अभी बहुत दूर है। जब तक वह मरनेके लिए आगरे आये शराबका एक जाम और पिया जा सकता है। शाहजादे साहब उसके आगे आगे हैं। इन लोगोंको उनकी मदद करनेका हुक्म दीजिये और जीवनकी कल्पनाको फिर एक बार ढील दीजिये।"

शाहने नीम बेहोशीमें फिर लालकुँवरका हाथ थामकर अन्दरकी तरफ़ बढ़ते हुए हुक्म दिया, "तामील हो।"

दोनों वीर शाहके हुक्मकी तामील करनेके लिए आगरेसे निकल गये।

यासुद्दीनसे मिलकर ये तीन जांनिसार आगरेके निकट फरुखसियरसे भिड़ गये। डगमगाती हुई नावको बचानेमें गोकुलदास काम आया और उस भाग्यहीन नावके शेष दो मल्लाह, शाहज़ादा यासुद्दीन और वज़ीर जुल्फिकार खाँ, एकके बाद एक बादशाहको उसकी आँखों उसके भाग्यका निर्णय दिखानेके लिए बेतहाशा दिल्लीकी ओर भागे।

लालकुँवरकी अलकोंसे उलझा बादशाह कह रहा था, "इस लड़ाई को जीत लेनेके बाद मैं तुझे अपनी मल्का बनाऊँगा।"

लालकुँवरकी आँखोंमें घृणा और मुँहपर मुसकराहट थी। जहाँदार-शाहने ही अपने व्यवहारसे उसे यह अभिनय सीखनेके लिए मजबूर किया था। उसने कहा, "हर हालतमें असलीयतसे ख्वाब बेहतर है। मैं खुशीसे मरी जी रही हूँ, जहाँपनाह।"

अचानक बाहर भारी शोरशराबा सुनाई देने लगा। जल्दीसे लाल-कुँवरके हाथका जाम चढ़ाकर शाहने पूछा "यह क्या है ? इन लोगोंसे कह दो गुल न मचायें।"

"कोई कुत्ता मर रहा होगा, जहाँपनाह। लोग मरते हुओंको भी घसीट

कर दिल बहलाव करते हैं। मैं अभी रोक देती हूँ।" और लालकुँवर शाहको ऊँघता छोड़कर बाहर निकली।

शाहजादा यासुद्दीनको कन्धोंपर उठाये सिपाही बग़ीचीकी राह इसी ओर चले आ रहे थे। वह जखमोंसे चिल्ला रहा था। अटारीपर खड़ी लालकुँवरको देखकर वे लोग रुक गये। लालकुँवरने इतने ज़ोरसे कहा कि जहाँदारशाह भी सुन ले, "जाओ, ले जाकर कब्रिस्तानमें दफ़ना दो। जहाँपनाह इस वक्त आराम फरमा रहे हैं।"

"लेकिन ये तो अभी ज़िन्दा हैं," एक सिपाहीने दबी हुई आवाज़ में कहा।

"कोई हरज नहीं है," लालकुँवर बोली। "थोड़ी देरमें मर जायगा।"

शाह लालकुँवरकी इतनी देरकी जुदाई भी बरदाश्त न कर सका। वह पीछे-पीछे अटारीपर निकलकर आया। उसे देखकर सिपाही चिल्लाये, "जहाँपनाहकी दुहाई है..."

दुहाई सुननेके पहले ही शाहने झूमकर कहा: "अरे, क्या तुम लोगोंने माबदौलतका हुक्म नहीं सुना? जाओ, कोई हमें परेशान न करे। अभी न मरा हो, तो मारकर दफ़न कर दो।"

फिर आरामके लिए वापस चलते हुए लालकुँवरने कहा, "कुछ देर बाद सब हकीक़त खुल जायगी, जहाँपनाह।"

"कैसी हक़ीकत?" शाहने पूछा।

"मेरा मतलब है कि जामको लबोंसे लगानेसे पहले जो कुछ नहीं समझता, जाम पीनेके बाद तो उसके सामने हक़ीकत ही खुल जाती है।"

"तेरा दर्शन माबदौलतकी समझमें नहीं आता।" शाहने उत्तर दिया।

"एक दौर ख़त्म होनेके बाद समझमें आ जाता है, जहाँपनाह।"

यासुद्दीन जखमोंकी अधिकतासे एक घण्टे बाद मर गया। उसके पीछे वज़ीर जुल्फिकार आया। लेकिन उसके सिरपर स्वयं आक्रमणकारी

फरुखसियर हाजिर था। दिल्लीको बचानेके लिए छोटे-मोटे इन्तजाम किये गये, लेकिन वे बेकार थे। जिस वक़्त दोनों सैयद भाइयोंको लेकर फरुख-सियर नङ्गी तलवार लिये महलकी उस अटारीपर चढ़ा, सबसे पहले लाल-कुँवर बाहर निकलकर आई और माजरा समझकर तुरन्त अन्दर चली गई।

"क्या बात है, कुँवर?" शाहने पूछा।

"सूरज चाँदकी जगह लेनेके लिए आ पहुँचा है, जहाँपनाह, ताकि वह दिन भर चमके और शामसे पहले-पहले पश्चिमके किसी लाल कोनेमें डूब जाये। यह अमावस्याका काला पखवारा है, अभी तारोंकी सत्ता दूर है, जहाँपनाह, आइये, सूरज मेरे चाँदको अपनी लपलपाती किरणसे चूमनेके लिए बाहर बुला रहा है।"

शाह तपाकसे उठा और लालकुँवरका हाथ पकड़कर बाहर आया, जहाँ लालकुँवरका सूरज अपनी नङ्गी तलवार लिये बेसब्रीसे उसका इन्त-ज़ार कर रहा था। इससे पहले कि जहाँदारशाह कुछ बोले सैयदोंने पकड़कर उसकी मुश्कें कस डालीं, और वह चिल्लाता रहा, "लालकुँवर, लाल-कुँवर, ये लोग माबदौलतको क्यों परेशान कर रहे हैं?"

आधी मूँदी आँखोंसे प्रतिहिंसाकी पूर्णतामें मुसकराता हुआ हरमका वह क़ैदी बोल उठा, "ये आपको लालकुँवरका दर्शन समझानेके लिए ले जा रहे हैं, जहाँपनाह, घबराइये नहीं, जब एक दौर समाप्त होता है, तो खुमारीके असरसे अक्सर बदन टूट जाता है, फिर चाहे वह जहाँपनाहका बदन हो या उस चलनका, जिसने जहाँपनाहको जहाँपनाह बनाया था।"

"लालकुँवर," रस्सीके कसनेकी वेदनासे शाह चिल्लाया। "मैं बेहद दर्दसे मरा जा रहा हूँ!"

"कोई हरज नहीं, जहाँपनाह, आपका बदन भी अगर टूट रहा हो, तो उसे उस वक्त तक सहलानेकी तकलीफ़ गँवारा कीजिये, जबतक कि वह कतई टूट न जाये! आमीन।"

फरुखसियरने बगीचेमें ले जाकर जहाँदारशाहका सिर धड़से अलग कर दिया। फिर उसके धड़को एक मस्त हाथीके माथेपर बाँधा और वज़ीर जुल्फिकारखाँको उसकी पूँछसे बाँधकर दिल्लीके बाज़ारोंमें घसीटनेके लिए छोड़ दिया। लालकुँवरने यह सब देखा और अपने आँचलसे आँखोंमें आया एक बूँद आँसू पोंछ डाला। फरुखसियरने उससे उसकी इच्छा पूछी। उसने एकान्तकी इच्छा प्रकट की।

सलीमगढ़के मशहूर क़ैदखानेमें एक मनोरम और एकान्त स्थानपर लालकुँवरका निवास बना दिया गया, जहाँ रहकर वह अपने दर्शनके अनुसार शाहंशाहियतके दूसरे दौर, फरुखसियरका दिल हिला देनेवाला परिणाम भी देख सके, क्योंकि अभी तारोंकी सत्ताका युग तो दूर है, बहुत दूर है।

• गिरजेका कंगूरा

हस्तिनापुर पाण्डवोंकी प्रसिद्ध नगरी थी। उनका बहुत कुछ इतिहास हस्तिनापुरसे सम्बद्ध है। आजकल वहाँपर जैनियोंके दो मन्दिर हैं—दिगम्बर और श्वेताम्बर। यहाँके दिगम्बर मन्दिर और मयराष्ट्र जनपदमें सरधनेके सबसे ऊँचे कँगूरे वाले गिरजाघरमें कुछ आपसी सम्बन्ध भी है। यह सम्बन्ध कैसे बना—यह कहानी उसीकी है।

समरूकी बेगम विधवा थी, हज़रत ईसामें विश्वास रखती थी और सरधनेके इलाक़ेकी एक मात्र कठोर शासिका थी। दीवान संगमलाल जैन युवा थे, मसें उभरी हुई थीं, खूबसूरत भी थे और साथमें धर्मभीरु भी।

दशलाक्षणी पर्व समाप्त हो चुका था। चतुर्दशीके निराहार व्रतसे निवृत्त हो दीवान संगमलाल पड़वाके दिन बेगमसे उत्सवकी स्वीकृति लेने महलमें पहुँचे। सब ज़रूरी कामोंमें निश्चय दीवानका होता था और अन्तिम स्वीकृति बेगमकी होती थी। बालाखानेमें दीवानको बैठा लौंडीने बेगमके हुजूरमें आदाब बजाई : "दीवान संगमलाल तशरीफ़ रखे हुए हैं।"

"आते हैं।"

बहुत देर हो गई। दीवानके आनेपर बेगम कभी इतनी देर नहीं लगाती थी। अचानक सिर उठाकर दीवानने देखा—परीकी तरह सजी हुई सरधनेकी निरंकुश शासिकाके गम्भीर पदचाप बालाखानेकी खिड़कीके सामने जाकर रुक गये। एक नन्हीं किरणने तड़पकर बेगमके होठोंको चूम लिया। ठंढी और हलकी धूपने वक्षःस्थलके उभारपर पसरकर उसके नीचेके सायेको गहरा कर दिया। दीवानने नज़रें नीची कर लीं।

"दीवान!" बेगमने नन्हे सूरजकी ओर दृष्टि गड़ाये हुए पुकारा।

"श्रीमतीजी!" दीवानने उत्तर दिया।

"तुम्हें मैं इस वक्त कैसी लगती हूँ ?" बेगमने अप्रत्याशित प्रश्न किया।

"ख़ूबसूरत !" दीवानने उत्तर दिया।

"बहुत ख़ूबसूरत ?" बेगम खिल गई।

"बहुत ख़ूबसूरत !" दीवानने आँखें बन्द कर लीं।

"कितनी ?" बेगमने विभोर होकर पूछा।

"मेरी माँ भी अगर शाही लिबासमें होती तो ऐसी ही लगती।"

"दीवान !" बेगम चिल्ला पड़ी।

स्थिति बिगड़ गई थी। दीवान संगमलाल लपेटमें आ गये थे। उन्होंने घबराकर सिर झुका लिया।

"किस लिए आये थे ?" बेगमने कठोर होकर पूछा।

"जैनियोंके उत्सवमें आपकी मंज़ूरीके लिए।" संक्षिप्त उत्तर देकर दीवानने काग़ज खोलकर सामने रख दिया। बेगमने हस्ताक्षर करके एक-दम कहा, "जाओ !"

दीवान सिर झुकाये बालाखानेसे उलटे पैरों बाहर चले गये। उस दिन उत्सव हुआ, किन्तु आश्चर्यके साथ लोगोंने देखा कि श्रीजीकी गद्दीके लिए दीवान संगमलालकी नीलामी बोली कुछ नहीं बोली गई। कुछ सोचते हुए दीवानने सारा दिन दीवानखानेमें बिता दिया। अपने निश्चयकी स्वामिनी थी बेगम। दीवान उसकी आदतोंको अच्छी तरह जानते थे, बेगमके क्रोधसे उसका बेटा भी नहीं बच सका था, जिसे उसने चरित्र-हीनताके अपराधमें सूलीपर चढ़वा दिया था। बालाखानेकी घटना रंग लायेगी। आजकी शाम ख़ैरियतसे गुज़र जानी कठिन है। बेगम अवज्ञाका बुरा दण्ड देती थी और यहाँ उपेक्षा भी शामिल थी। जब कभी वह क्रोधित होती थी तो उसकी निगाह सबसे पहले अपराधीके गर्वोन्नत मस्तककी तरफ़ जाती थी और उसके बाद वही मस्तक उड़ा देनेका आदेश होता था।

अन्धकार हो जानेपर कुछ निश्चयकर दीवान संगमलाल पगड़ी सिरपर रख, रेशमी अँगरखा पहन और तलवार कमरमें लटकाकर बेगमके महलकी ओर चले। चलते जाते और सोचते जाते थे—एक काली घटा उनके ऊपर घिर आई थी और न जाने कब गाज गिरे और सब कुछ समाप्त कर दे। बेगमके कोपसे बचना असम्भव था। वह निश्चयमें देर करती थी, किन्तु एक बार निश्चय हो जानेपर फिर इधर-से-उधर होता दीवानने कभी न देखा था।

ड्योढ़ीपर लौंड़ी आदाब बजा लाई। दीवान सिर झुकाये अन्तर तक चले गये। हाथ जोड़कर ताज़ीम से खड़े खवाससे कहलवाया, "दीवान साहब क़दमबोसी चाहते हैं।"

आरामगाहमें पड़ी हुई बेगमने अपनी खास लौंड़ीसे पुछवाया, "क्या काम है?"

यह भी बिलकुल नई बात। आज तक हरएक ख़ास और आम बात किसी बिचोलिएके ज़रिये बेगमने नहीं पुछवाई थी। यह उपेक्षासे उत्पन्न मान है या क्रोध है? बेगम अपराधीकी सूरत भी नहीं देखना चाहती। दोनों बातें हो सकती हैं, दीवानने सोचकर कहलवाया, "हुज़ूरको अभी फ़ुरसत न हो तो नाचीज़ फिर हाज़िर हो?"

यह उत्तरसे मिलता-जुलता ही प्रश्न था। दीवानने कभी बेगमके सामने अपनेको नाचीज़ नहीं कहा था। समरूकी बेगमका दीवान और नाचीज़! बेगमके दिलपर यह बात ठीक आशाके अनुरूप लगी। हुक्म हुआ कि उन्हें आरामगाहमें भेज दिया जाये।

"हे भगवान्," दीवानने सोचा, "क्या सब अनहोनी आज ही होगी? बेगम अपनी आरामगाहमें मुझसे बातचीत करेगी!" वह आश्चर्यसे ख़वासके पीछे-पीछे एक सुन्दर कमरेमें पहुँचे, जहाँ तीन सालकी दीवानीमें वह आज तक न पहुँचे थे।

मोढ़ेपर बैठनेका इशारा कर, बाँहें ऊपर किये मसहरीदार पलंगपर सीधी लेटी हुई बेगमने पूछा, "अब क्यों आये हो ?"

बेगमके यौवनप्रदर्शनसे घबराकर दीवान नीची नज़र किये ही बोले, "डर था कि आपके दर्शन किये बिना ही कहीं रातको सूलीपर न चढ़ा दिया जाऊँ।"

बेगम और अधिक गंभीर न रह सकी। उनकी ओर करवट लेकर उसने मुसकराते हुए पूछा, "क्यों तुम्हारे लिए सूलीपर चढ़नेसे पहले मेरे दर्शन क्या बहुत ज़रूरी थे ?"

"जी, हाँ, बहुत ज़रूरी थे।"

दीवानके उत्तरसे छतकी ओर देखती हुई बेगम हँस पड़ी। पूछा, "क्यों ?"

"सुनते हैं कि मरनेसे पहले बिना मालिकके दर्शन किये नौकरको स्वर्ग नसीब नहीं होता।"

मालिक और नौकर ! आशाके प्रतिकूल दीवानके इस उत्तरसे बेगम खुश तो न हो सकी, लेकिन इस बातसे उसे दीवानकी अब तककी वफ़ादारी याद आ गई; इसलिए फिर क्रोधित होनेको जी न चाहा। पूछा, "क्या चाहते हो ?"

दीवान इसी प्रश्नकी राह देख रहे थे। बोले, "मैं जानता था कि आपके ग़ुस्सेसे बचना मुश्किल है। इससे पहले कि मैं सूलीपर चढ़ूँ, मैं चाहता हूँ कि गृहकलहमें जो अपनी जान बच जानेके एवज़में मनौती मैंने माँगी थी, वह पहले पूरी हो जाये, ताकि मरनेके बाद उसका बोझ मेरे कन्धोंपर न रखा रहे।"

राजगृहमें काफ़ी झगड़ा और खून ख़राबी होनेके बाद ही बेगमका सिक्का चला था। एक बार उसके और दीवानके जानलेवा फन्देमें फँस जानेपर दीवानने यह मनौती मानी थी कि अगर वह बेगमको इस फन्देसे बचा सके तो अपनी जन्मभूमि शाहपुरमें एक विशाल जैन

मन्दिर बनवा देंगे। यह तो पता नहीं कि उनके बचनेमें इस मनौतीका कहाँ तक भाग रहा, किन्तु उसके बाद तीन सालतक एक व्यवस्थामें फँसे रहनेके कारण दीवानको उसका ख्यालतक न रहा। समरूकी बेगमको मालूम था कि यह मनौती दीवानने अपने लिए नहीं, बल्कि स्वयं बेगमके लिए मानी थी।

आज मौतको सिरपर जान जिस प्रकार दीवानने उसकी चर्चा न कर केवल अपनी जान बचनेके एवज़की बात कही थी, उससे दीवानके प्रति बेगमका मोह द्विगुणित हो गया। इसके ऊपर दीवानकी उपेक्षासे नेत्र आर्द्र कर बेगमने पीठ फेरते हुए कहा, "आप जाइए, छुट्टीका परवाना पहुँच जायगा।" थोड़ा रुककर फिर कहा, "सूलीसे पहले ही।"

अनुभवी दीवान बेगमके उन आँसुओंको अपनी आँखोंसे नहीं देख सके, लेकिन उनकी नमीने उनके मनःप्रदेशपर एक ठंढी सिहरन दौड़ा दी। घर पर उनकी सुन्दर पत्नी है, बच्चा है, किन्तु क्या किसीके भी प्यारकी तुलना बेगमके मोहसे की जा सकती है?

उसी रात एक तेज़ घोड़ीपर सवार हो दीवान संगमलाल शाहपुरकी ओर दौड़ पड़े। अगले दिन सुबह मन्दिरकी नींव रख दी गई। हज़ारों मज़दूरोंने खून-पसीना एक कर बेगमकी जान बचानेका धन्यवाद भगवान्को भेंट किया। सात दिन तक ताबड़तोड़ मेहनत की गई। आठवें दिन वेदीकी प्रतिष्ठा कराके दीवान संगमलालने पूजा की और साष्टांग दण्डवत्कर निरंकार निर्लेप पारसनाथकी मूर्त्तिके सामने पड़ गये। सकल जनोंको सुनाते हुए उन्होंने कहा, "हे भगवन्, यदि बेगमके क्रोधसे मेरी रक्षा हो, तो हस्तिनापुरके उजड़े हुए वन-खण्डमें एक मन्दिर और बनवाऊँगा, जहाँ हर साल हज़ारों धर्मके दीवाने जाकर धर्मलाभ करेंगे।" निर्विकार भगवान् ज्योंके-त्यों ही बने रहे और अपने मनकी भावनासे आप ही सन्तोष प्राप्तकर दीवान संगमलाल, रोते हुए घरवालोंसे विदा ले, सरधनेकी

ओर चल दिये। किन्तु बेगमका गुप्तचर उनसे पहले सरधने रवाना हो चुका था।

अगले रोज़ बेगमके हुजूरमें हाजिर होते ही सबसे पहले बेगमने कहा, "तुमने नये जैन मंदिरमें कुछ मनौती मानी है?"

दीवानने नतमस्तक हो कहा, "जी, हाँ।"

"तुम समझते हो, दीवान," बेगमने चहलक़दमी करते हुए पूछा, "कि यह मनौती मानकर तुमने कितनी बड़ी तोहमत हमपर लगाई है? जिसे तुम दुनियामें सबसे बड़ी ताक़त मानते हो, उसे हमारे ख़िलाफ़ भड़कानेकी कोशिश की है। हमने कोई ज़ोर तुमपर नहीं दिया। हमने तुम्हें मजबूर नहीं किया। ऊँचेसे-ऊँचे तख़्तपर बैठकर भी औरत यही चाहती है कि कोई छाती ऐसी भी हो जो उसे जीत ले। हमने तुम्हें उसका मौक़ा दिया था। मगर हमें अफ़सोसके साथ कहना पड़ता है, दीवान, कि तुम हमारी ज़ातकी नब्ज़को पहचाननेसे क़ासिर रहे।"

उसी तरह सिर झुकाये दीवानने उत्तर दिया, "मुझे अपनी ग़लतीका आभास है।"

अचानक घूमकर कठोर दृष्टिसे देखते हुए बेगमने कहा, "तब क्यों तुमने हमें उस बग़ावतमें हलाक़ नहीं हो जाने दिया? क्यों तुमने हमारी जानके एवज़ खुदाको उसका बड़ा घर बनवा देनेका लोभ दिया? क्या तुम अपनी ग़लतीको ठीक करनेके लिए तैयार हो?"

"मुझे अफ़सोस है, बेगम," दीवानने इनकारीको दूसरी तरह बयान करते हुए कहा, "मेरा मज़हब इसकी इजाज़त नहीं देता।"

"और तुम एक ग़ैरमज़हबकी जानपर मनौती मान सकते हो, और उसके ऊपर इतना बड़ा मन्दिर बनवा सकते हो! मोहब्बतके लिए तुम्हारे मज़हबमें अजीब फ़तवे हैं! ईसामसीहकी क़सम, तुम्हारी जगह अगर और कोई होता तो उसके मज़हबका नामोनिशान हमारे इलाक़ेमें नज़र

न आता, हमारी जानकी अमानपर जैन-मन्दिर नहीं, गिरजाघर बनता। दुनियामें रहकर दुनियाकी मोहब्बतपर ईमान लाने और उसकी क़द्र करनेकी इजाज़त जिसका मज़हब नहीं देता, वह समरूकी बेगमका दीवान नहीं रह सकता। हमें तुमपर और तुम्हारे मज़हबपर रहम आता है। ऐसे आदमीको सूली देकर भी दुनिया बैरागियोंसे पाक नहीं होगी। जाओ, चौबीस घण्टेके अन्दर अपनी जानकी सलामती लेकर हमारी रियासतकी हदसे बाहर निकल जाओ।"

दीवान बिना पीठ फेरे ही झुकते हुए बाहर निकल गये। अगले चौबीस घण्टोंमें उन्होंने रियासत छोड़ दी। उनकी जान बच गई थी, समरूकी बेगमके कोपसे उनकी रक्षा हो गई थी, किन्तु किस बेग़ैरती और बेइज़्ज़तीके साथ!

बुझे मनसे पण्डितों, सङ्गसाज़ों और राजोंको ले एक सप्ताह बाद दीवान सङ्गमलालने बिरादरीके दूर-दूरके मुखियाओंको साथ ले अपनी मनौती पूरी करनेके लिए हस्तिनापुरकी ओर कूच किया। पण्डितोंने शास्त्रों का अवलोकनकर और हस्तिनापुरकी ज़मीनको देखभालकर जो स्थान मन्दिरके लिए निश्चित किया, वहाँ हस्तिनापुरके आस-पासके गाँवोंके आदि-निवासी गूजरोंका वृक्षदेवता पीपल खड़ा था। पीपल हटकर ही मन्दिरकी नींव पड़ सकती थी। उन्हें प्रलोभन देनेकी बहुत कोशिश की गई, लेकिन इस प्रश्नको लेकर एक तुमुल विरोध ग्रामीण जनतामें उठ खड़ा हुआ। सङ्गमलालको धमकी दी गई कि अगर पेड़ कट गया तो उनकी जानकी ख़ैर नहीं, पण्डितोंसे विचार-विनिमय हुआ। शास्त्रोंके अनुसार और कोई स्थान इतने मार्केका नहीं निकल रहा था।

धीरे-धीरे दूर-दूरके जैन लोग वहाँ एकत्रित हो गये। रातके अन्धेरेमें एक तेज़ आरेसे पहलवानोंको भिड़ा दिया गया। पन्द्रह मिनिटमें पेड़ कटकर गिर पड़ा। किन्तु खबर छिपी न रही। हज़ारों मनुष्योंका समूह, गूजरोंके ग़ोलके-ग़ोल अपने देवताकी रक्षा करने और अपराधीको दण्ड देनेके लिए

हस्तिनापुरकी ओर पिल पड़े। इधर पेड़ कट जानेपर वहाँ नींवकी ईंट रख दीवान संगमलाल बहलीपर सवार हो, तेज़ बैल जुतवा, वायुवेगसे बहसूमेकी ओर प्रस्थान कर गये। गूजरोंको मालूम हुआ कि पंछी उड़ गया तो सैकड़ों घोड़े बहलीके पीछे-पीछे अपराधीको पकड़ पानेके लिए दौड़ पड़े।

आधे रास्तेमें घोड़ोंने बहलीको पकड़ लिया। छतरीपर सैकड़ों लाठियाँ पड़ीं और वह भिर्रें भिर्रें हो गई। निकट था कि दीवान संगमलाल अपने कियेको भुगतते कि यकायक पीछेसे भयङ्कर मार-काट शुरू हो गई। सिर उठाकर दीवानने देखा कि समरूकी बेगमके सिपाही थे। थोड़ी देरमें खेत साफ़ हो गया, लेकिन डर अभी बाक़ी था। सिपाही बहलीको अपनी रक्षामें लेकर तेज़ीसे बहसूमेके राजाके महलकी ओर चले। यथास्थान शरण पा जानेपर अगले दिन प्रातः सिपाहियोंके नायकसे दीवानने पूछा, "तुम्हें किसने भेजा था?"

"बेगम साहबाने," नायकने उत्तर दिया।

"बेगम साहबा कहाँ हैं?"

"शाहपुरका जैन मन्दिर लूटनेके लिए कल रात रवाना हो चुकी हैं।"

दीवान संगमलालने यह सुना तो स्तंभित रह गये। बेगमका मिज़ाज समझमें नहीं आया। पूछा, "तुम्हारे साथ खुद तशरीफ़ लाई थीं?"

"जी, हाँ, आपके बहसूमे आ जानेपर ही उन्होंने यहाँसे पलायन किया था," नायकने उत्तर दिया।

दीवान तुरन्त एक घोड़ा ले शाहपुर दौड़े। हाँफते-हाँफते शामको वह शाहपुर पहुँचे। मालूम हुआ मन्दिर लुट चुका था; बेगमने लूटके मालके सात ऊँट भरे थे। लाखों-करोड़ोंका हीरा-जवाहरात लादकर बेगम तीसरे पहर ही सरधने कूच कर गई थी। उजड़े हुए मन्दिरको एक नज़र देख दीवानने तुरन्त घोड़ेकी रास मोड़ी और सरधनेके कच्चे रास्तेपर सरपट दौड़ा दिया।

घोड़ा फेन उगलने लगा था और दीवान क़रीब-क़रीब बेहोश थे, जब कि सरधनेके क़रीब पहुँची हुई बेगमने ऊँटपर ऊँचे बैठे-बैठे, दीवानको घोड़ेसे गिरते देखा। ऊँट रुकवा दिये गये। दीवानकी सेवा-शुश्रूषा शुरू हो गई। अपनी रानोंपर दीवानका सिर रखे बेगम उनके मुँहमें जल टपकाती रही।

आँखें खुलनेपर दीवानने बेगमको देखा और उठते हुए पूछा, "आपने उन लोगोंसे मुझे क्यों बचाया था?"

बेगमने गम्भीर होकर कहा, "अहसानका बदला उतारनेके लिए।"

"आपने यह नहीं सोचा कि मन्दिर लूटनेसे हज़ारों लोगोंकी धार्मिक भावनाको ठेस पहुँचेगी?" दीवानने फिर पूछा।

बेगम उठकर खड़ी हो गई। बोली, "काश कि हस्तिनापुरमें पीपलका पेड़ कटवाते वक्त़ भी तुम यही सोचते!"

दीवानने निरुत्तर होकर कहा, "लेकिन यह मन्दिर आपकी जानकी एवज़ी था।"

"हूँ," बेगमने उत्तर दिया, "एक ईसाईकी जानकी एवज़ी मन्दिर नहीं हो सकता—गिरजाघर होता है।"

दीवान क्या कहें? बेगमके अन्दर धार्मिक पक्षपातकी भावना उन्हींके कारण उत्पन्न हुई थी। निराश होकर उन्होंने अन्तिम बार कहा, "लेकिन यह मन्दिर मेरी जान बचनेकी मनौती भी तो था।"

"उसके लिए तुम एक ऊँट वापस ले जा सकते हो। हम बुतशिकन नहीं हैं। चलो।" और बेगमका क़ाफ़िला एक ऊँट पीछे छोड़ राजधानी की ओर चल दिया। दीवान संगमलाल खड़े हुए उसे तब तक देखते रहे जब तक कि वह क्षितिजके पास जाकर एक धब्बेके रूपमें परिवर्तित न हो गया।

·

उसके बाद गिरजाघर बना और तब-तक बनता रहा जब-तक कि

मन्दिरकी लूटकी एक-एक पाई उसमें खर्च न हो गई। तैयार होनेपर बेगमने हुक्म दिया कि गिरजेका कंगूरा राजधानीके तमाम धार्मिक भवनोंसे ऊँचा रहे। बिना और कुछ कष्ट किये एक जैन-मन्दिरकी ज़रा ऊँची बढ़ी हुई चोटीका कलश उखाड़ दिया गया।

इसमें प्रेमसे प्रवंचिता नारीके सिर ऊँचा करके चलनेका अभिमान था।

• मोटा आदमी

हर मोटे आदमीका एक इतिहास होता है। इतिहास स्वयं मोटे और पतले आदमियोंका संग्रहालय है। ऊपरसे देखनेपर हर ऐतिहासिक व्यक्तित्व पत्थरका तराशा हुआ बुत मालूम होता है। उन बुतोंके भीतर झाँकनेसे ऐसा मालूम नहीं होता कि पोलके सिवा कुछ मिल जायगा। जब इस पोलके भीतर कुछ सूक्ष्म तत्त्व मिल जाते हैं, तो वही ऐतिहासिक व्यक्तित्व एक जीता-जागता इन्सान बन जाता है। ऐसा ही एक इन्सान था फ़ज़लअली।

फ़ज़लअलीके बारेमें कुछ दन्तकथाएँ प्रसिद्ध थीं। उनमेंसे एक यह थी कि किसी आदमीको आज तक उसका वज़न मालूम नहीं हुआ था। बहुत कोशिश की गई कि कोई तरकीब ऐसी निकले, जिससे चुपकेसे सरकारका वज़न ले लिया जाय। मगर किसी भी अच्छे-भले मोटे आदमी के सामने उसके वज़नकी बात करने-जैसी हिमाकत क्या हो सकती है!

लेकिन दुनियामें एक-से-एक उस्ताद भरे पड़े हैं। करमअली मल्लाहने एक दिन वह काम कर दिखाया, जो आज तक कोई नहीं कर सका था। पूरी बात यों है :

नवाब सआदतअलीख़ाँने फ़ज़लअलीको ग़ाज़ीपुरका सूबेदार नियुक्त कर दिया था। सूबे उस समय एक प्रकारसे नीलाम किये जाते थे। जो भी ज्यादा रक़म देनेका दावा करे वही सूबेदार। फ़ज़लअलीने लम्बा-चौड़ा वादा किया। लाखोंकी बात मुँहसे कह दी और सूबा बिना उसके स्वयंके आकार-प्रकारकी ओर ध्यान दिये उसे दे दिया गया।

फ़ज़लअली हकूमत करने जब अपने सूबेमें पहुँचा, तो सभी

बाबू लोग (ज़मींदार) उसे देखकर सनाका खा गये। उस समय वह आया तो हाथी पर था, और हाथी भी काफ़ी नाज़ोअन्दाज़से चल रहा था; लोग समझे कि हाथीसे चला नहीं जा रहा है। सलाम झुकाते, मगर नज़रें नीची न होतीं। कोई कनखियोंसे, कोई किसीकी पीठके पीछेसे, तो कोई बदतमीज़ीसे—ग़रज़ कि लोग किसी-न-किसी तरह फ़ज़लअलीको देखकर अघा नहीं रहे थे। ग़ाज़ीपुरका ग़रीब और बारीक़-सा इलाक़ा, और उसमें फ़ज़लअली जैसा व्यक्तित्व—घड़ेमें तरबूज़ था !

फ़ज़लअलीकी तसवीर बनाना कोई मुश्किल काम नहीं था। एक सीधे-सादे किसानने जाकर अपनी घरवालीको बताया कि वह सरकार साहबको देखकर आया है। घरवालीने कहा कि मैं कैसे जानूँ। किसानने कहा कि कोई मुश्किल बात नहीं है। वह दौड़ा-दौड़ा अपने तरकारियोंके बग़ीचेमें गया। वहाँसे वह थोड़ी देरमें एक बोरी कन्धे पर लादकर लाया। और फिर उसने फ़ज़लअलीकी मूर्ति खड़ी करनी आरम्भ की। सबसे पहले दो लौकी उसने ज़मीनमें टिकाईं। उनके ऊपर घरका सबसे बड़ा मटका रख दिया। मटकेके मुँहपर एक बड़ा भारी सीताफल रखा और सीताफलके ऊपर अपने सिरसे उतारकर पगड़ी रख दी। फिर घरवालीसे बोला, "देख, यह हैं हमारे सरकार !"

नज़राना-शुकराना देने-दिवानेके बाद कानों-ही-कानों में सवाल पूछे जाने लगे। वज़न वाला सवाल न जाने किस उजड्ड देहातीके दिमाग़की उपज थी! पर चौबीस घण्टे बीतते-न-बीतते लोगोंको इस बातकी सख़्त ज़रूरत महसूस होने लगी कि उनकी नई सरकारका वज़न क्या है?

महीनों तक लोगोंका यह सवाल उत्सुकता जगाता रहा। फिर सवाल दब गया और दबदबा रह गया। सुना कि सरकार ख़ुद कभी महलसे बाहर नहीं निकलते—महलवालोंका कहना था कि सरकार कभी दरबारसे बाहर नहीं आते। लेकिन दरबारका हाल दरबारको मालूम था। वहाँ एक ही जगह ऐसी थी, जो ख़ुदासे पनाह माँग रही थी।

फिर करमअलीने एक दिन अपनी चाँदी बना ली। न जाने किसने प्रेरणा दी कि एक दिन फ़ज़लअलीने नावमें बैठकर विहार करना स्वीकार कर लिया। गोमती या गंगा तक जानेका विचार करना फ़ज़लअलीके लिए एक मुसीबत थी। अतः विहार करनेका प्रबन्ध एक झीलमें किया गया।

नाव काफ़ी मज़बूत थी और बीसियों आदमी उसमें बैठनेका ख्याल रखते थे। मगर जब फ़ज़लअलीने उसमें पाँव रखा और कुछ देर बाद पैर सम्भालकर सहारेसे वह नावमें चढ़ गया, तो करमअलीने चिल्लाकर और लोगोंको नावमें चढ़नेसे रोक दिया। उसकी बात सच माननी ही पड़ी। नावके डूब जानेका ख़तरा पैदा हो गया था। पानीके निशानपर चाक़ूसे चिह्न करते हुए उसने लोगोंसे कहा कि जहाँ दो-चार आदमी चढ़े कि नाव सरकारको लिये-दिये पानीमें चली जायगी।

कुछ देर नावमें सैर करा लाने और बदलेमें पुरस्कार पा लेनेके बाद वह अपने साथी मल्लाहोंके साथ बैठकर लतीफ़े सुनने लगा। कुछ देर बाद एक लतीफ़ा सुनते-सुनते उसे कुछ ख्याल आया और वह तुरन्त उछलकर खड़ा हो गया। उसके साथियोंने देखा कि वह पत्थर उठा-उठाकर अपनी नावमें भर रहा है। जब दूसरे मल्लाहोंने उसका यह पागलपन देखा, तो चिल्लाने लगे। मगर करमअली कब माननेवाला था। उसने चिल्लाकर कहा कि वह पागल नहीं है और अपने साथियोंसे इस काममें सहायता करनेको कहा। उसकी नाव ईर्ष्याका विषय थी। अतः उसके साथियोंने जब नाव डुबोनेकी यह नई झख देखी, तो फ़ौरन उसकी सहायतापर कमर कस ली। वे भी पत्थर उठा-उठाकर उसकी नावमें भरने लगे।

कुछ देर बाद जब नाव नीचे बैठने लगी और पानी उस निशानतक आ गया, जो उसने फ़ज़लअलीके नावमें बैठे-बैठे चाक़ूसे लगाया था, तो वह चिल्लाने लगा : "बस, भाइयां, बस। काम हो गया।"

अब फ़ज़लअलीने तीन पाँवोंके सहारे एक बहुत बड़ी तराजू (काँटा) लगायी और उन पत्थरोंको तौलने लगा। जब सारे पत्थर तुल चुके और पत्थरोंका जुड़ा वज़न निकल आया, तो उसे ग़श आ गया! उसे विश्वास नहीं हुआ कि उसकी नावमें कोई इतने वज़नका आदमी भी बैठा था। मगर जो भी हो, फ़ज़लअलीका वज़न मालूम हो गया था।

यहाँ हम वज़नको बतानेकी आवश्यकता नहीं समझते। इससे एक विशिष्ट ऐतिहासिक व्यक्तित्वका मान घटता है। फ़ज़लअली जो था सो था। जब था, तब था। इतिहासके पन्नोंमें वह अमर है, अमिट है।

नवाब सआदतअलीखांके साथ उसका लंगोटिया यारयाना था। लखनऊमें कभी साथ-साथ खेले-कूदे थे। वह ज़माना भी कितना प्यारा-प्यारा ज़माना था! आज वह लखनऊके नवाब थे और वह गाज़ीपुरका सूबेदार था। यह सूबेदारी केवल रक़मके वादेमें ही नहीं मिल गई थी। फ़ज़लअलीने उसे अपनी बहादुरीके कारनामेसे हासिल की थी। वह बहादुरीका कारनामा अपनेमें अभूतपूर्व था, अद्भुत था और इतिहासके पन्नोंपर वीर अभिमन्युको छोड़कर कोई ऐसा दिलेर नहीं मिलता।

अफ़गान सरदार अहमदशाह चढ़कर आया था और लखनऊके नवाब सआदतअलीखाँ सरहिन्द पर मुकाबलेमें डटे हुए थे। अफ़गानोंके पास भारी मात्रामें गोला-बारूद था और फ़ौजकी संख्या भी बहुत ज़बरदस्त थी। उधर नवलरायने नवाब सआदतअलीखाँका ध्यान बँटा देखकर फ़ज़लअलीसे कोई पुराना वैर निकाला और फ़ज़लअलीके पुरखोंकी जागीर छीनकर एक करमुल्ला साहबको दे दी। फ़ज़लअली उसी वक्त एक मज़बूत-से घोड़ेपर चढ़कर (उस समय उसका वज़न कुछ कम था) दिल्ली पहुँचा और वहाँसे सरहिन्दकी तरफ़ अपनी छोटी-मोटी फ़ौजके साथ रवाना हो गया।

वहाँ चल रहा था धुँआँधार। फ़ज़लअली और उसकी फ़रियादको पूछनेवाला वहाँ कौन था। नवाब साहब कहीं दिखाई नहीं पड़ रहे थे।

फ़ज़लअलीने अपने दस बारह आदमियोंको हुक्म दिया कि उसे उठाकर एक हाथीपर बैठा दिया जाये। आज्ञाका तुरन्त पालन किया गया। अब हाथीपर बैठकर धुएँके गुब्बारमें फ़ज़लअली नवाब साहबका हाथी देखनेकी कोशिश करने लगा।

सहसा उसी समय गोलाबारी तेज़ हो गई। एक भारी धमाका ठीक फ़ज़लअलीके हाथीके कानोंके पास हुआ। बस, फिर क्या था, हाथी अपने सवारके बोझसे शायद पहलेसे ही परेशान था, उसपर यह पटाखेबाज़ी, मस्ता ही तो गया! महावतने लाख रोका, मगर हाथीने किसीकी न सुनी। सूँड उठाकर वह चिंघाड़ता हुआ, फ़ज़लअलीके शरीरको लिये-दिये, तेज़ीके साथ अफ़गानोंकी सेनाकी तरफ़ झपटा।

अफ़गानी सेनाने देखा कि पर्वत-का-पर्वत, जिसपर महावत और एकमें अनेक आकारका एक सवार बाक़ायदा मौजूद, उनकी तरफ़ तेज़ीसे धिकला आ रहा है! अब तोपचियोंका हाल बेहाल हो गया। देख किधर रहे हैं और पलीता किधर लग रहा है! ऊपरसे मानो काला बादल घिरा आ रहा था और एक तोपचीका पलीता बजाय तोपके दहानेपर लगनेके, भागादौड़ीमें जा लगा इकट्ठी बारूदके ढेरमें—एक भारी अंबरतोड़ धड़ाका हुआ और अफ़गानोंके कलेजे दहल गये। समझे कि खुदाने कोई फ़रिश्ता साकार रूपमें हाथीपर बैठाकर उन्हें पददलित करनेके लिए भेजा है। सारी फ़ौज़ अपने प्राणोंकी चिन्तामें इधर-उधर तितर-बितर हो गई। इधर महावत बराबर अंकुश-पर-अंकुश चला रहा है, उधर बेचारा फ़ज़लअली दुश्मनके चक्रव्यूहमें अपनेको फँसा देखकर शुंतुर्मुर्ग़की तरह रेतमें मुँह छिपानेकी कोशिश कर रहा है और उसकी छोटी-सी टुकड़ीके सिपाही अपने मालिकके पीछे-पीछे चिल्लाते हुए अफ़गानोंकी भागती हुई सेनाके पद-चिह्नोंपर चल रहे हैं! मैदान नवाब सआदतअलीके हाथों सर रहा—कहना चाहिए कि उस लड़ाई का हीरो फ़ज़लअली था।

भारी शोर मचाकर हिन्दुस्तानी सेनाके सिपाहियोंने फ़ज़लअलीके

विशाल शरीरको हाथों-हाथ उठा लिया। इस प्रकार जीतेजी आगके मुँहमें घुसना वीरताकी पराकाष्ठा है, और फ़ज़लअलीने यह करतब कर दिखाया था। उसके हाथीको हूलकर महावत नवाब साहबके शिविरमें ले गया। वहींपर फ़ज़लअलीको उतारा गया। नवाबने कहा, "माँगो, जो कुछ माँगोगे वही दूँगा।"

फ़ज़लअली सामनेकी तरफ़ अपनी छोटी-छोटी टाँगे पसारे बैठा था। तोंद पैरके अंगूठोंको छू रही थी। दो हाथियोंकी सूँड़ोंकी तरह हाथ निढालसे पड़े थे। मटकेके ऊपर सचमुच एक तरबूज़-सा रखा हुआ था, जिसमें दो ढिबरी-सी लगी थीं। मुँहकी जगह एक सीवन-सी दिखाई दे रही थी और छोटी-सी नाक जैसे किसीने झाड़के ऊपर चिपका दी हो। मुँहसे बुदबुदाहटके साथ निकला: "हुजूर, मेरी ग़ाज़ीपुरकी जायदाद जनाब नवलराय साहबने छीन ली है और करमुल्लाको दे दी है। बस, वही वापस दे दीजिये, तो मेहरबानी होगी।"

नवाब साहब बोले, "ओह, नवलरायने बड़ी हिमाकत की! खैर, हमने कह दिया। जायदाद फिरसे तुम्हारी हुई...मगर एक शर्त पर।"

"फ़रमाइए, हुजूर?" फ़ज़लअलीने अपनी आँखें टिमकाते हुए पूछा।

"ज़रूर करमुल्लाने ज्यादा मालगुज़ारी देनेका वादा किया होगा। तुम्हें हर हालतमें उससे ज्यादा मालगुज़ारी देनेका वादा करना होगा।"

"बहुत अच्छा, हुजूर," फ़ज़लअलीने अपनी आँखोंको टिमकाया।

जब नवाब राजधानी वापस लौटे, तो नवलरायके हुक्मको रद्द किया और आठ लाख सालानाकी मालगुज़ारीपर फ़ज़लअलीको फिर अपनी जायदाद मिल गई। आठ लाख क्या, फ़ज़लअली दस लाख, पन्द्रह लाख, किसी भी क़ीमतपर अपनी पुश्तैनी जायदाद नहीं छोड़ सकता था।

मगर कहाँ ग़ाज़ीपुरका ग़रीब इलाक़ा और कहाँ आठ लाखकी मालगुज़ारी! फ़ज़लअली आरामसे जाकर फिर अपने कोठेनुमा दरबारमें

बन्द हो गया और मालगुज़ारी इकट्ठी करनेके लिए लगान कड़ाईसे वसूल किया जाने लगा।

साल पूरा होनेपर जब मालगुज़ारी लखनऊ नहीं पहुँची, तो वज़ीर-ख़ास नवलरायने नवाबसे शिकायत की। नवाबने कहा, "अगर फ़ज़लअली मालगुज़ारीकी रक़म फ़ौरन जमा न करे, तो उसे कहो कि सीधा लखनऊ चला आये और जायदाद किसी और को दे दो।"

नवलरायकी तरफ़से राजदूत ग़ाज़ीपुर पहुँचा मालगुज़ारी वसूल करने। फ़ज़लअलीके सरदार तो जानते थे कि अन्दरूनी मामला क्या है। उन्होंने राजदूतको ले जाकर फ़ज़लअलीके सामने पेश कर दिया। जहाँ वह उसी तरह अपनी छोटी-छोटी टाँगोंके ऊपर पेट रखे, आँखें टिमकाता हुआ बैठा था।

राजदूतने कहा, "हुजूर, नवाब साहबने मालगुज़ारी मँगाई है।"

"अच्छा," कहकर फ़ज़लअली चुप हो गया। ज्यादा बोलना उसके बसकी बात थी नहीं।

राजदूतने मन ही मन पेंचताव खाकर कहा, "तो, हुजूर, हुक्म दीजिये कि मैं लेता जाऊँ।"

"किस तरह दूँ?" फ़ज़लअलीने कहा।

राजदूत चकराया। यह भी कोई सवाल है! उसने कहा, "हुजूर, मैं वज़ीर साहबको बुला लाता हूँ और आपके खजान्चीको ले आता हूँ, दोनोंको कह दीजिये।"

"अच्छा," फ़ज़लअली निर्दोष और निर्विकार भावसे बोला।

कुछ देरमें दूत दोनों सज्जनोंको बुला लाया। फ़ज़लअलीने वज़ीरसे कहा, "सरदार साहब, इनको दे दो न जो यह माँगते हैं।"

वज़ीर बोला, "हुजूर, यह तो मालगुज़ारीकी रक़म माँगते हैं!"

खजान्चीने कहा, "और सरकार, ख़ज़ाना ख़ाली पड़ा है।"

फ़ज़लअलीने गाल फुलाकर दूतको लक्ष्य करते हुए कहा, "देखा, क्या कहते हैं ये लोग ?"

दूतने होंठ काटे और बोला, "तो, हुजूर, मुझे हुक्म हुआ है कि आपको अपने साथ लखनऊ लेता चलूँ।"

"अच्छा," फ़ज़लअलीका उत्तर था। उसे किसी बातसे इनकार नहीं था।

अब फ़ज़लअलीके लखनऊ जानेकी तैयारियाँ शुरू हो गईं। साथमें हरमकी पालकियाँ सज गईं और एक हाथीपर फ़ज़लअलीको बैठाया गया। पूरी सरकारकी सरकार लखनऊकी तरफ़ चल दी। लखनऊ पहुँचते ही नवाब सआदतअलीकी तरफ़से नियत एक महलमें यह सारा क़ाफ़िला उतरा। तुरन्त नवलराय साहब हाज़िर हुए, दुआसलाम हुई और दोनों आपसमें गले मिले।

नवलरायने कहा, "क्यों, हज़रत, यह क्या दिल्लगी है कि पहले आपने वादा कर लिया, और अब मालगुज़ारी अदा नहीं करते !"

फ़ज़लअली टुकुर-टुकुर नवलरायकी तरफ़ देखने लगा। ऐसा मालूम होता था कि एक अनघड़ पर्वत है, जिसके सामने नवलराय खड़े कुछ माँग रहे हों ! सन्तोषसे गाल बिचकाकर फ़ज़लअली बोला, "लोग लगान ही नहीं देते।"

नवलराबने अपने करम ठोंके। "अगर लोग लगान नहीं देते, तो आप किस लिए हैं ! आपने उनसे वसूल क्यों नहीं किया ?"

"उनके पास हई नहीं," फ़ज़लअली बच्चों-जैसे निर्दोष भावसे बोला।

"क्यों नहीं है ?" नवलराय तेज़ीसे बोले।

"ख़ुदाने दिया नहीं," सम भावसे फ़ज़लअलीने उत्तर दिया।

"तो फिर समझिये कि ख़ुदाने ग़ाज़ीपुर आपसे लेकर फिर करमुल्लाको दे दिया है।"

"अच्छा," फ़ज़लअलीने कहा ।

नवलरायने जाकर नवाबको रिपोर्ट दी कि "फ़ज़लअलीमें हकूमत करनेका कोई गुण नहीं है, वह बिलकुल निकम्मा आदमी है, और मसखरों जैसी बातें करता है; बेहतर हो कि उसे लखनऊमें ही नज़रोंके सामने रखा जाय, जिससे और लोगोंमें हुक्मअदूलीकी बीमारी न फैले ।"

फ़ज़लअलीका लखनऊ-वास आरम्भ हो गया ।

ऊपरसे देखनेमें यह बात जितनी सरल मालूम होती है उतनी नहीं थी । लखनऊके तमाशे और लखनऊके तमाशाई दोनों मशहूर हैं । दो ही दिनके भीतर-भीतर सभ्य और शिष्ट ज़बानोंपर फ़ज़लअलीका नाम चढ़ गया । लोग आपसमें तज़किरा करते : "अमाँ, सुना है कि खुदाने दस रूहोंको एक ही जिस्मके भीतर क़ैद कर दिया है !"

जवाबमें कोई साहब फरमाते : "लेकिन अल्ला मियाँने इन्साफ़ किया है । अगर दस रूहोंको एक जिस्ममें क़ैद किया है, तो जिस्म भी, मासाअल्ला, उतना ही लम्बा-चौड़ा बनाया है...चीज़ देखने लायक है ।"

चीज़ देखने लायक है इसके माने लखनऊमें बहुत कुछ थे । जल्दी ही एक मेला-सा उस महलके सामने जुड़ गया, जिसमें फ़ज़लअली रौनक़ बढ़ा रहा था । एक आता तो साथमें चार जन आते, और एक जाता, तो उसका स्थान दो घेर लेते । महलके सामनेका रास्ता चलना बन्द हो गया । लोग उस आदमीको देखना चाहते थे, जिसके भीतर खुदाने दस रूहोंको बन्द कर रखा है और जिसके अकेले शरीरमें दस शरीर समाये हुए हैं ।

इसी बीच नवाब सआदतअलीखाँने फ़ज़लअलीको बुलानेके लिए दूत भेजा । एक लखनवी पीनस लेकर नवाबका दूत फ़ज़लअलीके महलमें जा पहुँचा । पीनसके साथ चार मज़बूत कहार लगे हुए थे । जब फ़ज़ल-अली पीनसमें बैठ गया, तो उसने अपनी गरदनको सहारा देनेके लिए पीछे गाव तकिये पर टिका ली, भारी तोंदको पैरोंके ऊपर रखा और जब

अच्छी तरह जमकर बैठ गया तो, उसने इशारा किया कि अब पीनसको सावधानीसे उठाया जाये।

बीच आँगनमें चारों कहार पीनसके डण्डोंपर जुट गये। मगर पीनस टससे मस न हुई। कहारोंने भौंचक्के होकर एक दूसरेकी तरफ़ देखा। आज तक अगर वे लोग परोंका बोझ कन्धों पर लादकर चलते थे, तो आज उन्हें चक्कीके पाट उठाने पड़ रहे थे! फ़ज़लअलीके वज़ीर और नवाबके दूत दोनोंने उन्हें धमकाया: "याद रखना, अगर सरकारका मिज़ाज बिगड़ गया, तो कोड़े लगेंगे।"

कहारोंने घबराकर अपने ख़ुदाको याद किया, एक ज़ोरकी 'हेश्या' लगाई और झटकेके साथ पीनसके बमोंको उठाकर कन्धों पर रख लिया। इसके बाद शराबियोंकी तरह टेढ़े-मेढ़े क़दम रखते हुए वे लोग मुख्य द्वारकी ओर बढ़े। ज्यों-त्यों करके पीनस दरवाज़ेसे बाहर निकली। पीनसके डण्डे ज़ोर-ज़ोरसे बोलकर अपनी समस्त लचकका ज़ोर आज़मा रहे थे।

दरवाज़ा पार करते हुए ज़रा निचाई पड़ती थी। अनुभवी कहारोंने बहुत सावधानीसे निचाई पर पैर रखा और फिर एक बार अपने शरीरों का सारा ज़ोर तौलकर उन्होंने पीनस सँभालनेके लिए डण्डों पर ज़ोर दिया। लोगोंने ज़ोर-ज़ोरसे आवाज़ें लगानी शुरू कीं। भारी शोर बरपा हो गया। मगर...

मगर दो चार लचक और खाते ही डण्डोंका दम खिसक गया। पीछेके दोनों डण्डे चड़-चड़ करके टूट गये और पालकी एक ज़ोरदार 'थड' की आवाज़ देती हुई ज़मीन पर जा लगी। भीतर बेचारा फ़ज़ल-अली बोरा-सा लुढ़क कर रह गया।

अब क्या था, लोगोंने उसके दर्शन करनेके लिए पीनसके परदे फाड़ डाले। बीच बाज़ार, हज़ारों लोगोंके समूहमें, नीचे धरती ऊपर आसमान, फ़ज़लअली लेटा हुआ था—और लोग कहकहे लगा रहे थे।

इमामबाड़ेपर उस दिन सालाना जशन था। वहाँ हज़ारों फ़क़ीर इकट्ठे हो गये थे। उन्होंने भी जब सुना कि फ़ज़लअली जैसे व्यक्तित्वके दर्शन सुलभ हैं, तो अपने-अपने ठिकाने छोड़कर महलकी तरफ़ भाग खड़े हुए। एक तरफ़से उनका रेला आता हुआ दिखाई पड़ा।

इधर फ़ज़लअलीको उठाकर मज़बूत बाँसोंकी बनी पालकीमें रखनेका प्रबन्ध हो रहा था। उधर फ़क़ीरोंके दिलोंपर फ़ज़लअलीको देख-देखकर साँप लोट रहा था। आख़िर एकसे जब नहीं रहा गया, तो आसमानकी ओर हाथ उठाकर उसने कहा, "या अल्लाह, या परवरदिगार, तूने तो एक ही पेट इतना बड़ा पैदा कर दिया है कि उसमें तेरे पैदा किये हुए सारे नान (रोटी) और ग़िज़ा समा जायें—फिर तो ऐसा कर, तू हम ग़रीबोंको उठा ले।"

एक हवाको हिला देनेवाला क़हक़हा लगा और लोग फ़ज़लअलीको उठाकर पालकीमें रखा जाना देखते रहे। फ़ज़लअली निर्विकार भावसे यह तानाज़नी सुन रहा था। मगर चेहरेपर एक भी शिकन दिखाई न दे रही थी। हाँ, मुँहको प्रकट करनेवाली जो पतली-सी रेखा थी वह ज़रा चौड़ी हो गई थी।

इतनेमें भीतरसे वज़ीर साहब पचीस-तीस सिपाहियोंको लेकर निकले और इकट्ठी हुई भीड़पर कोड़े बरसाने लगे। मगर फ़ज़लअलीने बड़े कष्टसे एक हाथ उठाकर वज़ीरको रोका। वह पास आकर बोला, "हुज़ूर, ये लोग बदतमीज़ीपर उतर आये हैं। आपकी आला शख्सियतका मज़ाक उड़ा रहे हैं।"

फ़ज़लअलीने बुदबुदाते हुए कहा, "उड़ाने दो—खुदाने इनके साथ मज़ाक की है, ये लोग खुदासे मज़ाक कर रहे हैं। ऐसे ही सारी दुनिया चलती है।"

कोड़े बरसने बन्द हो गये। पालकी इस बार बड़ी थी और उसे उठानेके लिए आठ आदमी लगाये गये थे, इसलिए इस बार कोई दुर्घटना

नहीं हुई और पालकी सकुशल नवाब साहबके महलमें पहुँच गई। दीवानखानेमें एक बड़ी मसनद विशेष रूपसे फ़ज़लअलीके लिए बिछी हुई थी। उसीपर उसे बैठा दिया गया।

कुछ देर बाद नवाब साहब पधारे। फ़ज़लअलीने दोनों हाथ ज़मीन पर टेककर उठनेकी चेष्टा की और हिल कर रह गया। नवाबने मुसकराहट चेहरेपर लाकर कहा, "रहने दो, फ़ज़लअली, रहने दो। हमने तुम्हारी ताज़ीम (सम्मान-प्रदर्शन) कबूल की। कहो, इस बार तो तुम्हारी तन्दुरुस्ती पहलेसे कहीं बालातर नज़र आ रही है।"

फ़ज़लअलीने होंठों ही होंठोंमें कुछ कहा और आसमानकी ओर हाथ उठा दिया, जिसका मतलब नवाबने यह लिया कि सब ऊपरवालेकी मेहरबानी है। नवाब साहब फिर मुसकराये और बोले, "तो, फ़ज़लअली साहब, जो लोग अपना वादा पूरा नहीं करते उन्हें पहलेसे ज्यादा तन्दुरुस्त नज़र आनेका हक नहीं है—हम इस बारे में आपका ख्याल जानना चाहेंगे।"

अगर नवाब साहब सिकंदरकी जगह होते और फ़ज़लअली पोरसकी जगह, तो फ़ज़लअलीका उत्तर नोट करके यूनान भेजा जाता, जहाँ वह आज तक सुरक्षित रहता। उस बेचारे मोटे आदमीने कहा, "हुजूर, जो लोग तन्दुरुस्त होते हैं वे कभी वादा नहीं करते। वादा हमेशा वही आदमी करता है, जिसमें कोई कमी होती है, जो बीमार होता है।" फिर सिर झुका कर उसने बहुत ही गंभीर स्वरमें अपने जीवनकी कलई खोद दी। "आलीजाह, मैं जो तन्दुरुस्त नज़र आता हूँ, वास्तवमें यही मेरी बीमारी है।"

मगर इन सैद्धान्तिक बातोंसे आठ लाख रुपयेकी कमी पूरी नहीं होती थी। नवाबने इस बातको प्रकट किया। फ़ज़लअलीने फिर वादा किया कि इस साल नहीं, तो अगले साल सोलह लाख जमा कर देगा। न करे, तो जो इलाज चोरका सो उसका। नवाबको फिर अपने बचपनके खेलकूदकी

याद आई और मामला फ़ज़लअलीके हक़में रफ़ा-दफ़ा हो गया। उसे फिर ग़ाज़ीपुर जाकर हकूमत चलानेकी इजाज़त मिल गई।

फ़ज़लअलीका फिर वही दौर चलने लगा। जितना खाया जा सकता था, उतना खाना, बाक़ी अनखायोंमें बाँट देना और पड़े-पड़े संडराना। न कोई कहनेवाला था, न सुनने वाला। जो था वह लखनऊमें था और लखनऊ अभी साल भर दूर था।

सालभर गुज़र गया। ज़मींदारीमें सालकी गिनती इसी तरह होती है, जिस तरह हम लोग दिनकी करते हैं।

जब नियत तारीखोंपर फिर मालगुज़ारी नहीं भेजी गई, तो नवाब साहब इस बार बहुत बिगड़े। नवलराय बुराईपर तुला हुआ था ही। उसने समझाया कि लखनऊमें उसे बुलाना सिरदर्द मोल लेना है। अच्छा यह हो कि कोई और इंतज़ाम किया जाय।

नवाबने ठोढ़ी पर हाथ रखा, फिर ज़ोरसे हुक्म दिया," इसी वक़्त दो सज़ावाल बुलाये जायँ!"

सज़ावाल उस वक़्त कोतवालसे कम नहीं होते थे। कोतवाल शहरकी पुलिसका प्रधान होता था, तो सज़ावाल गश्ती पुलिसका। लिहाज़ा नवाब साहबका समन पहुँचते ही दो सज़ावाल तुरन्त आकर सेवामें उपस्थित हो गये।

नवाबने हुक्म दिया, "इसी वक्त तेज़ घोड़े लेकर ग़ाजीपुर जाओ। फ़ज़लअलीसे कहना कि एक-एक लाख रुपया हर महीने किश्तोंमें अदा करे, अगर न किया, तो सज़ा मिलेगी। जब तक एक लाख रुपया पहली किश्तका, और एक-एक हज़ार रुपया रोज़ तुम दोनोंकी तनख्वाह का न मिले, तब तक उसका खाना-पीना, उठना-बैठना—सिवा ज़रूरी ज़रूर-रियातके—बन्द कर दिया जाय। नवलराय, इन्हें परवाना मय हमारी मोहरके दे दिया जाय।"

नवलरायकी बांछें खिल गईं। यही तो वह चाहते थे। करमुल्ला

अब ग़ाज़ीपुरका सूबेदार बना ही रखा है ! झटसे दौड़कर अपने दफ्तरमें पहुँचे और एक परवाना लिखकर उसपर नवाब साहबकी मोहर कराई । वह परवाना लेकर सज़ावाल मारामार ग़ाजीपुर पहुँचे । साथमें सैकड़ों सिपाही थे । जाते ही उन्होंने फ़ज़लअलीके शरीरपर धरना दे दिया ।

किसी मोटे आदमीपर उसका खाना-पीना बन्द कर देने जैसा अत्याचार और क्या हो सकता है ! दोनों सज़ावालोंने अपनी शर्तें फ़ज़लअलीके निर्विकार मुखके सामने उपस्थित होकर रखीं और बिना किसी तरहका जवाब पाये दरवाज़ेपर आकर डट गये । फ़ज़लअलीने शून्य भावसे सारी स्थितिको देखा और बार-बार गाल फुलाकर जहाँ-का-तहाँ बैठा रह गया । समाचार सारे ग़ाज़ीपुरमें फैल गया । लोगोंकी भीड़ इकट्ठी हो गई । मगर फ़ज़लअलीकी उँगली तक हिलनेमें दर्द करती थी । मिट्टीके माधवकी तरह वह ग़रीब सूबेदार जहाँ-का-तहाँ पसरा पड़ा था ।

दोपहरको खानेका समय आया । सब सिपाहियों और दोनों सज़ावालों की दावत की गई, मगर जब एक थाल सजाकर भीतर भेजा जाने लगा, तो सज़ावालोंने रुकवा दिया । उनमेंसे एकने केवल इतना कहा : "इजाज़त नहीं है ।"

फ़ज़लअलीके सारे सरदारोंके चेहरे यह सुनते ही मुरझा गये । उस वक्त सब-के-सबने अनशन किया । ऐसा अत्याचार तो आज तक न देखा था, न सुना था । अनेक, जो कच्चे दिलके थे, आँसू भी टपकाने लगे । मगर सज़ावाल जो भेजे गये थे, वे मामूली सज़ावाल नहीं थे, बहुत जबर थे, जर्रा थे, ज़ालिम थे, उनकी भौंहों पर बल तक नहीं पड़े ।

रातके वक्तका खाना उन लोगोंने हण्डे जलवाकर, ठीक उस दरवाज़ेके बीचमें बैठकर खाया, जहाँसे फ़ज़लअली उन्हें देख सकता था । खाना भी एक-एक लुकमेको देख-देखकर, उसकी तारीफ़ आपसमें कर-करके, बहुत स्वाद ले-लेकर खाया—और इस बीच फ़ज़लअलीका सम्पूर्ण आकार-प्रकार, जिस मुद्रामें पहले बैठा था, उसी मुद्रामें अन्त तक बैठा रहा ।

मजाल है कि चेहरेपर एक शिकन तक आ जाय ! हाँ, आँखोंके भीतरसे, नथुनोंकी श्वाससे, और गालोंकी फड़कनसे एक चीज़ थी, जो बार-बार सूक्ष्म वायुमें अपनी उपस्थितिका आभास करा रही थी—और वह चीज़ थी भूख, एक मोटे आदमीकी भूख !

रात न जाने बेचारे फ़ज़लअलीपर कैसी गुज़री। सुबह होते ही फ़ज़लअलीके वज़ीर साहब एक सज़ावाल साहबके पास पहुँचे और बोले, "जनाबआली, हम लोग सब मिलकर पैसा इकट्ठा कर रहे हैं और अगर खुदाने चाहा, तो कल तक आपके हाथमें एक लाख रुपया..."

"और तीन दिनकी हम दोनोंकी तनख्वाह, यानी छः हज़ार रुपये ज्यादा," सज़ावालने उन्हें बीचमें ही टोका।

वज़ीरने खूनका घूँट पीया। फिर बोला, "अच्छा छः हज़ार वह भी हो जायेगा खुदाने चाहा तो।"

सज़ावालने निर्लिप्त भावसे इनकार करते हुए कहा, "और अगर खुदाने न चाहा तो?"

"तो फिर किसमें ताक़त है कि खुदाकी मरज़ीको टाल सके?" वज़ीरने सवाल किया।

"बहुत ठीक," सज़ावाल बोला, "अगर खुदाकी यही मरज़ी हुई कि बेचारे फ़ज़लअली साहबका सम्मानित व्यक्तित्व बिना खाये-पोये ही इस दुनियासे उठ जाये, तो मजबूरी है।"

"मगर, जनाब, मैं तो आससे यह दरख्वास्त करने आया था कि मेहरबानी करके कल तक सबर कीजिए और हुजूरको खाना पहुँच जाने दीजिये," वज़ीरने प्रार्थना की।

"इजाज़त नहीं है," सज़ावालने संक्षिप्त और खरा उत्तर दिया।

वज़ीरका जी चाहा कि सज़ावालका भेजा अपनी तलवारकी मूठसे फोड़ दे। पर मन मसोस कर रह गया। ऊँचे स्वर में चिल्लाकर फ़ज़ल-

अलीको लक्ष्य करते हुए उसने कहा, "हुजूर, आप फ़िकर न करें, हम लोग रकम इकट्ठी कर रहे हैं।"

फ़ज़लअलीने इस घोषणाको भी श्रोताके भावसे सुना।

सरदारोंने उस दिन प्रजापर कड़ाई करनेमें सीमा पार कर दी, अपने-अपने घरोंके ज़ेवर बेच दिये, हकूमतकी कई इमारतें नीलाम हो गई। अगले दिन तक उन लोगोंने एक लाख छः हज़ार रुपया एकत्र किया और सारे सरदार मिलकर सज़ावालोंके पास आये। उन्हें थैली दिखाकर उन्होंने कहा, "देखो, इस थैलीमें एक लाख छः हज़ार रुपये हैं।"

जिस बोरेको वे लोग थैली बता रहे थे उसे देखकर एक सज़ावाल बोला, "अच्छा, हैं।"

"अब इन्हें देंगे खुद सरकार तुम्हारे हाथोंमें," वज़ीर बोला। "उनकी आज्ञाके बिना हम एक पैसा भी तुम्हें नहीं देंगे।"

सज़ावाल होंठों ही होंठोंमें मुसकराया। बोला, "अच्छी बात है। यह बात हमें मंजूर है।"

दरवाज़ा खोल दिया गया और सब सरदार मय कोनों सज़ावालोंके फ़ज़लअलीके सामने पहुँचे। वह अपने आसनपर जैसा-का-तैसा पड़ा था। वज़ीरने कहा, "हुजूर, हम आपके खिदमतगार आपसे माफ़ी चाहते हैं कि हम आपके कुछ काम नहीं आ सके, सुखके साथी रहे और दुःखमें मुँह ताकते रहे। हम लोगोंने यह एक लाख छः हज़ारकी रक़म इकट्ठी कर ली है। इजाज़त दीजिए कि इस रक़मको सज़ावाल साहबको देकर बिदा किया जाय।"

फ़ज़लअलीमें कोई हरकत पैदा नहीं हुई। आँखें सामने देख रही थीं, सो देखती रहीं। पलकें झपकती रहीं, जिससे पता चलता था कि जीव कायाका पिंजरा छोड़कर नहीं भागा है। बस, एक बुदबुदाहट उसके होंठों से निकली—बहुत धीमी सीः "वज़ीर साहब, हमें एक तजरुबा हुआ है।"

फ़ज़लअलीको कोई तजरुबा हुआ है यह बात जानकर उसके सरदार

लोग उत्सुक हो गये। सज़ावाल लोगोंने भी कान खड़े किये। वज़ीरने पूछा, "हुजूरको क्या तजरुबा हुआ है?"

फ़ज़लअलीने कहा, "हमें तजरुबा हुआ है कि यह ज़िन्दगी दूसरोंके आसरेपर है तो है, नहीं तो नहीं है।"

बहुत साधारण बात थी। सरदारोंने एक दूसरेकी ओर इस आशयसे देखा कि शायद इसमें किसीको कोई नवीनता नज़र आई हो। फिर वज़ीर बोला, "सो तो हई है, हुजूर।"

फ़ज़लअलीने अपनी बात जारी रखी, "और जिनके आसरेपर है आख़िर उन्हें तो हम देते नहीं, जिनके आसरे पर नहीं हैं, उनका घर भरते हैं।"

"क्या बात कही है, सरकार!" वज़ीर उछल पड़ा और इसके साथ-साथ सरदारोंने भी 'वाह, वाह' की। वज़ीर बोला, "हजूरने बस निचोड़ कह दिया है हज़ार तजरुबोंका।"

फ़ज़लअलीने बातको और आगे कहा, "और जिन्हें हम देते नहीं, वे फिर रोते हैं, चीखते हैं और ईर्ष्या करते हैं—हाथ उठा-उठाकर देनेवालेको कोसते हैं, यहाँ तक कि कभी मज़ाक भी कर बैठते हैं, जिस पर देनेवाले नाराज़ हो जाते हैं।"

"जी, हुजूर," वज़ीर इसका मतलब ठीकसे न समझकर आशङ्काके भावसे बोला। "फिर?"

फ़ज़लअलीका स्वर स्पष्ट और आज्ञासूचक हो गया। उसने हुक्म दिया, "यह एक लाख छः हज़ार रुपया लखनऊ ले जाओ, और इमाम-बाड़ेके उन फ़कीरोंमें बाँट दो, जिन्होंने हमारी मज़ाक उड़ाई थी। उनसे कहना कि उनका मज़ाक इतना ज्यादा क़ीमती था कि उसकी पूरी क़ीमत नहीं चुकाई जा सकती, मगर यह एक कोशिश है।"

सज़ावाल, सरदार लोग, वज़ीर—सब-के-सब आँखें फाड़कर तीन

दिनके भूखे-प्यासे फ़ज़लअलीको देख रहे थे और अभी तक उनके कानोंमें उसकी आज्ञाके स्वर गूँज रहे थे।

"हुजूर...!" वज़ीरने आपत्ति प्रकट करनी चाही।

"बकवास मत करो," फ़ज़लअली चिल्लाया। "हुक्म इसी वक्त पूरा किया जाय!"

"जो हुक्म, हुजूर," वज़ीरने सहमकर कहा, और सारे सरदारोंके साथ बाहर आ गया।

मगर सज़ावाल दम-ब-खुद खड़े थे। जब वे हिले, तो सबसे पहली हरकत उनकी यह थी कि हाथ उठकर कानों तक गये। उन्होंने तोबा की, छतकी ओर हाथ उठाकर एक फ़रिश्तेको भूखा रखनेके कुफ़्की माफ़ी चाही और बाहर निकल आये।

उसी दिन, बिना रक़म वसूल किये ही दोनों सज़ावाल, मय अपने लाव-लश्करके, लखनऊके लिए रवाना हो गये। नौकरी जाये, तो जाये, मगर अब और कुफ़् नहीं होगा।

मगर हुआ कुछ नहीं। नवाबने मस्जिदमें और नवलरायने मन्दिरमें पश्चात्ताप स्वरूप ज़मीनपर लेटकर कुछ कहा और अपने-अपने परमात्मासे क्षमा की प्रार्थना की।

तभी तो कहा था कि हर मोटे आदमीका एक इतिहास होता है।

• समयकी आँखें

सौ सालसे भी ज़्यादा हो गये हैं। लखनऊकी गद्दी नवाब वाजिदअली शाहके हाथ लगी-ही-लगी थी। दुनियाकी रंगीनियाँ शाही महलोंमें सिमट गई थीं। करुणा, दीनता और उत्पीड़न सखियोंकी तरह गोल बनाकर रिआयाकी छातीपर रस्सी-कुदानका खेल खेल रहे थे। लखनऊकी सड़कें कंजूस महाजनोंके दिलोंकी तरह तंग थीं। शाही अरमानोंका बोझ ढोनेवाले ऊँट और हाथी जब उन गलियोंसे गुज़रते थे, तो उनके इधर-उधर बनी हुई दूकानोंके छज्जे गिर पड़ते थे। बड़े-से-बड़े अमीरकी पगड़ी सरे-बाज़ार उछल जानी मामूली बात थी। रात-ही-रातमें राहकी भिखारिन महलोंकी मल्का बन सकती थी। वाजिदअली शाहकी हकूमतमें कुछ असम्भव नहीं था।

फ़खरुल ज़मानी, नवाब ताज आरा बेगम, कालपीके हसीनुद्दीनखाँकी बेटी, विगत नवाब अमजदअली शाहकी बेगम, और नवाब वाजिदअली शाहकी माँ थी। लोग उसे आदरसे जनाब औलिया बेगमके नामसे पुकारते थे। पतिके मरनेपर रहन-सहनमें कुछ परिवर्तन ज़रूर हो गया था, मगर रुतबा अब भी वही माना जाता था, जो वाजिदअली शाहकी प्रधान बेगम, खास महलसे भी बड़ा था।

सरदियोंके दिनोंमें औलिया बेगमका निवास छतर मंज़िलमें होता था, गरमियोंमें चौलखी महलमें और बरसातमें द्वारकादास बाग़में, जहाँसे गोमतीका दृश्य साफ़ दिखाई पड़ता था। बरसातमें बाग़ महलकी खिड़कीपर बैठकर अटारीसे गिरती हुई बूँदोंको वह अक्सर देखा करती थी।

जालीकी पच्चीकारीसे उलझकर जहाँ वर्षाकी झड़ें दीनहीन लघु बूँदोंका आकार धारण कर लेती थीं, वहाँ खुलेमें गोमतीके विशाल वक्षको पहाड़की

तरह उभार देती थीं, जब-तब अपने साथ किनारेपर बसे हुए गाँवों, झोंप-ड़ियों और असंख्य ग्रामवासियोंको लिये हुए गोमतीका वेग उन्मत्त राक्षसकी भाँति उछलता-कूदता चला जाता था।

ऐसे ही दिनोंमें एक दिन खिड़कीपर बैठी औलिया बेगम, रातके समय कल्पनाशील कथावाचक गियासबेगके द्वारा सुनाई हुई बहादुर वज़ीर और खलनायिका बिस्वालखीकी कहानीको मन-ही-मन दोहराती हुई गोमतीके तीव्र प्रवाहकी ओर देख रही थी कि सहसा वह चौंककर ज़ोरसे चिल्ला उठी :

"अरे, कोई है ?"

हुक्मकी इन्तज़ारमें कमरेकी ड्योढ़ीपर खड़ी बहरुन्निसा तत्काल भीतर आई और कोरनिश झुकाकर बोली, "हजूर, लौंडी हाज़िर है।"

बेगम आवेशके कारण खड़ी हो गई। बेचैनीके साथ गोमतीके वक्षकी ओर उँगली उठाकर उसने कहा, "देखो, देखो, कोई मौतके जबड़ोंकी तरफ़ खिंचा जा रहा है...।"

बहरुन्निसाने खिड़कीमेंसे झाँका। दूर गोमतीकी उठती-गिरती छाती पर एक इनसानकी रूपरेखा दिखाई पड़ रही थी। बेगम चिल्ला रही थी, "जल्दी करो, ग़ुलामोंको दौड़ाओ। ओह, यह दरिया हर साल न जाने कितनोंको खा जाता है!"

हुक्मकी देर थी, काममें देर नहीं हुई। उसी समय दसियों ग़ुलाम गोमतीकी तरफ़ दौड़ पड़े।

बहते हुए छप्परके तिनकेको मुट्ठीसे भींचे, जीवनके कच्चे धागेको कसकर पकड़े हुए, पानीके थप्पड़ोंसे पिटती-जाती वह एक बुढ़िया थी। उमर सौके आसपास होगी। बेरीकी सूखी झाड़ीकी तरह थर-थर काँपती हुई उसकी देह सिमट गई थी। लखनऊकी कमज़ोर सत्ताकी भाँति उसकी गरदन गड़गड़ हिल रही थी। अंगरेज़ रेज़ीडेण्ट रिचमण्डके बालोंकी तरह उसके सफ़ेद बाल पानीसे खालके साथ चिपक गये थे। चेहरेपर पड़ी

हुई अनगिनत झुर्रियाँ लखनऊकी गद्दीपर अंगरेज़ोंके दाँतोंके निशान गिन रही थीं। दाँतोंकी दो जड़ें दिखाता हुआ उसका पोपला मुँह दिन-रात खाली हुए अवधके खज़ानेकी कहानी कह रहा था।

उसे आगके सामने तपाकर, साफ़ पोशाक पहनाकर और थोड़ा-बहुत खिला-पिलाकर औलिया बेगमके सामने लाया गया। दीवारोंपर लगे क़देआदम शीशों, छत पर जड़े झाड़फ़ानूसों और फ़रशपर पाँवोंको छिपा देनेवाले कालीनोंके रोओंको फटी आँखोंसे निरखती वह बुढ़िया जब बेगम औलियाके सामने आई, तो छतकी ओर दोनों हाथ उठाकर उसने दुआ माँगी : "या खुदा, तेरी कुदरतमें हेरफेर न हो।"

अपने द्वारा एक ग़रीबके प्राण बच जानेकी खुशीमें बेगम हँसी। "अरी, बुढ़िया, खुदाकी कुदरतमें फेर-बदल न होता, तो तेरी जान कैसे बचती?"

बुढ़ियाने अपनी धुँधली आँखोंसे बेगमके चेहरेको पढ़नेकी कोशिश करते हुए कहा, "जान बच जाती है, मगर हक़ीकत नहीं बचती। जब जंगलकी हवा चलती है, तो ज़मीनके तिनके आसमानपर और आसमानके तिनके ज़मीनपर आ जाते हैं। ऐसेमें वे ही पेड़ बचते हैं, जो अपनी जड़ें जमा लेते हैं। खुदा तुझे बरकत दे, बेटी, कि तू आनेवाली हवाको सूँघ सके।"

बेगमने कहा, "खुदा हमपर मेहरबान है। तुम्हारी दुआओंके लिए हम तुम्हारा शुक्रिया अदा करते हैं। तुम बहुत अक्लमन्द हो, अपनी उमरका सही आईना हो। तुम्हारे आख़िरी वक्त तक हम तुम्हारी गुज़र-बसरके लिए तीन रुपये महीना वज़ीफ़ा बाँधते हैं। नवाब वज़ीर अली नक़ी खाँके दफ़्तरसे हर महीने वज़ीफ़ेकी रक़म ले जाया करो। तुम्हारा और भी कोई है?"

बुढ़ियाने फिर आपनी आँखें बेगमकी तरफ़ उठाईं, फिर बोली, "वक्त जिसका है, उसका सब कोई है।"

बेगम प्रसन्नतासे लगभग चिल्ला उठी : "बहुत खूब ! हमारे जी हजूर अब तक हमें बताते थे कि जिसका कोई नहीं उसका खुदा होता है, मगर तुमने हमें बताया कि खुदा भी उसीका होता है, जिसका वक्त होता है। हम तुम्हें याद रखेंगे।"

बुढ़ियाने सम्मानमें झुककर फ़रशी कालीनके रोओंको छुआ। वापस लौटते हुए उसने कहा, "जीती रहो, बेटी। जो याद रखता है वह कभी नहीं मिटता। तूने मुझे दरिया पार कराया, खुदा तुझे समन्दर पार कराये।"

"जो याद रखता है वह कभी नहीं मिटता," बेगमने इस सूत्रको बार-बार मन-ही-मन दोहराया। बुढ़ियाके जानेके बाद भी वह बहुत देर तक उसे अपने सामने खड़ी देखती रही। कुछ देर बाद बहरुन्निसाको पुकार कर बेगमने हुक्म दिया : "इस बुढ़ियाका पता-ठिकाना मालूम कर लो। नवाब वज़ीरके दफ़्तरमें हमारा फ़रमान पहुँचाओ कि इसके वजीफ़ेकी रक़म हर महीने इसके घर पर पहुँचा करे, इसे कचहरी आनेकी तकलीफ़ न दी जाय। उमर और अक्ल हमेशा एक साथ नहीं मिलते।"

बहरुन्निसाने आज्ञाके सम्मानमें अपना सिर झुकाया।

दिन गुज़र गया और रात आ गई। इस बीच बेगमने कई बार क़ुरान उठाई, मगर न जाने क्यों बार-बार उसके सामने बुढ़ियाकी शक्ल आ खड़ी होती। 'तूने मुझे दरिया पार कराया, खुदा तुझे समन्दर पार कराये।' कितनी सीधीसाधी दुआ थी ! काश कि बेचारी बेगम बुढ़ियाके इन निर्दोष शब्दोंके पीछेसे अपना वह भविष्य झाँक पाती, जब लगभग दस साल बाद वह मल्का विक्टोरियासे अपने बेटेका तख्त वापस माँगनेके लिए समुद्र पार करके इंग्लैण्ड गई थी।

पहले पहरके खत्म होनेकी तोप छूट चुकी थी। नवाब औलिया बेगमकी नींदको सुखद बनानेके लिए मशहूर अफ़सानानिगार मिरज़ा गियासबेग हाज़िर थे। लौंडियाँ बेगमके पाँव दबाकर जा चुकी थीं। पहरा

बदल गया गया था और हुक्का तैयार करनेवाली लौंडी कश्मीरी खमीरेकी चिलम उस पर रख रही थी।

जबतक नवाब अमजदअली शाह जीवित थे, मिरज़ा गियासबेगका स्थान उस परदेके पीछे होता था, जो बेगमके पलंगसे कुछ दूरपर खिंचा रहता था। मिरज़ा गियासबेग बहुत दिनोंके बाद इस वास्तविकताको समझ पाये थे कि कमरेमें चारों तरफ़की दीवारोंपर जो क़दे-आदम आईने लगे हैं, इन्हींमेंसे सामनेके आईनेमें बेगम उनकी सब हरकतें देख सकती थी, मगर वह बेगमके पलंगका पायाँ भी नहीं देख सकते थे। जिस दिन उन्होंने इस बातको जाना उस दिन उनके सारे बदनमें भयकी एक तेज़ लहर दौड़ गई थी। अगर उनकी भावभंगिमासे, बेगमको सामने न जानकर, कोई बेअदबी हो जाती, तो उनका सिर धड़से अलग हुआ रखा था।

मगर बेगमके विधवा होनेके बाद स्थिति बदल गई थी। अब मिरज़ाका स्थान बेगमके सिरहाने लगे हुए एक नीचे आसनपर था, जिसके पीछे गावतकिया लगा रहता था। बेगम अब अधिक निकटतासे उनके साथ बातें कर सकती थी। फिर भी मिरज़ा साहबके लिए भयका अब अधिक बड़ा कारण था। मिरज़ा सत्ताधारियोंसे निकटता पसन्द नहीं करते थे।

जब बहरुन्निसाने मिरज़ा साहबको उनके आसनपर पीछेवाले परदेसे लाकर बैठाया, तो बेगम वहाँ नहीं थी। जब बेगमने ख्वाबगाहमें क़दम रखा, तो मिरज़ा हड़बड़ाकर उठे और दायें हाथसे कालीन छूनेके लिए झुकते हुए उन्होंने कहा "बन्दा कोरनिश बजा लाता है।"

बेगमने कहा, "मिरज़ा साहब, आपका कलका अफ़साना बहुत दिलचस्प रहा। मगर आज हम आपसे अफ़साना नहीं, एक और अफ़सानेके बारेमें बातें करना चाहते हैं।"

"बन्दा सिर आँखोंसे हाजिर है," मिरज़ाने कहा।

बेगम पलंगपर बैठ गई और उसी समय लौंडी उनके सामने हुक्का

रख गई। बेगमने पेंच होंठोंमें दबाकर एक हल्का-सा कश खींचा और खुशबूदार धुएँकी एक हल्की-सी परत हवामें तैर गई। हुक्केकी तैयारी पर बेगमकी मुद्राका बहुत कुछ दारोमदार था। यह हुक्केपर नियत लौंडीका कर्त्तव्य था कि वह पहले ही कश खींच-खींचकर तम्बाकूको चेतन कर दे। इस वक्तके हुक्केने बेगमको खुश कर दिया। वह बोली :

"आज खुदाने हमारे हाथों एक बुढ़ियाकी जान बचाई। क्या आपने वह क़िस्सा सुना है?"

"अबतक तो यह क़िस्सा सारे लखनऊने सुन लिया है, हजूर।"

"बहुत खूब!" बेगमने कहा, "किसीने सच कहा कि कहानी-किस्सोंके पर होते हैं। मगर खास बात यह नहीं कि बुढ़िया बच गई और वह भी इसलिए कि हमने उसे देख लिया था। खास बात यह है कि बुढ़िया लखनऊ दरबारके दानिशमंदोंसे कहीं बढ़-चढ़कर थी।" इसके बाद बेगमने बुढ़ियाके साथ हुए वार्तालापको ज्यों-का-त्यों मिरज़ा साहबसे कह सुनाया। फिर बोली, "क्या आप बुढ़ियाकी इन बातोंकी व्याख्या किसी अफ़सानेसे कर सकते हैं, मिरज़ा साहब?"

मिरज़ासाहब पाँच सौ रुपये महीना इन्हीं बातोंकी तनख्वाह पाते थे। यही नहीं, वह अपने हुनरमें उस्ताद भी थे। उन्होंने कहा, "हजूर, इन-सान आजतक अगर हारा है, तो वक्तकी आँखोंकी खूबसूरती बयान करनेमें हारा है। फिर भी एक अफ़साना शायद आपकी दिलबस्तगी कर सके।"

इसके बाद मिरज़ासाहबने कहानी आरम्भ की :

लाखों बरस गुज़र गये, एक बार खुदाके फ़रिश्ते जिब्रायल और शैतान इबलीसमें एक दिलचस्प बहस छिड़ गई। शैतानका कहना था कि अगर इनसानको अँधेरेमें न रखकर, उसे उसका भविष्य बता दिया जाये, तो यह आनेवाली तकलीफ़ोंसे अपना बचाव कर सकता है और सुखी हो सकता है। जिब्रायल कहता था कि होता वही है जो खुदाको मन्जूर होता है। अगर इन्सानको खुदाकी मरज़ीका पता पहलेसे ही लग जाये,

तो आनेवाले गज़बसे डर-डरकर आधा हो जायेगा और इस तरह उससे भी ज्यादा तकलीफ़ भुगतेगा, जितनी तकलीफ़का वह हक़दार है। बहुत बहस-मुबाहसेके बाद दोनोंमें यह बात ठहरी कि पहले इसका प्रयोग जानवरोंपर करके देख लिया जाय।

दोनों फ़रिश्ते आसमानसे ज़मीनपर उतर आये। चलते-चलते वे जंगलमें पहुँचे, जहाँ आसमानपर हज़ारों गिद्ध और बाज़ मँडरा रहे थे। जिब्रायलने उन गिद्धोंमेंसे एकसे पूछा कि उन्होंने आसमानपर इतना तूफ़ान क्यों बरपा रखा है क्योंकि जंगलमें कोई भी मुरदा दिखाई नहीं पड़ रहा है। गिद्धने जवाब दिया कि इस जंगलका बादशाह एक शेर पट्ठा है। सबके सब गिद्ध उस शेरको खाना चाहते थे, मगर क्योंकि वह बहुत ताक़तवर था, इसलिए ज़मीनपर उतरते हुए डर रहे थे।

जिब्रायलने कहा, "जब तुम लोगोंको ज़मीनपर उतरते हुए डर लगता है, तो तुम किस तरह उस बहादुर और जवाँमर्द शेरको खा सकते हो?"

गिद्धने कहा, "क्या तुम नहीं जानते कि उस शेरकी आँखें नहीं हैं? आँखें न रहनेसे वह दोस्त और दुश्मनकी पहचान नहीं कर सकता। वह उसीकी हालतसे दुखी दोस्तोंको खा जाता है और खुशामदी दुश्मनोंकी मीठी बोलियाँ सुनकर उन्हें अपना दोस्त समझता है। उसके वे ही खुशामदी दोस्त जंगलमें, दूर, उसके लिए एक गड्ढा खोद रहे हैं, जिसमें फँसकर गिर जानेके बाद उसकी वह ताक़त उसके कुछ भी काम नहीं आयगी, जिसकी वजहसे अब जङ्गलका बली-से-बली जानवर उसके पास जाता घबराता है। दुश्मनोंकी खुशामदसे भरी शेरोशायरीने उसके कान बहरे कर रखे हैं। वह दिन दूर नहीं, जब हमें उसका गरम-गरम ताज़ा गोश्त खानेको मिलेगा।"

जिब्रायल और शैतानको यह बात सुनकर बहुत अचम्भा हुआ और वे दोनों ज़मीनपर उतरकर उस शेरके पास पहुँचे। उसके पास सैकड़ों गीदड़, भेड़िये और हिरन वग़ैरह जमा थे। अपनी ताक़तके घमण्डमें चूर

होकर वह अपने पुट्ठोंको हिलाता हुआ बैठा था। उसकी पीठके पीछे उसकी वफ़ादार और मददगार लोमड़ी भी उदास बैठी थी। रह-रहकर शेर सिर ऊपर उठाकर गुर्रा उठता था, जिससे गीदड़ सहमकर दो-दो क़दम पीछे हट जाते थे।

शैताननने सलाह दी कि अगर इस शेरको इसका भविष्य बता दिया जाय, तो यह अपनी आनेवाली मौतसे बच जायगा। जिब्रायलने भी यही सोचा और दोनों शेरके सामने जा पहुँचे। उन्होंने सारी हक़ीकत शेरके सामने बयान कर दी और कहा कि अगर वह मौतके फन्देसे बचना चाहता है, तो लोमड़ीकी सलाहपर चले।

मगर शेरने सवाल किया, "अगर तुम सच कहते हो, तो बताओ वह गड्ढा कितनी दूर है, जो मेरे लिए खोदा गया है ?"

जिब्रालयने गुस्सा होकर कहा, "न सिर्फ़ तुम अपनी ही आँखोंसे देख सकते, बल्कि वक़्तकी आँखोंसे भी नहीं देख सकते, इसलिए तुम ही नहीं, तुम्हारे मददगार भी साथ-ही-साथ उस गड्ढेमें गिरेंगे, जहाँसे सिर्फ़ मौत ही तुम्हें निकाल सकेगी।"

यह सुनकर शेर बड़े ज़ोरसे दहाड़ा और जिब्रायल व शैतान इब्लीस हवाकी शक्लमें बदलकर अपने रास्ते लगे। इब्लीस इस इम्तहानसे ख़ुश था। उसे पक्का यक़ीन था कि शेर अपनी उमर पूरी करके ही मरेगा।

कुछ दिनों बाद इब्लीसने जिब्रायलसे कहा, "आओ देखकर तो आयें हमारे दोस्त कि शेर और लोमड़ीपर अपने भविष्यकी जानकारीका कैसा असर पड़ा।"

दोनों फ़रिश्ते फिर धरती पर आये, तो देखा कि बाज़ और गिद्ध अभीतक आसमानपर मँडरा रहे हैं, गीदड़ोंकी जमात ज्यों-की-त्यों जमा है। फ़रक सिर्फ़ इतना है कि जिस गड्ढेका ख़तरा शेरको दिखाया गया था वह उसके काफ़ी नज़दीक आ चुका था। एक फ़रक़ यह भी था कि लोमड़ीके बदनकी हड्डी-हड्डी चमक रही थी।

जिब्रायलने शैतानसे कहा, "देखा तुमने ? जो बेवकूफ़ होते हैं उन्हें उनका भविष्य बतानेवाले भी बेवकूफ़ बनते हैं, और जो अक्लमन्द होते हैं, वे भविष्यको वक़्तसे पहले जानकर इस लोमड़ीकी तरह दुबले हो जाते हैं। मगर फिर भी क्योंकि वे बेवकूफ़ोंके साथ बँधे हुए होते हैं, इसलिए ख़ुदा भी उनका साथ छोड़ देता है। जो समयकी आँखोंसे देखता है वही इन्सान दीदेवाला है, अलावा इसके सब अन्धे हैं।"

लेकिन शैतानको यक़ीन न आया। कुछ दिनों बाद वह जिब्रायलको बताये बिना ख़ुद उस जंगलमें शेरकी ख़ैरियत जाननेके लिए आया। मगर देखता क्या है कि शेरकी हड्डियां ही बाक़ी रह गई हैं और माँस चील और कौवे नोचकर खा गये हैं। बेचारी लोमड़ीका भी यही हाल था। यह देखकर शैतान अपना मुँह छिपाकर वहाँसे भाग गया।

मिरज़ा गियासबेगके मुँहसे यह जानवरोंकी कहानी सुनकर बेगम औलिया बहुत हँसी। शैतानको मुँहकी खानी पड़ी यही उनकी प्रसन्नताका सबसे बड़ा कारण था। उन्होंने कहा, "मिरज़ा साहब, क्या यह कहानी सच है?"

मिरज़ा साहबने सिर झुकाकर कहा, "मल्कए आलम, कहानियाँ कभी सच नहीं होतीं, फिर भी कहानियोंसे बड़ा सच कोई नहीं होता। ख़ुदा कभी यह नहीं चाहता कि इन्सानको उसका भविष्य पता चल जाये। भविष्यमें क्या हो सकता है इसका ज्ञान ही मनुष्यके लिए सबसे बड़ी चीज़ है।"

"बहुत खूब!" बेगम औलिया खुश होकर बोली, "मिरज़ा साहब, हमें आपका यह अफ़साना बहुत पसन्द आया। इसका एक-एक लफ़्ज़ एक-एक सोनेकी मोहरके लायक़ है।"

मगर मिरज़ा साहबका मतलब केवल यही नहीं था कि बेगम इस अफ़सानेको मोहरोंसे तोलें। वह इसके बहाने कुछ और जताना चाहते थे। वह कुछ और क्या था यह आँखोंमें उँगली गड़ाकर बेगमको

सुझाया नहीं जा सकता था। उन्होंने कहा, "हजूर, अक्लमन्दोंको इशारा काफ़ी होता है।"

"नहीं, नहीं," बेगमने कहा, "मिरज़ा साहब, हम इशारा ही नहीं देंगे, सचमुच एक लफ़्ज़के लिए एक-एक मोहर अता फ़रमायेंगे।" साथ ही साथ उन्होंने हुक्म तामील करानेके लिए लौंड़ीको पुकारा: "बहरुन्निसा!"

मिरज़ा साहबने होंठ काट लिये। शासकोंकी आँखोंमें उँगली गड़ा कर उन्हें सही मार्ग सुझानेका कर्त्तव्य समयके साहित्यकारोंका होता है। मिरज़ा साहब उसके लिए आज कमर कसकर आये थे, उन्होंने एक क़दम और आगे रखा: "हजूर, आमोद-प्रमोद, नाच-रंग, हीरों-पन्नोंकी चमकमें फँसकर सच भी झुठला जाता है। मेरी कहानीका एक-एक पात्र आजके लखनऊमें मौजूद है।"

"माशाअल्लाह!" बेगम खुशीसे चिल्लाकर बोली, "उस चिड़ियाघरको हम ज़रूर देखेंगे और जब हम देख लेंगे, तो आपको इनामीइकरामसे लाद देंगे।"

मिरज़ा साहबके होंठोंमें खून निकल आया। वह अन्तिम पग रखनेके लिए खुदाको याद करते हुए बोले, "हजूर, क्या यह कल्पना नहीं की जा सकती कि जहाँपनाह, ग़रीबपरवर, वाजिदअली शाह बहादुर इस कहानी......"

"ज़रूर पसन्द करेंगे, मिरज़ा साहब", बेगमने कहा। "लखनऊमें कौन ऐसा है, जो आपका लोहा न मानता हो?"

इतनेमें बहरुन्निसा आ गई। बेगमने हुक्म दिया, "मिरज़ा साहबको जाते वक़्त दो हज़ार मोहरें अदा की जायें।"

"जो हुक्म," कहकर बहरुन्निसा फिर ख्वाबगाहसे बाहर हो गई।

मिरज़ा साहबने जीवनका मोह छोड़ दिया। सीधे तनकर उन्होंने

कहा, "हजूर, आप दानिशमन्दोंकी सरताज हैं। बहने वाली बुढ़िया जो न बता सकी, यह बन्दा जो न बता सका, वह ग़ुलामकी यह कहानी बता रही है। ग़ुलाम अर्ज़ करना चाहता था कि हज़ूर बेगम ज़रा कल्पनासे काम लें। लखनऊका हर बाशिन्दा समझता है कि ग़ुलामकी इस कहानी का शेर खुद जहाँपनाह वाजिदअलीशाह बहादुर हैं।"

सुनते ही बेगम औलियाकी भवें तन गईं। बिजलीकी तरह पलंगसे उठकर वह चिल्लाई, "क्या कहा! तो यह अफ़साना इस तरह सुनाया जा रहा था......तुम......तुम एक हक़ीर ग़ुलाम और तुम्हारी यह हिम्मत......! बहरुन्निसा!"

बहरुन्निसा आवेशका यह स्वर सुनकर जहाँ थी वहींसे दौड़ पड़ी। "हजूर, लौंडी हाज़िर है।"

बेगमने दहाड़कर कहा, "मिरज़ाको इसी वक़्त लोहेके पिंजरेमें बन्द करवा दिया जाय। कल तीसरे पहरसे भीगी हुई बेंत इनकी पीठपर उस वक़्त तक लगती रहें, जब तक इनका दम निकलकर हवामें उड़ न जाय।"

"जो हुक्म, "बहरुन्निसा इस आज्ञाका सही कारण न समझकर बोली। "लौंडी यह फ़रमान हू-ब-हू बजा लायेगी।"

बहरुन्निसाने इशारा किया और मिरज़ा साहब बेगमके फड़कते हुए शरीरके सम्मानमें ज़मीन छू कर वहाँसे लौंडीके पीछे-पीछे चले गये। उन्होंने अपना कर्त्तव्य पूरा कर दिया था।

लम्बी गैलरीसे बाहर निकलते-निकलते बहरुन्निसाने बहुत संक्षेपमें मिरज़ा साहबके मुँहसे सारा माजरा सुना। सुनते-सुनते उसका दिल काँप गया। उसने आश्चर्यसे मिरज़ाके दुबले-पतले शरीरको देखा। क्या इस कमज़ोर-सी शक्लके इन्सानमें इतनी हिम्मत हो सकती है?

नवाब नसीरुद्दीनके ज़मानेमें, हँसी-हँसीमें ताजमें छेद निकाल देनेपर राजा ग़ालिब जंगको जिस लोहेके पिंजरेमें बन्द कर दिया गया था,

चार पहियोंपर चलने वाला वह पिंजरा अब तक सुरक्षित रखा था। आज वही मिरज़ा गियासबेगका निवास-स्थान बना, बहरुन्निसाने अपने हाथों पिंजरेका भारी ताला बन्द करके जाड़ेमें ठिठुरते हुए मिरज़ासे कहा :

"क्या आप मेरी मजबूरीको समझकर मुझे माफ़ कर देंगे, मिरज़ा जी ?" इस अप्रिय कामको सम्पन्न करनेका जो दुःख बहरुन्निसाको हुआ था, उसके कारण आई आँखोंकी नमीको उसने दुपट्टेसे पोंछा।

मिरज़ाने कहा, "खुदा तुम्हें खुश रखे। मैंने अपना फ़र्ज़ निभाया है। मुझे किसीसे गिलाशिकवा नहीं है।"

मगर बहरुन्निसाका सौजन्य केवल दिखावेका नहीं था। वह तीन पहर रात तक औलिया बेगमकी सेवामें रत रही, और जब औलिया बेगम सो गई, तो उसका दिमाग़ तेज़ीसे काम करने लगा। किस प्रकार मिरज़ाकी जान बचे, सुबह तक वह यही सोचती रही। खुद नवाब वाज़िदअली शाहको औलिया बेगमके घरेलू साम्राज्यमें दखल देनेकी हिम्मत नहीं थी।

सुबहकी किरण ज़मीन पर पड़ते ही बहरुन्निसाने एक बहुत कमज़ोर धागेका सहारा पकड़ा। उसने दो समझदार संदेशवाहकोंको तैयार किया और धूप फैलते ही वे बहनेवाली बुढ़ियाके गाँवमें जा पहुँचे। उसकी झोंपड़ीपर जाकर उन्होंने उसे पुकारा।

बुढ़ियाने झोंपड़ीसे बाहर निकलकर धुँधली नज़रोंसे आनेवालोंको देखा। उसकी गरदन बराबर हिलती रही, जैसे वह मूर्त्तिमान संसारके अस्तित्वसे बराबर इनकार कर रही हो। एक संदेशवाहकने कहा, "ओ खुदाकी बन्दी, तेरी वजहसे लखनऊका एक शरीफ़ज़ादा मौतके जबड़ोंमें जा गिरा है। चल, नहीं तो तू खुदाके सामने जवाबदेह होगी।"

"मैं कुरबान जाऊँ," बुढ़ियाने कहा। "ज़रा खोलकर बता रे, क्या माजरा है ?"

बहरुन्निसाने जो कुछ कहा था वह ज्यों-का-त्यों दोहराते हुए संदेश-

वाहकने कहा, "तेरे असूलकी व्याख्या करता हुआ वह शरीफ़ इन्सान मौतके फनपर हाथ रख बैठा है। दानिशमन्द बहरुन्निसाने कहा है कि उसे अगर कोई बचा सकता है, तो वह सिर्फ़ बहने वाली बुढ़िया है।"

"मैं सदके जाऊँ," बुढ़िया फिर बड़बड़ाई। "चल, मैं तेरे साथ चलती हूँ।"

जिस समय संदेशवाहक बुढ़ियाको साथ लिये लखनऊ पहुँचे, दूसरे पहरकी तोप छूट चुकी थी। यह नवाब औलिया बेगमके उठनेका वक्त था। मिरज़ाकी कमरको चूमनेके लिए बेंतें नाँदमें भीग रही थीं। शाही भंगियोंको सूचना दे दी गई थी और वे आकर स्वयं बेंतोंका इन्तज़ाम देख गये थे। अब सिर्फ़ नवाब औलिया बेगमके अटारीपर आनेकी देर थी। दूरतक फैले हुए अहातेमें हरी घास और फूलोंका बाग़ था और बीचोबीच मिरज़ा गियासबेगका अभागा पिञ्जरा था।

बुढ़िया महलके दरवाज़ेपर उस समय पहुँची, जब औलिया बेगम अटारीपर आ चुकी थी। चोबदारने बेगमके सामने आकर अर्ज़ की: "हजूर, बहनेवाली बुढ़िया सरकारको देखना चाहती है।"

बहनेवाली बुढ़ियाके नामसे उस विशेष बुढ़ियाका बोध होता था, जिसे न केवल औलिया बेगम, बल्कि सारा लखनऊ पहचानता था। बेगमको आश्चर्य हुआ। मिरज़ाको पिञ्जरेसे बाहर निकाला जा रहा था कि बेगमने इशारा किया और यह काम रोक दिया गया। दरवाज़ेपर बुढ़ियाकी कमज़ोर, गड़गड़ हिलती हुई, जीर्ण-शीर्ण आकृति दिखाई दी। अपनी धुँधली नज़रोंसे इधर-उधर देखती हुई बुढ़िया धीरे-धीरे औलिया बेगमके सामने आई। उसके साथ आये चोबदारने कहा, "ऊपर देख, हजूर सरकार ऊपर अटारीपर हैं।"

बुढ़ियाने मिचमिचाई आँखोंसे ऊपरकी तरफ़ देखा। फिर वह कुछ देख न पाकर अनुमानसे ही बोली, "बेटी, मैंने सुना है कि तू अपनी हकूमतमें जिन्दा लोगोंको शेर-चितोंकी तरह लोहेके पिञ्जरोंमें बन्द करा देती

है ! मैंने सुना है कि उन बदक़िस्मतोंकी पीठपर इतनी बेंतें लगती हैं कि वे मर जाते हैं ! क्या यह सब लखनऊमें होता है ?"

औलिया बेगमके चेहरेपर एक रंग आ रहा था और एक जा रहा था। उसकी सत्ताको प्रश्नसूचक दृष्टिसे देखनेवाली, इस पेड़की पत्तीकी तरह काँपती हुई बुढ़ियाकी क्या हैसियत थी ? मगर उस हैसियतके सामने भी औलिया बेगम एक बेबस बच्चेकी तरह चुप थी।

बुढ़ियाने आगे कहा, "जवाब नहीं देती ! वे कितने बड़े पागल हैं, जो अक्लकी बातको फ़नकी शक्करमें लपेटकर तेरे सामने रखते हैं ! यह नई हकूमत है, जो फ़नकारोंसे चिढ़ती है। मिरज़ाने जो कहानी सुनाई थी क्या वह झूठ है ? बाज़ और गिद्धोंकी तरह वह फिरंगी लखनऊके शेरपर मँडरा रहा है, क्या यह भी झूठ है ? लखनऊकी हर अक्लमन्द शख्सियत मददगार लोमड़ीकी तरह सूख-सूखकर काँटा हो रही है, क्या यह झूठ है ? दोस्तीकी खाल पहने हुए गीदड़ ख़ुशामद और नाच-रंगकी महफ़िल जमाये अन्ने वाजिदअली शाहको बहरा बनाकर रखे हुए हैं, क्या यह झूठ है ? अगर यह झूठ नहीं है, तो ऐ मेरी मल्का, मिरज़ाकी कहानी भी झूठ नहीं है। उसने इस वक्तका सबसे बड़ा सच बयान किया है। जो सच कहनेपर सज़ा देता है वह ख़ुदाके ग़ुस्सेका शिकार होता है। बोल, जिस इज़्ज़तको तू घोल-घोलकर पी रही है, जिस इज़्ज़तपर हरफ़ आते देखकर तूने ग़रीब मिरज़ाको पीटते-पीटते मार डालनेका इरादा किया है, क्या उसी का खयाल करके तू इस बुढ़ियाको भी सज़ा दे सकती है ?"

बेगम औलिया भीतर-ही-भीतर ख़ूनका घूँट पी रही थी। इतने स्पष्ट शब्दोंमें किसीने आजतक दिल्ली खानदानकी शहज़ादीकी आँखोंमें तकुए नहीं दिये थे। उसका शाही ख़ून उबल रहा था। मगर ज़बान सहसा उबल पड़नेके लिए अभीतक चुप थी।

बुढ़ियाने कहा, "अगर तू चुप है तो तू उमरसे डरती है। मेरी उमर सौ सालकी है। मुझे क्या मासूम था कि एक मल्का भी सौ सालकी उमरसे डर

सकती है। मगर इस सचको आँख खोलकर देख कि आनेवाले सौ साल हैं, जो तेरी जैसी सैकड़ों बेगमोंको दुनियाके तख्तेसे उठा देंगे; जिसमें लखनऊ ही नहीं, सारी हिन्दुस्तानी ज़मीन खूनके घूँट पियेगी। अगर तू इस सचको नहीं पहचान सकती, जो ज़ाहिर है कि खुदा इसके लिए कुरबानी चाहता है। ले, मैं आनेवाले सौ सालोंके लिए बीते हुए सौ सालोंकी कुरबानी देती हूँ..." और इससे पहले कि बेगम कुछ बोल सके, बुढ़ियाने सामने उठे हुए चबूतरेके पत्थरपर अपना सिर एकके बाद एक कई बार दे मारा।

खूनका तुर्रा छूट पड़ा और अटारीपर बेगम आवेशमें चिल्लाई, "रोको, कोई इसे रोको! या खुदा, क्या अज़ाब आनेवाला है!"

मगर चोबदारके घबराकर आगे बढ़नेसे पहले ही बुढ़ियाका खूनसे भरा हुआ मुँह आखिरी बार पत्थरसे टकराया और वह ज़मीनपर लुढ़क पड़ी। उसका साँस तेज़ीसे चल रहा था। बेगम औलिया, जितनी तेज़ीसे हो सका, ज़ीनेसे उतरकर नीचे आई। साथमें बीसियों लौंड़िया और खोजे थे। आते ही उसने बुढ़ियाका सिर अपने हाथोंमें ले लिया। बुढ़ियाने आँखें फाड़कर एक बार उसके मुँहकी तरफ़ देखा और उसने धीरेसे कहा, "सौ साल!" और इसके बाद मिरज़ाकी रिहाईपर अपनी कुरबानीकी मोहर लगाती हुई बुढ़िया इस संसारसे बिदा हो गई।

हमसे कोई कहे कि हम भविष्यवाणियों, भाग्य अथवा चमत्कारोंपर विश्वास करते हैं। हम कहेंगे, नहीं। मगर यह कितनी विचित्र बात थी कि आनेवाले सौ सालके लिए बीते हुए सौ सालकी कुरबानी देनेवाली बुढ़िया की शहादतका वह दिन था : पन्द्रह अगस्त, सन् अठारह सौ सैंतालीस!

• पीरके दीये

लखनऊकी कहानी है। १८५७ से कुछ ही पहलेकी बात है।

इस्लामके प्रवर्त्तक मुहम्मद साहबके पाँवके निशानके सामने सिजदा-करके, क़दम रसूलकी इमारत से, सुबहको उगते हुए सूरजकी किरणोंको होंठोंसे चूमते हुए, लखनऊके दो शायर बाहर आये। एक थे हज़रत 'असीर' और दूसरे थे हज़रत 'कल्क़'। पहले साहबने नवाब वाजिद-अली शाहके दरबारमें तदबीरुद्दौला मुदब्बिरुलमुल्क-जैसा लम्बा-चौड़ा ख़िताब पाया था, तो दूसरे हज़रत आफ़ताबुद्दौला बन चुके थे।

बाहर निकलते ही एक फ़क़ीरपर नज़र पड़ी। ठीक दरवाज़ेपर खड़ा था। हाथमें कासा था और उसमें कुछ टके थे, जिन्हें वह बार-बार कासेको उछालकर बजा देता था। साथ-ही-साथ कहता जाता था: "ले... ले...ले...!"

हज़रत 'कल्क' दूरसे ही ठिठके। अपने साथवाले सज्जनसे बोले, "अमाँ, हज़रत, यह क्या दिल्लगी है!"

हज़रत 'असीर' को भी यह बात अद्भुत लगी। बोले, "हमारा ख्याल है कि यह अपने कासेमें से कुछ ले लेनेकी दावत दे रहा है।"

कल्क साहबने ज़रा उचककर फ़क़ीरके कासेकी गहराईमें देखा! उसमें सिर्फ़ कुछ टके ही नज़र आये। नंगा क्या नहायेगा, क्या निचोड़ेगा! सिर खुजाने लगे। असीर साहबने आगे बढ़नेके लिए उनकी पीठपर हाथ रखा। फ़क़ीर निष्पक्ष भावसे बराबर "ले...ले..." की सदा लगा रहा था। दोनों शायर उसके सामनेसे होकर आगे निकल गये। जब सड़क पर पहुँच गये, तो हज़रत असीर ठिठककर जहाँ-के-तहाँ खड़े हो गये।

"क्यों, हज़रत, अब क्या ख्याल आया ?" कल्क साहबने पूछा ।

"सब समझमें आ गया," असीर साहब बोले । "यह आदमी शायर मालूम होता है ।"

"कैसे ?"

"शायरीकी कला क्या है : पहले दस सीढ़ियोंकी बात सोच ले, पाँच-तक छोड़ दे, छठीसे चढ़ना शुरू करे और जब दस तक पहुँचे, तो "वाह वाह", "क्या कहने हैं", "मुकर्रर"—बस चारों तरफ़ से यही सुननेको मिलता है । जब आप ग़ज़ल कहने लगते हैं, तो मामूली आदमी सोच भी नहीं पाता कि आप कहाँ डुबकी लगाने वाले हैं । क्या आपने समझनेकी तकलीफ़ गवारा की ?"

"मगर इससे इस फ़कीरके शायर होनेसे क्या ताल्लुक है ?" हज़रत कल्कने फिर अपना सिर खुजाया ।

"बहुत गहरा ताल्लुक है," असीर साहबने कहा । "इसकी 'ले' से यह मतलब नहीं निकलता कि आप इसके कासेमेंसे कुछ टके लेकर आरामसे चुटकी बजाते हुए निकल जायें । इसका मतलब है कि आप इसके कासेमें कुछ टके डालें । अल्लाह आपकी दानवीरताको देखेगा और क़यामतके रोज़ इससे हज़ारों-लाखों गुना आपको देगा । आप अगर इस फ़कीरको कुछ देंगे, तो वास्तवमें आप देंगे नहीं, बल्कि लेंगे । अब आया आपकी अक़्ल-शरीफ़में ?"

हज़रत कल्क सिर खुजाना भूल गये । जहाँ-की-तहाँ जड़की तरह खड़े हो गये और आँखें फाड़कर असीर साहबका मुँह देखने लगे ।

"क्यों ?" असीरने कहा, 'लाम' और 'ये' इन दो अक्षरोंको मिला कर जो आदमी इतनी बड़ी बँधी हुई बात कह जाये क्या उसे शायर नहीं कहा जायेगा ?...कहिए ।"

कल्क साहब कुछ देर तक तो सोचते-विचारते-से खड़े रहे । फिर उल्टे पैरों क़दम रसूलके फाटककी तरफ़ दौड़े । फ़कीरके पास पहुँचकर

उन्होंने इस बीच जेबसे निकाला हुआ एक चेहरेशाही सिक्का उसके कासेमें डाला, और चैनकी साँस लेते हुए वापस लौटकर आये। आते ही बोले : "क्या आपका खयाल है कि मैंने क़यामतके रोज़के लिए तदबीर की है?"

"जी नहीं, जनाब," असीर साहब आगे क़दम बढ़ाते हुए बोले, "मैं जानता हूँ कि आपने शायरीके फ़नकी कद्र की है। आइये, चलें।"

"चलिये, मुझे ज़रा चौकसे हुज़ूर आलीजाहके लिए कोई उम्दा-सा तोहफ़ा लेना है," कल्क साहब असीर साहबके साथ आगे क़दम बढ़ाते हुए बोले—खुदा खैर करे, आज देखते ही खफ़ा होंगे। आप जानते ही हैं कि नाटक लिखना कोई हँसी-खेल नहीं है, मगर हुज़ूर हैं कि हमेशा दूरकी कौड़ी लानेका हुक्म देते हैं। माशाअल्लाह! ज़रासा ऐब नज़र आया कि सारा कलाम चाक कर देते हैं।"

असीर साहब हँसे। बोले, "आपको इस बूढ़े फ़कीरसे कोई प्रेरणा नहीं मिली? मैंने तो समझा था कि आप वाक़ई उससे कुछ लेकर आये हैं।"

"मुझे प्रेरणा इतनी आसानीसे नहीं मिलती, हज़रत," कल्क साहबने माथा ठोंककर कहा, "नहीं तो बंदा कभीका हुजूर आलीजाहका शागिर्द न रहकर उस्ताद हो गया होता।"

इसी तरहसे बातें कहते हुए दोनों शायर चौकमें पहुँच गये। बीच चौकमें पहुँचकर कल्क साहब ठिठके और बोले "अमाँ, हज़रत, जी तो चाहता है कि इस जगहकी सारी क़ीमती चीज़ें हुजूरके लिए ले चलूँ, मगर मुझे कुछ ऐसा मालूम पड़ने लगा है कि जेब और रोज़से हल्की है," और उन्होंने यह कहकर तुरन्त अपनी दूसरी जेबपर इस तरह हाथ डाला, जैसे मच्छर मार रहे हों। इसके साथ-ही-साथ उनके मुँह पर आश्चर्य और दीनताके भाव दिखाई पड़ने लगे। असीर साहबकी तरफ़ देखकर बोले, "अमाँ, हज़रत, मालूम होता है कि बीवी नेकबख्तने आज जेबसे बटुआ तीर कर लिया है"

असीर साहबने उनके साथ हमदर्दी ज़ाहिर की, अपनी असमर्थता भी लगे हाथों प्रकट कर दी और दोनों सज्जन चौकके बीचोंबीच खड़े-खड़े यह सोचने लगे कि खाली हाथों किस तरह नवाब वाजिदअली शाहके सामने जाया जाये।

ध्यान एक जगह लग जानेसे बाज़ारका कोलाहल कुछ मद्धिम पड़ा और एक हल्कीसी आवाज़ दोनों शायरोंके कानोंमें कुछ अधिक स्पष्ट हो कर आने लगी: "हाय, ग़िज़ा ला! हाय, ग़िज़ा ला!"

"क्या मतलब?" कल्क साहब चौंके।

"किस चीज़का मतलब आप पूछ रहे हैं?"

"यह 'हाय, ग़िज़ा ला' का क्या मतलब है?"

"मालूम होता है यह कोई दूसरा फ़क़ीर शायर है," असीर साहबने उस निरन्तर आती हुई आवाज़पर ध्यान देते हुए कहा। "इस अजीब तरीक़ेसे यह राहसे गुज़रने वालोंसे खाना माँग रहा है। मगर आपके पास तो जो कुछ था वह आप उस फ़क़ीरको दे आये। बटुआ नेकबख्तने निकाल लिया। अब क्या कीजिएगा?"

"अमाँ, हज़रत, आइए, देखें तो सही। फ़क़ीरोंकी दुआसे दिलकी मुराद पूरी होती है।"

दोनों सज्जन चौकके किनारे घुटनोंके बल बैठे एक बूढ़े फ़क़ीरके पास पहुँचे, जिसके केश और दाढ़ी सनकी तरह सफ़ेद हो गये थे, मुँहपर अनगिनत झुर्रियां थीं, दोनों हाथ आस्मानकी ओर उठे हुए थे। आखें एकटक स्वर्गकी ओर देख रही थीं—और वह पुकार रहा था: "हाय, ग़िज़ा ला! हाय, ग़िज़ा ला!" आखोंसे मवाद मिले हुए आँसू बह रहे थे, मुँहपरके समस्त चिह्न घोर करुणाको प्रदर्शित कर रहे थे, शरीरकी हड्डी-हड्डी दिखाई दे रही थी।

असीर साहब धीरेसे बोले, "रोटी माँगनेका यह नया तरीक़ा है।"

मगर कल्क साहब तो अपनी प्रेरणाको ढूँढ़ रहे थे। नवाबके दरबारमें उपस्थित होनेके लिए उनके पास कोई तोहफ़ा खरीदनेका साधन नहीं था। असीर साहब तो झटसे एक कसीदा पढ़ देंगे, और छुट्टी पा जायेंगे। मगर कल्क साहब तो नवाब साहबको अपना उस्ताद बना चुके थे। उस्तादके सामने खाली हाथ क्या मुँह लेकर जायें! अगर असीर साहबकी तरह वह भी कोई क़सीदा तैयार कर लेते, तो भी खैर थी। मगर कसीदा और नाटक, नाटक और कसीदा, इन दोनोंके चक्करमें वह सारी रात जागकर भी कुछ नहीं बना पाये थे। वह सिरको नीचा किये, कूल्होंपर हाथ रखे, टकटकी लगाकर उस बूढ़ेकी ओर देख रहे थे, जो 'हाय, ग़िज़ा ला! हाय, ग़िज़ा ला!' की रट लगा रहा था।

असीर साहबने अवसरका लाभ उठाकर एक शेरकी बन्दिश बाँधी ही थी कि कल्क साहब सहसा अपनी सारी मुद्रा बदलकर उछल पड़े। उन्होंने कहा, "अमाँ, हज़रत, क्या बात पैदा हुई है!"

शायर साहबकी बंदिश हवा हो गई। भौंह सिकोड़कर बोले, "क्या बात है, जो जनाबने पैदा की है?"

"अब दरबारमें ही चलकर बयान करूँगा, आइये," कहकर कल्क साहब उस बूढ़ेको सलाम झुकाकर तुरन्त उल्टे पैरों, जल्दी-जल्दी क़दम रखते हुए लपके। असीर साहब भी ज़रा तेज़ हो लिये। वह पालकीमें जाना चाहते थे, मगर कल्क साहबने उनकी एक न सुनी। इस वक़्त उनका दिमाग़ आसमानपर था और पाँव ज़मीनसे दो बित्ते ऊपर उठे हुए। कई बार असीर साहबने उन्हें टोकनेकी कोशिश की, मगर उन्हें तो प्रेरणा आ रही थी।

गोमतीके किनारे मोतीमहलकी धवल इमारतें सफ़ेद बत्तखोंकी भाँति नज़र आ रही थीं। यहीं पर नवाब हुज़ूरने नाच-गानेका कार्यक्रम निश्चित किया था। उन्हीं इमारतोंमें से एकमें इन दोनोंने प्रवेश किया और वहाँ पहलेसे ही उपस्थित शायरों तथा भाँड़ोंने इनका स्वागत किया। एक

साहबने कल्क साहबकी ओर संकेत करते हुए कहा, "क्या बात है, आज कुछ दुश्मनोंकी तबीयत ग़मग़ीन नज़र आती है !"

कल्क साहबने उनकी सूरतको देखा, ख़ूब ध्यानसे देखा। जब देखते-देखते इनकी आँखें फटने लगीं, तो वह सज्जन घबराये और बोले, "यह क्या मामला है, हज़रत ?"

कल्क साहबने ज़रा आँखें झपकीं और उनकी ओर देखते हुए आगे बढ़े। प्रश्नकर्त्ता महोदय अपनी जगह जड़ होकर रह गये। कल्क साहब सबके देखते-ही-देखते सहसा उनके गलेसे लिपट गये और फूट-फूट कर रोने लगे। उनके रोनेकी आवाज़ बारादरीमें दूर तक सुनाई देने लगी।

सभी लोग सहसा ही इस रुदनके स्वरको सुनकर भौचक्के हो गये। चारों ओरसे ग़ुलामों, ख़ोजाओं, शायरों, भाँड़ोंकी भीड़ उनकी चारों ओर इकट्ठी हो गई। "क्या बात है ? क्या मामला है ?" की आवाज़ें हर तरफ़ से आने लगीं। "यह कल्क साहबको हो क्या गया है ?"

मगर हज़रत कल्क थे कि रोये जा रहे थे। चेहरा आँसुओंसे भीग गया था।

एक दूसरे साहबने असीर साहबसे पूछा, "आप तो इनके साथ-ही साथ आये हैं। कहीं रास्तेमें आते-आते ज़रब तो नहीं खा गये ?"

असीर साहब अब तक चुपचाप खड़े थे। बोले, "कुछ नहीं, आप लोग फ़िकर न करें। कल्क साहबको ख्याल आ रहा है ?"

लोगोंने पूछा, "किसका ख्याल आ रहा है ? क्या ख्याल आ रहा है ?"

असीर साहबने बताया कि यह ख्याल शायराना है, और किसी क़िस्म का ख्याल नहीं है, कल्क साहब इस ख्यालकी बदौलत एक महान् कृति की रचना करनेवाले हैं।

सुनते ही शायरोंके समाजमें अब एक दूसरी ही तरहकी हलचल मच गई। कल्क साहब नवाब वाजिदअली शाहके लाड़ले शायर थे। आजतक

उन्हें जितने भी ख्याल आये थे, नवाब साहब उनपर बल्लियों उछला करते थे। मगर इतना गहरा ख्याल उन्हें कभी नहीं आया था कि ज़ार-ज़ार रो पड़े हों। अगर वाक़ई यह बात है, तो आज वह ज़रूर कोई दीवान फ़रमाने वाले हैं।

कुछ देरमें कल्क साहब चुप हो गये। वह अपने शुभचिन्तकोंसे अलग होकर एक कोनेमें जा बैठे और दोपहर तक वहीं बैठे रहे। किसीने उन्हें छेड़नेकी जुर्रत नहीं की। यहाँतक कि लोग उनके ख्यालमें अपने-अपने ख्याल भूल गये। शेरोंकी बंदिशें जुड़ते-जुड़ते रह गईं।

ज्यों ही नवाब साहबके सोकर उठनेकी खबर आई, उनके पास कल्क साहबके अजीबोग़रीब ख्यालका समाचार पहुँचाया गया। तुरन्त नवाब साहब गुलाबजलसे मुँह धोकर दीवानखानेमें पधारे, शायरों और भाँड़ोंने उन्हें घेर लिया।

"कहाँ हैं कल्क साहब?" नवाबने पूछा।

अभी किसीने कोई जवाब भी नहीं दिया था कि नवाबने देखा दो खोजा कल्क साहबको दोनों ओरसे थामे इस तरह लिये चले आ रहे हैं, जैसे किसी दुल्हनको फेरोंके वक़्त ले जाया जा रहा हो। उनके चेहरेपर हवाइयाँ उड़ रही थीं, बाल अस्तव्यस्त हो गये थे, मुँहपर अजीब करुणाका भाव था और आँखें एक ही अन्दाज़से अपने उस्तादको घूर रही थीं।

नवाब साहब दिक्क़तके साथ मसनदपर हाथ टेककर खड़े हुए और बोले, "यह आपका क्या हाल हो गया है, कल्क साहब?"

कल्क साहब नवाब साहबकी दोनों बगलोंमें हाथ देकर फिर सहसा ही फूट-फूटकर रो दिये। नवाब साहबका हाथ उनकी पीठपर फिरने लगा। बोले, "घबराइये नहीं, किसीने अगर आपकी तरफ़ आँखें उठाकर देखा होगा, तो आँखें निकलवा ली जायँगी उस कम्बख्तकी।"

कल्क साहबका रोना और तेज़ हुआ। नवाबके दमदिलासेमें तेज़ी

आई और शायर लोग अपने कसीदे पढ़ना भूल गये। तरह-तरह की चीमींगोइयाँ चारों तरफ़से सुनाई देने लगीं।

आखिर जब उनका रोना थमा और वह कुछ बोलने लायक हुए, तो ये शब्द उनकी ज़बानसे प्रकट हुए: "आज वियोगमें मेरा तन-बदन जला जा रहा है, हुजूर। मेरे जिगर में आग लग गई है।"

शायरोंके चेहरे खिल गये। कुछके मुँहपर मुसकराहट आई। असीर साहब उत्सुकतासे आगे सुननेके लिए बेचैन हो गये। मगर नवाब साहब कल्क साहबके दुःखसे दुःखी बने जैसे-के-तैसे बने रहे। "आह! आपकी तकलीफ़ नहीं देखी जाती, कल्क़ साहब! कौन है वह नेकबख्त, जो आपका जिगर जला रही है। परिस्तानमें भी होगी, तो हम बुला भेजेंगे।"

"वह परिस्तानकी रानी है, आलीजाह। उसका नाम है ग़िज़ाला। आप तो जानते ही हैं, ग़रीबपरवर, ग़िज़ालाके माने हैं हिरनौटा, हिरनका छोटा बच्चा, बस, हुजूर, जैसा नाम है उससे बेश ही है, कम नहीं है।"

नवाब वाजिदअली शाहने दिलपर हाथ रखकर उसे मसोसा। असीर साहब आँखें फाड़े कल्क साहबकी पीठ देखते रह गये। क्या बात खोदकर लाया है कम्बख्त! क्या अजीब तरीक़ेसे पेश की है! उन्हें अफ़सोस हुआ कि उन्हें क्यों न यह बात सूझी।

"तो कोई ग़म नहीं," नवाब साहबने फ़रमाया। "हम परिस्तानकी रानी ग़िज़ालाको यहीं पर खींच लायेंगे, चाहे हमें इसके लिए खुद तकलीफ़ करनी पड़े। आपको इतना रंजीदा होनेकी क्या ज़रूरत है?"

"मैं अपने लिए नहीं रो रहा हूँ, हुजूर, मेरा जिगर आपके लिए जल रहा है। आलीजाह, ग़िज़ाला इस दुनियामें सिर्फ़ आपके लिए है, आप ही उसे अपनी बग़लमें पनाह दे सकते हैं। हाय, अगर वह परिस्तानमें रही होती, तो कोई ग़म नहीं था। मगर उसे तो "हज़ार दास्तान'का जिन्न

उठा ले गया है। मुझे डर है, हुजूर, कि कहीं मेरी तरह आपका दिल भी ज्वालाओंसे भड़क न उठे।"

"ओह ! ओह !" नवाब वाजिदअली शाहके ऊपर अभीसे वियोगका प्रभाव नज़र आने लगा। "पूरी बात बताइये, कल्क साहब। आपने तो अभीसे ज़ख्म लगाने शुरू कर दिये हैं।"

"क्या बताऊँ, हुजूर, बताया नहीं जाता।" कल्क साहब अपने मुँहको हाथोंमें छिपाते हुए बोले, "ग़ुलाम अपनी आँखोंसे सारा भविष्य देख रहा है। तैयार हो जाइये, हुजूर, उस आगके लिए तैयार हो जाइये, जो अभी तक नहीं लगी, मगर अब सुलगने ही वाली है। मैं देख रहा हूँ कि आप जन्नतकी तरह सजे हुए एक महलमें, खूबसूरत ग़िज़ालाकी बग़ल में आराम फ़रमा रहे हैं। रातके वक्त आप पानी—मेरा मतलब रंगीन पानीसे है,—लेनेके लिए उठते हैं, और काले-काले भयंकर जिन्न ग़िज़ालाको पलंग समेत उठाकर ले जाते हैं...और आप जब वापस आते हैं, तो आपके ग़मका कोई ठिकाना नहीं रहता। आपके तनमनमें आग जल उठती है। आप चिल्लाकर हर किसीसे पूछते हैं : "हाय, ग़िज़ाला ! हाय, ग़िज़ाला !" मगर ग़िज़ालाका पता किसीको हो तो बताये।"

"या खुदा !" नवाबकी आँखें ऊपरको चढ़ गईं। लटकते हुए गाल खिंच गये, शरीरमें थरथरी दौड़ गई।

"और, हुजूर जब अगले दिनतक भी खूबसूरत, परीज़ाद ग़िज़ालाका कोई पता-ठिकाना मालूम नहीं होता, तो आप इसकी फुरकत (वियोग) में जोगी बन जाते हैं। एक कोपीन आपके बदनपर रह जाती है, एक खिदमतगार आपके साथ रह जाता है और आप जंगल-जंगल, शहर-शहर गाँव-गाँव ग़िज़ालाके फ़िराकमें "हाय, ग़िज़ाला ! हाय, ग़िज़ाला !" की रट लगाते हुए घूमते रहते हैं—जिस तरह राजा रामचन्दर सीताजीके वियोगमें घूमे थे—और ग़िज़ालाका पता नहीं चलता। महलके सारे नौकर-चाकर, दास-दासियाँ, गुलाम, खोजा, बेगमें और ओहदेदार, सब आपकी तकलीफ़को

अपनी तकलीफ़ मानकर गेरुए वस्त्र धारण कर लेते हैं। राजधानीमें एक भी आदमी ऐसा नज़र नहीं आता, जिसके बदनपर गेरुए कपड़ोंके अलावा कोई कपड़ा हो...और, हुजूर, इसी अवस्थामें आपको दस दिन बीत जाते हैं..."

"आह ! दस दिन !" नवाब साहबकी आँखोंसे आँसुओंके दो बड़े-बड़े डोरे बह निकले।

"दस दिन, हुजूर, पूरे दस दिन...और दसवें दिन आदमज़ाद तो आदमज़ाद, जिन्न तक आपकी हालतको देखकर पिघल जाते हैं। एक जिन्न आपको आकर बताता है कि खूबसूरत ग़िज़ाला, औरतकी शक्लमें वह नन्हा-सा हिरनौटा, राजा इन्द्रके दरबारमें है, और राजा इन्द्र उसपर फ़रेफ़ता [मोहित] होकर उसे अपनेसे शादी करनेके लिए सता रहा है—जिस तरह राजा रावणने सती सीताको सताया था, हुजूर—और वह आपके ग़ममें अपने प्राण देनेपर तुली हुई है।"

"बस, बस, आगे न कहो, कल्क साहब ! देखते नहीं हमारा दिल फटा जा रहा है !" और सचमुच नवाब वाजिदअली शाह विकृत चेष्टा बनाकर रोने लगे।

"मगर, हुजूर, आप राजा इन्द्रके दरबारमें भी जा पहुँचे और उससे बातें करके आपने उसे यह विश्वास दिलानेकी कोशिश भी की कि असलमें ग़िज़ाला आपकी है और आप उसके हैं। बस, राजा इन्द्रने इस बातपर आपसे पीछा छुड़ानेकी तदबीर सोच निकाली। उसने आपसे कहा कि पहले आप अपनेको ग़िज़ालाके योग्य सिद्ध करें। आप तुरन्त तैयार हो गये। पहले उसने आपको सिर्फ़ एक छुरी लेकर एक भयानक शेरको मारनेके लिए भेजा। आप उसे फ़ौरन मारकर ले आये। फिर उसने एक भयानक जिन्नके पास आपको भेजा। आपने उसका भी काम तमाम कर दिया और इसी तरहके अनेक बहादुरीके करतब करनेके बाद भी जब आप राजा इन्द्रके सामने अपनी छाती तानकर खड़े हो गये, तो

हुज़ूर, उसे डर हुआ कि कहीं आप उसकी हकूमतको न छीन लें। इस-लिए उसने आपकी ग़िज़ालाको आपके सुपुर्द किया और आप हँसी-ख़ुशी अपनी राजधानीमें लौट आये। यहाँ जो फिर जशन मनाये गये, तो आलीजाह, मेरे सम्मानित उस्ताद, आपके शहर-जैसा ख़ुशोख़ुर्रम शहर दुनियाके तख़्तेपर और कोई नहीं था..."

वाजिदअली शाहका हाल बेहाल था। आँखोंसे आँसू बह रहे थे और बदनका अङ्ग-अङ्ग फड़क रहा था। चेहरेपर हँसी खेल रही थी और आँखें चमक रही थीं। "वाह! वल्लाह! क्या ख़ूब! क्या ख़्याल आपने पेश किया है, कल्क साहब! अब तो आपको अपना उस्ताद कहनेको जी चाहता है। आपने तो तसवीर खींचकर रख दी।"

असीर साहबने होंठ दबाये। कुछ लोगोंने कटती नज़रोंसे कल्क साहबकी ओर देखा। एक सम्मानित शायरने वास्तविकताको धरातलपर लाते हुए पूछा, "तो, कल्क साहब, आपने अपना यह नाटक पूरा कर लिया है?"

नवाबने उन साहबकी तरफ़ तेज़ निगाहोंसे देखा। अभी तक वह कल्क साहबके ख़्यालमें उसी तरह डुबकी लगा रहे थे, जैसे कोई भी शायर अपने कलाममें लगाता है। यह कल्क साहबका नाटक है यह तो वह भी समझ रहे थे, मगर इस बातको खोलकर कहनेसे उनके नन्हें से दिलपर सख़्त सदमा गुज़रा।

कल्क साहबने उनके भाव ताड़ते हुए कहा, "अमाँ, हज़रत, आज यह नाटक है, कलको वास्तविकता हो जायगी। आप हैं कहाँ? यह लखनऊ है। यहाँ हर उम्दा ख़्याल एक हक़ीक़त है।"

"आपने ठीक फ़रमाया," नवाबने उछलकर कहा। गलेमें एक हीरा जड़ा कण्ठा पहन रखा था। उतारकर कल्क साहबके गलेमें पहना दिया। बोले, "बस, कल्क साहब, अब ज़्यादा बेचैन न करो। इस ख़्यालको हक़ीक़त बना दो।"

कल्क साहबने दोनों घुटनोंके बल खड़े होकर आदाब अर्ज़ की। उपस्थित शायरोंने मुबारकबादियोंकी झड़ी लगा दी। नवाबने उन्हें महलसे बाहर जानेके लिए मना कर दिया। वहीं उनके आरामका सारा इन्तज़ाम हुआ। एक कमरा अलग नियत कर दिया गया। दो लौंडियाँ ख़िदमतमें छोड़ दी गईं। खुशखतिया मुंशी पास बैठा दिया गया और ख्यालको हकीकत बनानेके लिए काग़ज़पर उतारा जाने लगा।

दीवालीकी गुलाबी सरदीमें नाटकके खेले जानेकी घोषणा हुई। केसरबाग़ महलकी नुकरई (रजत) बारादरीके तीन हिस्से किये गये। एकमें राजा इन्द्रका दरबार सजा। खंभोंको चाँदीके पत्तरोंसे ढाँक दिया गया। दीवारों और छतपर हीरों और पन्नोंके ज़ेवर लगाये गये। कमकमों और झाड़फ़ानूसोंकी बहुतायतसे रातके वक्त यह जगह दमक उठी। प्रकाशको आमने-सामने शीशे लगाकर सैकड़ों गुना तीव्र कर दिया गया। चारों ओर फैले हुए बग़ीचेमें चुने हुए फूलोंकी सुगंधसे वातावरण महकने लगा। राजा इन्द्रके दरबारके बीचोंबीच एक विशाल सिंहासन रखा गया। सारे बाग़में चाँदीके पत्तर जड़े मोढ़े डाल दिये गये। हज़ारों कमकमोंसे बाग़-का-बाग़ प्रकाशमान हो गया।

एक भागमें नवाब साहबका शयनकक्ष बना। उसके बीचमें एक लम्बा-चौड़ा सोनेका छपरखट था। कमरा शीशों और जड़ाऊ पत्तरोंकी बहुतायतसे आँखोंको चकाचौंध कर रहा था। चारों ओर गुलाबकी पत्तियों-का नरम कालीन था। छपरखटपर स्वर्गसुन्दरी ग़िज़ालाके वेशमें बादशाहकी सबसे प्रिय बेगम, कामदार रेशमी रज़ाई कमर तक ओढ़े इस प्रकार सोई पड़ी थी, मानो कोई अलबेली तितली किसी फूलकी पंखुड़ीपर सो गई हो। उससे कुछ दूर नवाब वाजिदअली शाहका भारी और तोंदिल शरीर, देवकुमारोंके वस्त्रोंसे अलङ्कृत, खुमारीमें डूबा पड़ा था।

इस अवस्थामें सुन्दरी ग़िज़ाला और उसके सबसे योग्य वर, नवाब वाजिदअलीको देखनेके लिए सारा हरम, सारा महल और लखनऊके

चोटीके अमीर-उमरा आये। वाह! क्या दृश्य था, क्या नाटक था! क्या खूबसूरती थी, जो धरा पर न उतर आई हो!

अगले दिन दोपहर तक यही दृश्य चला। दोपहरके समय दूसरा दृश्य आरम्भ हुआ। तिरस्कृत बेगमोंको काले कपड़े पहनकर काले-काले मुँह करके, भयानक जिन्नोंका वेश धारण करना पड़ा और ज्यों ही नवाब साहब एक जाम पीनेके लिए उठे, तो बीसियों बेगमें हाँफ़-हाँफ़कर उस छपरखटको, जो वास्तवमें इसीलिए काफ़ी हल्का बनवाया गया था, सुन्दरी ग़िज़ाला सहित उठा कर ले गईं।

बादशाह सलामत जाम पीकर लौटे और छपरखट नदारद देखकर आश्चर्यसे आँखें मलने लगे। इसके बाद 'हाय, ग़िज़ाला! हाय ग़िज़ाला!' की रट शुरू हो गई। लखनऊके आलीजाह अपने पहने हुए कपड़ोंकी एक कत्तर फाड़ते, सामने करते, ज़मीनपर गिरा देते और मोटी आवाज़को काफ़ी दर्दनाक बनाते हुए ज़ोर-ज़ोरसे पुकारते: "हाय, ग़िज़ाला! हाय, ग़िज़ाला!"

हज़ारोंकी भीड़ इस तमाशेको देखती थी। सैकड़ों आ रहे थे और जा रहे थे। सभीकी आँखोंसे आँसू बह रहे थे—और आँसुओंका दरिया बहने लगा था! कैसी पीड़ा है! कैसा दुःख है! देख-देखकर छातीपर साँप लोटता है!

जब सारे कपड़े फट चुके, तो नीचेसे कौपीन निकल आई। आनेवालोंको पहले ही समझा दिया गया था। देखते-देखते सारे दर्शक गेरुए रंग में रंग गये। लखनऊकी गली-गलीमें मनादी पिट गई: "नाम अल्लाहका, हुक्म बादशाहका—लखनऊकी रियायाको आगाह किया जाता है कि बादशाह सलामत सुन्दरी ग़िज़ालाके फ़िराकमें गेरुए कपड़े पहनकर उसे खोजने निकले हैं। खुदाका जो बन्दा आनेवाले दस दिनोंमें गेरुए कपड़ोंके अलावा कोई और कपड़ा पहने दिखाई दिया, तो बिना किसी भेदभावके उसका सिर धड़से अलग कर दिया जायगा।"

लखनऊके रंगसाज़ोंने इस दिनको अपने लिए खुदाकी नियामत समझा। चौबीस घंटेके भीतर-भीतर सारा लखनऊ गेरुए रंगमें रंग गया। लोग आश्चर्यसे एक दूसरेकी तरफ़ देखकर पूछने : "अरे मियाँ, यह ग़िज़ाला कौन थी? कहाँसे आई थी और कहाँ चली गई?...ओह! बादशाह सलामतकी प्रेमिका...जिन्न उठाकर ले गये! या अल्लाह! या परवरदिगार! हमारे बादशाह पर रहम कीजो।"

उधर बादशाहने कासा हाथमें ले लिया। जंगलमें घूम रहे हैं, तो घरका कुछ नहीं खायेंगे। किसीको साथ नहीं रखेंगे। बस, एक खिदमतगार साथमें रहेगा और प्रधान बेगमकी तबीयत चाहे, तो वह भी रहें। मगर और कोई नहीं। सब बेगमोंको गेरुए कपड़े पहनने होंगे। खबरदार! हुज़ूरकी आँखें कपड़ोंपर गेरुए रंगके अलावा और कोई रंग न देखें... बराबर दस दिन तक। "हाय, ग़िज़ाला! हाय, ग़िज़ाला!!"

सारा काम बादशाह सलामतकी इच्छानुसार हुआ। मगर नवाबकी अम्मी, पादशाह बेगम बिगड़ खड़ी हुई। जब लौंड़िया कपड़े लेकर उनके पास पहुँची, तो वह ज़ोरसे चिल्लाकर बोली : "यह क्या हिमाकत है! क्या तमाशा बना रखा है! यह नाटक है या भांड़ोंका खेल है! किसने लिखा है यह नाटक?"

"कल्क साहब ने, हुज़ूर", उपस्थित प्रधान दासीने सूचित किया।

"बुलाओ उन्हें।"

कल्क साहबकी खोज होने लगी। यहाँ ढूँढ़ा, वहाँ ढूँढ़ा, मगर कल्क साहबको तो पहले ही सूँघ लग गई थी। ऐसे नौ-दो-ग्यारह हुए कि हाथ आने मुश्किल हो गये। मगर पादशाह बेगमके हाथ भी कम लंबे नहीं थे। खुर्शेद मंज़िलके एक कोनेमें थाम लिये गये और तुरन्त पादशाह बेगमके सामने पेश किये गये।

पादशाह बेगमने पहले तो उन्हें कुछ देर घूरा, फिर बोली, "'कल्क' आपका ही तख़ल्लुस है?"

कल्क साहबको अपने उपनामपर पहली बार कलक हुई। जवाबमें अर्ज़ किया, "हुजूर सही फ़रमाती हैं।"

"यह अफ़लातूनी नाटक आपने ही लिखा है?" पादशाह बेगमने दूसरा सवाल पूछा।

कल्क साहब क्या कहें? बोले, "जी, यह ख़ता बन्देसे ही हुई है।"

पादशाह बेगमने व्यंग्य किया, "आपके दिमाग़ शरीफ़में यह बेहूदा ख्याल कहाँसे आया, हज़रत?"

"जी, जी, हुजूर आलीजाह बन्देके उस्ताद हैं, और......"

"यह लनतरानी छोड़िये," पादशाह बेगमने आँखें निकालकर कहा। "सही सही जवाब दीजिये।"

"हुजूर!" कल्क साहब सहमकर बोले, "सही अर्ज़ करता हूँ: एक पीर फ़कीर चौकमें बैठा हमेशा 'ग़िज़ा ला, ग़िज़ा ला' की सदा लगाया करता है। उसे ही देखकर बन्देके दिमाग़में ख्याल पैदा हुआ कि..."

"बस, ख्यालका बयान रहने दीजिये," पादशाह बेगमने उनकी बातको बीचमें काटते हुए कहा, "हम सिर्फ़ इतना पूछना चाहते हैं कि क्या आप अवधके बादशाहको फ़कीर बना देना चाहते हैं?"

"यह हुजूर क्या फ़रमा रही हैं!"

" 'हाय, ग़िज़ा ला! हाय, ग़िज़ा ला!' इसका क्या मतलब है?" पादशाह बेगमने कठोर स्वरमें पूछा।

"ग़िज़ाला हिरनके छोटे बच्चेको कहते हैं, हुजूर..."

"कल्क साहब आप अपने उस्तादको बेवक़ूफ़ बना सकते हैं, मगर उस्तादकी माँ को नहीं। क्या इसका मतलब यह नहीं है कि 'रोटी दे, रोटी दे'?"

"जी!" कल्क साहबकी घिग्घी बँध गई।

"कलको जब अवधके ऊपर छाया हुआ फिरंगी बादशाद यह सुनेगा कि अवधका असली हक़दार, हाथमें कासा लेकर दरवाज़े-दरवाज़े

'रोटी दे, रोटी दे' की आवाज़ लगाता हुआ घूमा करता है, तो आप जानते हैं वह क्या करेगा ?"

"जी...जी...हुजूर !"

"बस, आप इससे ज्यादा नहीं कह सकेंगे। इन कुछ लफ्जोंके कलामपर ही आप लखनऊके ताजदारके सिरपर बैठे हैं। हमसे पूछिये क्या होगा। जब फिरंगियोंका ताजदार इस करामातको सुनेगा, तो अपने दलबल सहित आयेगा। साथमें अपने बक्समें बन्द करके एक कासा लायेगा। उस कासेको तुम्हारे बादशाहके हाथमें रखकर कहेगा कि जाओ, माँगो, खाओ, और हकूमतकी बागडोर हमारे हाथमें पकड़ाते जाओ। भिखमंगे बादशाहत नहीं किया करते। उस दिन तुम सब लोगोंको भी एक-एक कासा हाथमें लेना पड़ेगा, लखनऊकी सड़कोंपर भिखमंगोंकी एक बारात बनकर चलेगी और मुँहसे निकल रहा होगा : 'हाय, रोटी दे ! हाय, रोटी दे।' भले ही आपका शायराना दिमाग़ रोटीको हूर समझकर उसके वियोगमें अपनेको वियोगी समझता रहे ! समझे ?"

कल्क साहबके होश हवा हो गये, बादशाह बेगमने तिरस्कारसे उनकी तरफ़ देखा और बोली, "आपने समझा कि आपने अपने उस्ताद और अपने आलीजाहकी क्या ख़िदमत की है ? जाइये, अब हमें आपको और ज्यादा अपने सामने देखनेकी तमन्ना नहीं है। आपने हमारे लिए, हमारी बादशाहतके लिए बहुत तकलीफ़ गवारा की !"

कल्क साहब पिटा-सा मुँह लिये बाहर निकले। चेहरेपर हवाइयाँ उड़ रही थीं—वैसी नहीं, जैसी वह अजीबोग़रीब ख्याल आनेपर उड़ी थीं। ये हवाइयाँ दूसरी तरहकी थीं। आज तक कभी उन्होंने यह नहीं समझा था कि शायरके ऊपर एक ज़िम्मेदारी होती है। जब भी इन ज़िम्मेदारियोंसे बरी होकर वह खयालोंकी कुलांचे भरेगा, तभी एक अशुभका उदय होगा।

घरमें जाकर मुँह छिपाया, तो फिर दस दिन तक नहीं निकले। जिस दिन घरके नौकरको उजले कपड़े पहने देखा, उस दिन समझमें आया कि

शाही महलमें जशन हो रहे हैं। अपने आप भी सफ़ेद कपड़े पहने, पतली-सी छड़ी हाथमें ली, बग़लमें दीवान दबाया और चौककी तरफ़ चले। बादशाहसे माफ़ी माँगेंगे, खेलकी बेहूदगीका बयान करेंगे, आगे इससे बाज़ रहनेकी प्रार्थना करेंगे—भले ही सिर क़लम हो जाये। मगर इस तरह ख़ाली हाथ जाना नहीं होगा, चौकमेंसे आज बादशाह सलामतके लिए कोई क़ीमती तोहफ़ा लेना होगा। आख़िर उन्होंने हीरेका कंठा दिया था।

चौकमें दूरसे ही भीड़भाड़ देखी। ज़रा तेज़ीसे लपके। जिस जगह वह पीर फ़कीर बैठा करता था, भीड़ वहीं पर जमा थी। तरह-तरहकी बातें चल रही थीं। मजमेंके ऊपर उचक कर देखा। एक सफ़ेद कपड़ा किसीने वहाँ किसी चीज़पर डाल रखा था। कोई गठरी-सी मालूम होती थी। कान खड़े करके लोगोंकी बातें सुनने लगे :

" 'हाय ग़िज़ा ला ! हाय, ग़िज़ा ला।' बेचारा इसी तरह पुकार-पुकारकर दिन भरमें दो रोटीके टके इकट्ठे कर लेता था।"

दूसरेने कहा, "मगर हुजूर बादशाह सलामतकी 'हाय ग़िज़ाला' जो लोगोंके दिमाग़ पर चढ़ी, तो इसकी 'ग़िज़ाला' की तरफ़ किसीका ध्यान ही नहीं गया। भूखा ही सो गया हमेशाके लिए।"

उफ़्! कल्क साहब कानोंपर हाथ रखकर नवाब वाजिदअलीके निवास-महलकी ओर भागे। पता नहीं रहा कि दीवान कहाँ गिरा और छड़ी कहाँ छोड़ी। उनके सिरपर एक आदमीका ख़ून था। ख़ून ही नहीं था, उन्होंने इन्सानकी भूखके साथ एक बहुत बड़ा मज़ाक अपनी शायरीकी कलाके माध्यमसे किया था। वह मज़ाक इतना बड़ा था, इतना तेज़ था कि इससे उस पीर मर्दकी जान ही निकल गई !

आज फिर कल्क साहबकी वही हालत देखकर लोग हैरान हो गये। महलमें तो जशन मच रहा था। चारों तरफ़ रागरागनियाँ छिड़ी हुई थीं।

बादशाह सलामतको उनकी प्रेयसी मिल गई थी। इससे बड़ी खुशी लखनऊमें और क्या हो सकती थी!

कल्क साहबको जल्दीसे नवाब साहबके हुजूरमें पेश किया गया। उनकी हालत देखकर नवाबका चेहरा उतर गया। उनकी ओर बढ़ते हुए बोले, "क्यों, कल्क साहब, आज क्या बात है? क्या आप आज भी हमारे लिए कोई वैसा ही तोहफ़ा लाये हैं?"

शायर आज धाड़ें मारकर नहीं रो रहा था। लेकिन उसकी आँखोंसे आँसू ज़रूर ढुलक रहे थे। उसने कहा, "हुजूर, चौकमें एक बूढ़ा फ़कीर आज 'हाय, ग़िज़ाला, हाय, ग़िज़ाला!' की रट लगाता हुआ मर गया। उसे किसीने एक रोटी तक नहीं दी। उसीसे मैंने वह ख्याल लिया था, जिसका आज आप जशन मना रहे हैं।"

"लाहौल...!" वाजिदअली शाह चिल्लाये। "सद आफ़रीं, सद आफ़री (सौ सौ मुबारक बादियाँ)! इतना बड़ा वियोगी मर गया और लोगोंने उसे एक कफ़नके लिए नहीं पूछा? अरे, कोई है?"

वहाँ बहुत थे। एक आगे आये। नवाबने हुक्म दिया: "देखो. चौकमें एक बूढ़ा फ़कीर, एक महान् वियोगी अपनी प्रेयसीके नामकी रट लगाता हुआ मर गया है। उस पीर मर्दके लिए ज़मीन मुकर्रर करके उसकी दरगाह बनाओ और लखनऊके हर खास-व-आमको हमारा हुक्म सुनाओ कि हर दीवालीकी रातको उसकी कब्रपर दीये जलाये जायँ।"

कल्क साहबका कलेजा फटनेको हुआ। वह ज़ोरसे चिल्लाये, "नहीं, नहीं, इससे बड़ा मज़ाक और कोई नहीं होगा..." और इनसे पहले कि वह आगे कुछ कहें, उनका शरीर मूर्छित होकर ज़मीनपर गिर पड़ा। नवाबने हुक्म रोक लिया।

मगर हिन्दुस्तानमें आज भी हर साल करोड़ों पीरके दीये जलाये जाते हैं।

• काँसेका आदमी

सन् १८५७ ईसवीके प्रारम्भिक दिन थे। बिठूरके क़िलेमें एक विशाल सहभोजका आयोजन था। कानपुर नगर तथा छावनीके ऊँचे-ऊँचे अफ़सर आमन्त्रित थे। हल्का गुलाबी जाड़ा था। नाना धून्दूपन्तकी रेशमी पगड़ी विशेष आकर्षणकी वस्तु थी। उनके छोटे भाई बाला साहब सम्मानित अतिथियोंको स्वयं प्लेटें पहुँचा रहे थे। खिलखिलाता चेहरा, बड़ी-बड़ी आँखें और चुस्त बदनमें बाला साहब हर विदेशीको अपनी ओर आकर्षित कर लेते थे। नाना साहबके भतीजे राव साहबने कमरपेटीमें जो खिलौना तलवार लटका रखी थी वह उनके बूटके साथ बजती थी क्योंकि उन्होंने अंगरेज़ोकी पोशाक धारण की थी। पाँच वर्षका यह बालक कानपुरके कलक्टर मिस्टर हिलर्सडनको अंगरेज़ी ढंगसे सैल्यूट करके बोला, "हम कैसे लगते हैं?"

"अत्यन्त सुन्दर!" हिलर्सडनने कहा। फिर उसे पीठकी ओरसे बाँहमें समेटते हुए पूछने लगे: "लिटिल नाइट [नन्हें वीर], हमारी गोदमें बैठोगे?"

"नहीं," नन्हें वीरने कहा, "हम अपनी गद्दी पर बैठेंगे।"

इस भोली-सी अभिव्यक्तिका दूसरा अर्थ लगाते ही हिलर्सडनके मुखका भाव परिवर्तित हो गया। उसने फिर इस नन्हें वीरमें कोई रस न लेकर पीठ मोड़ ली। उनके सामने सलादकी प्लेट रखते हुए बालारावने कहा, "खाँ साहब इसके लिए इंग्लैण्डसे एक गद्दी खरीद लाये हैं। यह उसके सामने किसीको कुछ नहीं गिनता।"

नाना साहब दरवाज़ेपर अभ्यागतोंका सत्कार कर रहे थे। जब सभी उपस्थित हो चुके, तो वह अपनी कुरसीकी ओर बढ़े। कुरसीके आगे खड़े

होकर उन्होंने अभ्यागतोंको सम्बोधन करके कहा, "सम्मानित अतिथियों, अब केवल एक व्यक्तिकी प्रतीक्षा और है..." उन्होंने अपनी बात पूरी भी नहीं की थी कि सामनेकी ओर देखकर बोले, "और लो, वह भी आ गये!"

सभी लोगोंकी दृष्टि हालके दरवाज़ेपर जाकर टिक गई। एक क्षणके लिए आगन्तुकने दरवाज़ेके बीचों-बीच खड़े होकर अतिथियोंपर एक सरसरी नज़र डाली और फिर आगे बढ़ा। इकहरा शरीर, बदनपर शेरवानी और पैरोंमें चूड़ीदार पायजामा तथा लखनवी जूते, सिरपर मराठा पगड़ी, बहुत हल्की ब्राउन रंगकी मूँछ और दाढ़ी, जिनका कटाव इंगलिश नाईके हाथों किया हुआ था, सिर थोड़ा आगेकी ओर झुका हुआ, दो-दो पतली रेखाओंमें सिमटी आँखें, हाथोंमें एक छोटा सा इंगलिश अटैची केस—थोड़ेमें यही उस व्यक्तिकी रूपरेखा थी।

जब तक वह अपने स्वामी नाना साहबकी कुरसीके बराबर रखी हुई अपनी कुरसीके सामने जाकर खड़ा हुआ, कलक्टरकी सेक्रेटरी मिसेज़ ओब्रायनने तनिक झुककर अंगरेज़ीमें मिस्टर हिलर्सडनके कानोंमें कहा, "मेरा ख्याल है यह वही अज़ीमुल्लाखाँ है, जो दो साल पहले इंगलैंडमें नाना साहबकी पेंशन छुड़ाने गया था।"

होंठ बिचकाकर मिस्टर हिलर्सडनने अंगरेज़ीमें ही धीमेसे उत्तर दिया, "हाँ, यह वही धायपुत्र है, जिसे हमलोगोंने कीचड़से निकालकर आदमी बनाया था।"

मिस्टर हिलर्सडन अपनी जगह सही थे। सन् १८३७–३८ के अकालमें जब एक दीनहीन लड़का अपनी माँके साथ सड़कपर छः दिनसे भूखा पड़ा मर रहा था, तो एक अंगरेज़ स्कूलमास्टर मिस्टर पेटनने उसे वहाँसे उठाकर अस्पतालमें भरती कराया था और बादमें कानपुरके फ्री स्कूलमें तीन रुपये मासिक छात्रवृत्ति देकर शिक्षा भी दिलाई थी—इसलिए कि दुनियाके ईसाईयोंकी संख्यामें एककी बढ़ती और हो जाये। मगर उसकी

माँने यह स्वीकार नहीं किया था और वह धायके रूपमें ही अपना पेट पालती हुई मर गई थी। उसने बादमें ब्रिगेडियर स्कॉट तथा ऐशबर्नहमकी मुंशीगिरी की थी। वह मुंशीगिरीपर क्यों नहीं टिक सका और क्यों नाना साहबकी सेवामें आया यह उस समयकी ईसाईयतका एक साधारण रहस्य था। जो भी हो, वह आज दुनियाकी निगाहोंमें नाना साहबका मंत्री था और नानाकी निगाहोंमें एक रहस्यपूर्ण तथा सुबुद्धिमान् मित्र था। जब पेशवा बाजीरावके मरनेपर अंगरेज़ोंने उनके दत्तक पुत्र, नाना साहबकी आठ लाख वार्षिककी पेंशन ज़ब्त कर ली, तो उन्होंने दो वर्ष पहले अपने इस रहस्यपूर्ण और सदा मुसकराते रहनेवाले मित्रको ईस्ट इंडिया कम्पनीके डाइरेक्टरोंसे अपील करनेके लिए इंग्लैंड भेजा था। अभी दो ही दिन हुए वह इंग्लैंडसे वापस आया था।

मेजर सर जार्ज पार्करने पूछा, "कहिये, खाँ साहब, इंग्लैंड आपको कैसा लगा?"

"आपके इस प्रश्नके लिए धन्यवाद!" मंत्रीने अभ्यर्थनामें गरदन झुकाकर कहा, "वास्तवमें इंग्लैंड मुझे उतना ही अच्छा लगा, जितने अच्छे आप लोग स्वयं हैं। वहाँके लोगों और महिलाओंने मुझे भेंटोंसे लाद दिया और मैं यह समझनेमें असमर्थ हूँ कि उन सब भेंटोंका क्या उपयोग करूँ। क्या आप सब लोग इस सहभोजका आनन्द लेते हुए इस अधम सेवककी इस विषयमें कोई सहायता कर सकते हैं?"

नाना साहबने सभी अभ्यागतोंसे खानेके विषयमें कोई अपनी सहायता आप करनेकी प्रार्थना की और लोगोंके हाथ प्लेटोंकी ओर पहुँचने लगे।

राइडिंग स्कूलके मास्टर मिस्टर गिलने शोरवेका एक घूँट भरकर कहा, "तब आशा है कि आप उन भेटोंका प्रदर्शन हम लोगोंके सामने अवश्य करेंगे।"

खान कुरसीपर बैठ गया था, मगर उसका हाथ अपनी प्लेट तक नहीं पहुँच सका था। निश्चित रूपसे मुझे उन भेटोंका प्रदर्शन आप सज्जनोंके

सम्मुख करना ही होगा क्योंकि उन अमूल्य उपहारोंमें अधिकांश उपहार भौतिक अस्तित्वके स्थानपर मानसिक अस्तित्व रखते हैं।"

सभी लोगोंके मुँह तक पहुँचते हुए काँटे रुक गये। बाज़ार सारजेन्ट की पत्नी मिसेज़ रीडने मिसेज़ ओब्रायनके कानमें कहा, "ही इज़ इरैज़िस्टिब्रिल (इस आदमीकी ओर आकर्षित हुए बिना मन नहीं मानता) !"

"यही तो इसका गुण है," मिसेज़ ओब्रायनने कहा।

पादरी मिस्टर मर्चेन्ट बोले, "मिस्टर खान, हम लोग आपका मतलब ठीक-ठीक नहीं समझे।"

खानने सामने रखे रसमें चम्मच डालते हुए, उससे खेल करते-करते कहा, "इसका अर्थ बहुत सीधासादा है। असलमें ये उपहार विचारोंके रूपसे प्रदान किये गये हैं। ये विचार इंग्लैंडके निवासियोंकी बहुमूल्य संपत्ति हैं, और इन्हें उपहारमें पाकर मैं तथा मेरे साथ-साथ हुजूर नाना साहब अपनेको अत्यधिक सौभाग्यशाली समझते हैं। उदाहरणके लिए मैं एक उपहार आप लोगोंके सामने रखता हूँ : कम्पनी बहादुरके एक डाइरेक्टर महोदयने मेरी अपीलको देखकर मुझसे अत्यन्त विनम्रतापूर्वक कहा, 'खान साहिब, हम आपके सबसे बड़े मित्र हैं, मगर एक सिद्धान्त आपको सदा याद रखना चाहिये : सामूहिक राजनीतिक प्रणालीमें व्यक्तिगत भावनाओंका मूल्य उतना ही होता है, जितना उस मूल्यके अंकको समूहकी संख्याके अंकोंसे भाग देनेपर भागफल आता है।' आप सज्जनोंने देखा कि यह सिद्धान्त मेरे ज़बानी याद हो गया है। परन्तु खेद है कि इसका अर्थ समझना मेरे लिए शेष है। मैं इसमें नाना साहबकी ओरसे आप सज्जनोंके सहयोग तथा सहायताकी आशा रखता हूँ।"

महिलाओंने अर्थपूर्ण दृष्टिसे एक दूसरेकी ओर देखा। मेजर पार्करने मुँह बाकर स्कूलमास्टर मिस्टर गिलकी ओर नज़र घुमाई। मिस्टर गिल एक ठोस मांसके टुकड़ेपर छुरी चलाते हुए बोले, "खूब! इससे सिद्ध होता है कि मस्तिष्क ही वास्तवमें संसारका शासन करता है। मिस्टर खान,

मेरा ख्याल है कि आपको मिले उपहारकी सन्दूक़चीमें जो मज़बूत ताला लगा है, मेरे पास उसकी कुञ्जी है। बहुत सीधीसादी बात है। आइये, हम एक कथाकी कल्पना करें..."

नाना साहबने विनम्रतापूर्वक मुसकराकर बीचमें ही कहा, "वास्तवमें क्या हम लोग अब कोई कहानी सुनने जा रहे हैं? ओह! किसी हार्दिक सहभोजके बीचमें कहानियाँ किस प्रकार आनन्दकी सृष्टि करती हैं यह वर्णनसे बाहरकी बात है!" और उन्होंने मग्न होनेके प्रदर्शनमें अपने हाथका चम्मच तस्तरीमें गिरा दिया।

उपस्थित विदेशियोंने नानाके द्वारा की हुई इस प्रशंसासे कृतज्ञताका अनुभव किया। मिस्टर गिलने अपनी बातका क्रम पकड़ते हुए कहा, "धन्यवाद, योर एक्सीलेंसी! हाँ, तो कथा यह है कि किसी शेरने एक बार एक लोमड़ीको पकड़ लिया। लोमड़ीने प्रार्थना की कि दया और करुणाके नाम पर उसकी जानबख्शी की जाये, जिससे यह सिद्ध हो कि शेर ही वास्तवमें जङ्गलका राजा है। वह दण्ड भी दे सकता है और क्षमा भी कर सकता है। शेरने सोचा कि अपनेको सर्वशक्तिमान् सिद्ध करनेके लिए इससे अच्छा अवसर कौन हो सकता है कि दयाके नामपर की गई अपीलको स्वीकार किया जाये। उसने प्रमाणके लिए लोमड़ीकी पूँछ काटकर उसे छोड़ दिया...मेरा ख्याल है कि आप लोग कहानीमें रस ले रहे हैं।"

ख़ान विचारपूर्ण मुद्रामें अभी तक चम्मचसे खेल रहा था। कलक्टरने अपने काँटेमें फँसे हुए एक टुकड़ेको आँखोंके सामने घुमाते हुए, स्कूल-मास्टरको लक्ष्य करके कहा, "मिस्टर गिल, आप कहानी कहनेमें सिद्ध-हस्त हैं।"

पाँच वर्षकी आयुमें तलवारके धनी हो गये राव साहब अपनी ऊँची कुरसीपरसे प्रयत्नके साथ उतरकर मास्टर गिलकी बराबरमें आ खड़े हुए। मिस्टर गिलने उनके कन्धेपर हाथ रखकर उसे सहलाते हुए कहा,

"लोमड़ी इससे बहुत कृतज्ञ हुई और उसने अपनी जातिमें पहुँचकर यह प्रचार किया कि सिंह जङ्गलका राजा है। मगर सिंहको तो अपने भोजनसे वंचित होना पड़ा था। साथ-साथ लोमड़ीके द्वारा उसका प्रचार हो जानेके कारण जङ्गलके सभी जानवर सिंहसे डर-डरकर या तो भाग गये या छिप गये। भोजनकी समस्या कठिन होनेपर जङ्गलके सब सिंहोंने एक सभा की और निश्चय किया कि जो भी सिंह कोई शिकार करे वह सामूहिक संग्रहालयमें लाकर जमा करे, जिससे खाद्य-प्राप्तिकी इस अनियमितताका तो अन्त हो...मेरा ख्याल है महिलाएँ इस कहानीमें रस नहीं ले रही हैं।"

मिसेज़ रीडने प्रसन्नताके साथ कहा, "मैं अपना काँटा नहीं खोज पा रही हूँ, मिस्टर गिल।"

मिस्टर गिलने उक्त महिलाकी ओर अन्दाज़से गरदन मोड़कर कहा, "धन्यवाद। मेरी कहानी बहुत थोड़ी-सी रह गई है, और तब मेरा ख्याल है आपको अपना काँटा अवश्य मिल जायगा...हाँ, तो उस दिनके बाद सिंहोंकी व्यक्तिगत सत्ता समाप्त हो गई और उनकी शक्ति जंगलमें सचमुच सर्वोच्च हो गई। जो शिकार वे करते वह सब एक जगह एकत्र हो जाता और बादमें सबको बँट जाता। अब, एक दिन संयोगसे वही पूंछकटी लोमड़ी फिर उसी सिंहके हत्थे चढ़ गई, जिसने दयाके वशीभूत होकर उसे छोड़ दिया था। लोमड़ीने कहा, "देखिए, मैं वही आपकी पूँछकटी प्रियपात्री हूँ। आप उस गौरवको न खोइए, जो मुझे क्षमादान देनेके कारण आपको मिल चुका है।" मिस्टर खान, सिंहने जो उत्तर दिया, उससे आपके इस उपहारकी कुंजी मिल जाती है।"

खानने अपना मुँह ऊपर उठाया। उसके मुखका गौर वर्ण गाढ़ा पड़ चुका था, और उसकी आँखें और भी अधिक सिकुड़ गई थीं। गलेकी अटकको निगलते हुए उसने कहा, "धन्यवाद! मेरा ध्यान आपकी ओर पूर्णरूपसे आकर्षित है।"

मिस्टर गिल मुसकराये। उन्होंने कहा, "तब सुनिये: सिंहने उत्तर

दिया, 'प्रिय लोमड़ीरानी, एक समय था कि मैं सर्वशक्तिमान् था क्योंकि मैं आत्मनिर्भर था। आज मैं पहलेसे अधिक बली हूँ, किन्तु उस गौरवको प्राप्त करनेमें असमर्थ हूँ, जो तुम मुझे देना चाहती हो। अब हमने बीस सिंहोंका एक समूह बना लिया है। पहले मेरी भावनाओंका मूल्य इतना था कि मैं चार पकड़े गये जानवरोंमेंसे एकको क्षमा कर सकता था, इसलिए मेरी दयाभावनाका मूल्य एक लोमड़ीकी जान थी। अब मुझे उस मूल्यको बीसकी संख्यासे भाग देना पड़ता है, जिससे भागफल केवल एक बटा बीस रह जाता है। पहले मैंने पूँछ रख ली थी और तुम्हारे सारे शरीरको छोड़ दिया था। अब मैं पूँछ तो तुम्हारी जातिके उपयोगके लिए छोड़ सकता हूँ, किन्तु तुम्हें नहीं छोड़ सकता। मेरा ख्याल है तुम्हारी पूँछ मेरी भावनाके एक बटा बीससे अधिक महत्त्व नहीं रखती।"

मिसेज़ रीड उछल पड़ीं। मिस्टर हिल्सडनने अपना टोप हवामें उछाल दिया। सब ओरसे वाह-वाहकी आवाज़ें आने लगीं। मेजर पार्कर हँसते-हँसते दोहरे हो गये। अन्य सज्जनों तथा महिलाओंने मिस्टर गिल की ओर जातिगौरवकी दृष्टिसे देखा।

कहानी समाप्त होते ही राव साहब पुनः अपने स्थानपर आकर डट गये। अज़ीमुल्लाखाँ उठा और उसने सब लोगोंको एक नज़रमें घुमाते हुए अत्यन्त नम्र स्वरमें कहा, "मिस्टर गिलकी विद्वत्ता निःसंदेह उपमा-रहित है। भविष्यमें मैं और नाना साहब इस बातका विचार रखेंगे कि हम कहाँ तक इस दुर्लभ ज्ञानका उपयोग कर सकते हैं। मिस्टर गिलने न केवल हमें उस सूत्रका अर्थ बताया है, बल्कि अन्य उपहारोंकी कुंजियाँ प्राप्त करनेका पैमाना भी हमारे सामने रखा है। अब मैं आप लोगोंके सामने एक अन्य उपहार रखता हूँ, जो भौतिक अस्तित्व रखता है।" कहते-कहते खानके मुँहका रंग और भी गहरा हो गया।

एकके बाद एक रोचक स्थिति लोगोंके सामने आती जा रही थी, इसलिए भोजका प्रमुख कार्य धीमी गतिसे चल रहा था। सबने उत्सुक

नेत्रोंसे देखा कि खानने अपने पास रखा वह अटैची केस उठाया, बड़ी मेज़के ऊपर रखकर उसे खोला। उसमेंसे कुछ आपसमें जुड़े हुए मोड़-खाये डंडोंका समूह और उसके बीचमेंसे लेंसकी तरहकी एक चीज़ निकली। खानने मेज़के ऊपर उन डंडोंको सीधा किया और जब यन्त्र अपनी तिपाईपर खड़ा हो गया, तो उसकी ऊँचाई लगभग पाँच फ़ीट थी। उसके ऊपर जो गोल कैमरा-सा लगा था, उसके भीतरसे गोलाईकी परतें निकलती चली गईं और यह अन्तमें जाकर केवल एक इंच व्यासकी रह गई। निःसंदेह यह एक शक्तिशाली दूरबीन थी।

मेजर पार्करने कहा, "ओह! यह तो एक टेलिस्कोप है!"

खानने फिर गरदन झुकाई और बोला, "यह उपहार मुझे ईस्ट इंडिया कंपनीके डाइरेक्टरोंने सम्मिलित रूपसे और निजी व्ययसे दिया है। आप लोग यह बात जानकर आश्चर्य करेंगे—और मुझे व्यक्तिगत रूपसे, स्वयं मूर्ख बनकर भी, अपने सम्मानित अतिथियोंका मनोरंजन करनेमें संकोच नहीं है—कि यह दूरबीन देते हुए मैनेजिंग डाइरेक्टर महोदयने मुझसे कहा कि यह वस्तु निश्चयतः हमलोगोंके उस अभावको दूर करेगी, जो हमलोगोंके लिए नितान्त पीड़ाजनक है।"

मिसेज़ रीडने चुपकेसे फिर मिसेज़ ओब्रायनका कान टटोला। "क्या आपको यह अनुभव नहीं होता कि इस आदमीके चेहरेका रंग, जो यहाँ आते समय अशर्फ़ीके रंगमें मिलता-जुलता था, अब काँसेके रंगमें बदल गया है।"

मिसेज़ ओब्रायनने एक क्षण उसकी ओर लक्ष्य किया और बोली, "आश्चर्य है! आपकी बात सही है। सचमुच यह आदमी बिलकुल काँसेकी मूर्तिकी तरह मालूम होता है। इसका क्या अर्थ हो सकता है?"

उक्त मिसेज़को इसका अर्थ उस समय पता नहीं लग सकता था क्योंकि उसकी व्यवस्था शेरों व लोमड़ियोंकी कहानीसे नहीं हो सकती थी, केवल भविष्यसे ही हो सकती थी।

मिस्टर जी नामक एक बूढ़े अंगरेज़ने पूछा, "ख़ान साहब, क्या हम लोग जान सकते हैं कि वह अभाव क्या है ?"

ख़ान साहबने कहा, "सम्मानित डाइरेक्टर महोदयने मुझे बताया कि जिस चीज़के लिए मैं इंग्लैण्ड गया था वह मुझे केवल इसीलिए नहीं मिल सकी कि हम हिन्दुस्तानियोंमें किसी वस्तुका नितान्त अभाव है, उसका नाम है 'दूरदर्शिता' ।"

"फ़ाईन (सुन्दर) !" मिस्टर हिलसडन चिल्लाये। "यह एक बहुत अच्छा मज़ाक रहा।"

काँसेका वह आदमी मुसकराया और बोला, "और मैंने उन्हें विश्वास दिलाया कि हिन्दुस्तानी लोग जिस चीज़को नहीं जानते, उसे समझ बहुत जल्दी लेते हैं। हम वास्तवमें उनकी इस सुन्दर हास्य-भेंटके लिए कितने कृतज्ञ हैं, वह केवल भविष्य ही बता सकता है।"

सभी लोगोंने ख़ानकी इस बातको उन जामोंके उड़ते हुए नशेमें ग्रहण किया, जो इंग्लैण्डसे ख़ानके साथ आई शराबसे भरे गये थे। मिसेज़ ओब्रायनने इस व्यक्तिसे बातें करनेका अवसर पानेके लिए कहा, "मिस्टर ख़ान, इंग्लैण्डकी महिलाओंके सम्बन्धमें आपके क्या विचार हैं ?"

"मुझे उन सम्मानित महिलाओंकी ख़ुशियों और मुसकराहटोंको देखकर आश्चर्य तथा आनन्द दोनों होते थे," ख़ानने एक-एक शब्दको तौलते हुए कहा। आश्चर्य इसलिए कि उन्हें इस बातकी तनिक भी अनुभूति होती मालूम नहीं होती थी कि उनके बन्धु-बान्धव इतनी दूर, संसारके दूसरे सिरेपर, हिन्दुस्तानकी सर ज़मीनपर भारी ख़तरोंके बीच रह रहे हैं !—और आनन्द इसलिए कि जहाँ हज़ार जगहसे फटे कपड़ोंमें तन उघाड़कर हमारे देहातोंकी महिलाएँ लज्जाशीला होनेका दम्भ (!) करती हैं, वहाँ मूल्यवान और लहराते हुए वस्त्रोंसे समस्त शरीरको आच्छादित करके भी इंग्लैण्डकी महिलायें उनसे कितनी विपरीत हैं ! मैंने इस मुक़ाबलेको

देखनेके लिए उन महिलाओंको निकट भविष्यमें ही हिन्दुस्तान आनेका निमन्त्रण दिया है।"

हल्की खुमारीमें मिसेज़ ओब्रायनने इसे प्रशंसाके रूपमें ग्रहण किया।

जब दावत खत्म हुई और अभ्यागत बिदा होने लगे, तो नाना साहबके सेवकोंने प्रत्येक विदेशीको एक-एक कमलका फूल भेंट किया। क़िलेसे बाहर निकलकर लैन्डो गाड़ीमें सवार होते हुए मिस्टर हिलर्सडनने मिसेज़ ओब्रायनसे कहा, "मुझे याद नहीं आ रहा है कि यह किस चीज़का फूल है। बड़ा तो इतना है, मगर इसमें सुगन्ध तो नाममात्रको भी नहीं है!"

मिसेज ओब्रायनने कलक्टर साहबकी बाँहका सहारा लेकर गाड़ीमें चढ़ते हुए कहा, "इन हिन्दुस्तानी फूलोंमें सुगंध नहीं होती, फिर भी ये भौंरोंको अपने भीतर बन्द करके उनका साँस घोंट डालते हैं।"

इस कल्पनापर मिस्टर हिलर्सडनने एक खुला ठहाका लगाया।

इसके एक सप्ताह बाद ही, २५ मार्च सन् अठारह सौ सत्तावनको, मेरठमें कमलके फूल भौंरोंको लिये-दिये बन्द होने आरम्भ हो गये। किसी प्रकांड कविकी कल्पनाके ये लाल प्रतीक मेरठसे दिल्ली, अलीगढ़, सीतापुर, लखनऊ होते हुए कानपुर तक पहुँचे और तीन महीनेके भीतर-भीतर समस्त उत्तर भारत कमलके रंगकी तरह लाल हो गया। शरण माँगनेके लिए अंगरेज़ बिठूरके क़िलेमें आये। खान नाना साहबके साथ था। नाना साहबने अर्थपूर्ण दृष्टिसे उसकी ओर देखा। फाँसेकी प्रतिमाकी तरह सीधे खड़े उस व्यक्तिके मुँहसे संक्षिप्त स्वर निकला: "नौलखाहार।"

नाना साहबने मिस्टर हिलर्सडनसे कहा, "नवाबगंजका ख़ज़ाना खोलना पड़ेगा। मेरे पास न आदमी हैं, न तोप हैं, न तलवारें हैं।"

पास ही खड़े राव साहबने अपनी नन्हीं-सी तलवार पेश की, और अकड़कर बोले, "हूँ, तलवारें कैसे नहीं हैं!"

मिस्टर हिलर्सडनने कुछ सोचते हुए कहा, "लेकिन नवाबगंजके ख़ज़ानेमें तो नौ लाख रुपया है!"

"ओह !" नाना साहबने कहा, "इतना कम ! लो, मुझे तो यह मालूम ही नहीं था...खैर, फिर भी किसी तरह मैं प्रबन्ध करूँगा ही, कम-से-कम पाँच सौ घुड़सवार तो चाहिए ही।"

हिलर्सडनने सिर लटका लिया, फिर सिर उठाकर उस काँसेके रंगका निरीक्षण किया। वही मुसकराहट थी। घृणा और क्रोधका वर्ण पहचाननेमें फिर एक बार भूल हुई और फलस्वरूप नौलखा नवाबगञ्ज, एक बड़ी मैगज़ीन (शस्त्रागार), एक छोटा-सा तोपख़ाना, और पाँच सौ देशी घुड़सवार नानाकी वह शक्ति बन गये, जिसने उनका नाम वीर तात्या टोपे और सन् सत्तावनकी दुर्गा रानी लक्ष्मीबाईके साथकी पंक्तियोंमें टाँक दिया।

हिलर्सडनके बिदा होनेके एक सप्ताह बाद ही मेजर जनरल सर एच० एम० ह्वीलरकी क़िलेबन्दीमें उस परिवर्तित रङ्गके व्यक्तिने प्रवेश किया। मेजर पार्करने उससे बहुत झटकेके साथ हाथ मिलाया, और प्रसन्नतासे कहा, "आखिर हिन्दुस्तानमें कोई तो है, जिसपर हम भरोसा कर सकते हैं।"

ख़ानने अपने हाथमें दबा हुआ हाथ ढीलेपनसे छोड़ते हुए कहा, "मेजर साहब, सावधान रहिये, कष्टके समय मनुष्यको प्रायः सिद्धान्त याद नहीं रहते।"

"मगर हमें याद हैं," मेजरने सर ह्वीलरके कमरेकी ओर बढ़ते हुए कहा। "हम इस बातको जानते हैं कि किसीका भविष्य उसके मित्रोंके चुनावपर ही निर्भर करता है।"

उसी समय मेजर जनरल ह्वीलर अपने कक्षसे निकलते दिखाई दिये। उनके हाथमें एक राइफ़ल थी। ख़ानकों देखते ही वह चौंक गये। ख़ानने बड़ी गरमजोशीसे हाथ मिलाया और राइफ़लकी ओर देखते हुए प्रश्न-सूचक स्वरमें पूछा, "एनफ़ील्ड राइफ़ल ?"

मेजर ह्वीलरने अपने अस्त्रको गर्वके साथ देखते हुए कहा, "हाँ, यह नया अस्त्र उन लोगोंको अच्छा सबक़ सिखायेगा, जो जानबूझकर सैनिक

सिद्धान्तोंका उल्लङ्घन करते हैं...देखिये," और उन्होंने जेबसे कुछ कारतूस निकालकर उन्हें दाँतोंसे काटा और राइफ़लमें भरा। फिर घोड़ा चढ़ाया, सिपाही-बाग़के एक फलोंवाले वृक्षकी ओर निशाना लगाया और एकके बाद एक छः फल उसपरसे टूटकर धरती पर गिर पड़े।

चिकने कारतूसोंको मेजरके हाथसे लेकर ख़ानने उन्हें मसला, फिर प्रसन्नता प्रकट करते हुए बोला, "कितनी चमक है इनमें !"

"हाँ," मेजर पार्कसे कहा, "और वे लोग कहते हैं कि इनमें गाय और सुअरकी चरबी लगाई गई है। मक्कार कहींके ! धर्मकी आड़ लेकर तीर मारते हैं !"

ख़ानके चेहरेका ब्राउन रङ्ग सीधी धूप पड़नेसे चमकने लगा। "उन लोगोंकी संस्कृति ही दूषित है !" ख़ानने कहा। "वे इस सीधी-सी बातको भी नहीं देख सकते कि फिरङ्गी भारतवर्षमें केवल पवित्र पिता ईसामसीहका सन्देश सुनानेके सदुद्देश्यसे आये हैं ! अगर मेरी पागल माँ मरते समय मुझसे वचन न ले जाती, तो मैं स्वयं कभीका उस करुणाके दामनको थाम लेता, जो हमारे सौभाग्यसे स्वयं हमारी ओर बढ़ रहा है !" निःसन्देह मेजरको यह सुनकर परम सन्तोष हुआ।

दूरसे मिसेज़ रीडने ख़ानको देखा और वहींसे पुकारा, "ओह ! मिस्टर ख़ान, आप कितने अच्छे हैं कि मुसीबतमें हम लोगोंकी ख़बर लेनेके लिए स्वयं कष्ट करके आये हैं। ठहरिये, बिना मुझसे हाथ मिलाये न चले जाइये।"

जब तक वह पास आये, ख़ानने उसकी ओर प्रसन्नताका हाथ हिलाकर मेजर जनरलसे कहा, "क्या मैं उन कृपालु सज्जनोंके दर्शनसे वञ्चित रहूँगा, जिनकी सुरक्षाके लिए मेरे छोटेसे दिलमें धुकड़-पुकड़ मची हुई है ?"

"नहीं, नहीं," मेजर जनरल ह्वीलरने कहा। "आइये, सभी लोग आपसे मिलकर बहुत प्रसन्न होंगे।"

मेजरके साथ दो पग आगे बढ़कर, ख़ानने मिसेज़ रीडसे हाथ मिलाते

हुए उसे थोड़ा-सा सहानुभूतिसे दबाया और बोला, "विश्वास कीजिये, हम शीघ्र ही आपकी सब मुसीबतोंका ख़ात्मा कर देंगे।"

काश कि प्रसन्नताके उद्वेगमें मिसेज़ रीड इस आश्वासनका सही-सही अर्थ समझ पाती।

सिपाही-बाग़के निकट पक्की छतकी बैरककी ओर, अन्य मित्रोंसे मिलनेके लिए जाते समय ख़ानने वह कुआँ देखा, जो फूसके छप्परसे छाई हुई बैरक और स्टोर तथा खाद्य गोदामके बीचके दो सौ फ़ीट चौड़े अहातेके बीचोंबीच बना हुआ था। उसने सिपाही-बाग़के पीछे बारूदकी गाड़ियोंपर भी एक दृष्टि डाली। बेचारे ख़ानको अपने परमप्रिय मित्रोंसे भेंट करनेके लिए उस डेढ़ फ़र्लांगके लगभग लम्बी-चौड़ी क़िलेबन्दीको अनेक बार घूम-घूमकर देखना पड़ा, और अन्तमें जब वह सब लोगोंसे बिदा होकर उनके कष्टोंके प्रति तीव्र सहानुभूति प्रकट करता हुआ बाहर निकला, तो रात हो गई थी। अगर रात न होती, तो उसके बुद्धिमान् मेज़बान उसका रंग और सूरत देखकर निश्चय ही उस काँसेकी प्रतिमाका अनुमान करते, जिसके वक्षमें हृदय नहीं होता।

गंग नहरका पुल पार करके, कानपुरके पश्चिमी भागमें प्रवेश करते ही वह बग्घी घेर ली गई, जिसमें ख़ान बैठा हुआ था। मगर बग्घीके घिर जानेपर भी वह चुपचाप बैठा रहा। बाहरसे सेकिंड लाइट घुड़सवार पलटनके योद्धा चिल्लाने लगे: "फिरंगियोंका जासूस है, मार डालो!"

एक आदमीने परदा खोलकर भीतर झाँका और आश्चर्यसे चिल्ला पड़ा, "कौन, ख़ान!"

ख़ान मुसकरा रहा था। बोला, "मालूम होता है भाँग खा गये हो, बाला साहब! जिन बच्चोंको पकड़ लाये हो, इनसे मेजर जनरल ह्वीलरकी क़िलेबन्दी नहीं टूटेगी। यह नौलखा हार नहीं है। जिसे खूँटीने निगल लिया था।"

"फिर?" बाला साहबने चिन्तासे पूछा।

"फिर उन मानसिक उपहारोंका उपयोग करो, जो हमारे इंगलिश यित्रोंने दया करके हमें दिये थे ! ध्यान रखो : भूखे आदमीमें हथियार उठानेकी ताक़त नहीं होती। क़िलेबन्दीमें उत्तर-पूरबकी दीवारसे सटे हुए राशनके गोदाम हैं। उनके सहारे फिरंगी जनरल दो महीनेतक एक हज़ार आदमियोंको खिला सकता है और लड़ता रह सकता है; बिना उनके एक दिन भी नहीं। तुम्हारे जैसे बुद्धिमान् सेनापतिको इससे अधिक बतानेकी आवश्यकता नहीं है।"

बाला साहबकी आँखें भी चमकीं। उसने कहा, "यहाँ आप भूले खाँ साहब। भूखा दुश्मन यदि हथियार नहीं उठा सकता, तो प्यासा दुश्मन अपनी भूख भी नहीं बुझा सकता। ह्वीलरकी छावनीमें पानीका भंडार कहाँ है ?"

खानने बाला साहबकी पीठ ठोंकी। "तुम तो बाईस वर्षमें ही कुशल सेनापति हो गये हो ! गोदाम और छप्परकी बैरकके बीचमें दो सौ फ़ीटका मैदान है और उस मैदानके ठीक बीचमें कुआँ और चहबच्चा है। जबतक तुम्हारी राइफ़लें चलती रहें, तबतक एक भी आदमी कुएँपर नहीं पहुँचना चाहिए। जाओ, खुश रहो।"

बाला साहब बग्घीसे नीचे उतर गये और कोचवानसे चिल्लाकर बोले, "आगे बढ़ो !"

कुछ ही दिनोंमें कानपुरकी लगभग सभी सेनाएँ विद्रोही हो गईं। जनरल ह्वीलरकी क़िलेबन्दीमें मेजर जार्ज पार्करकी जीभ प्यासके कारण तालूसे चिपक गई थी और वह सतृष्ण नेत्रोंसे उस कुएँकी ओर ताक रहे थे जहाँ-तक पहुँचनेमें अनेक शूरवीर अपनी जान गँवा चुके थे। ऊपरसे रश्मि-राज मार्त्तण्डका कुपितनेत्र सीधा उनकी ओर देख रहा था। दोपहर होते-न-होते उन्हें बड़े ज़ोरका बुखार चढ़ा और संध्यातक उनके प्राणपखेरू तापके देवताकी दृष्टिसे घबराकर पातालकी ओर दौड़ चले।

आनेवाले दिनोंमें अनेकों फिरंगी युद्ध-विशेषज्ञ सूर्यकी तीक्ष्ण जिह्वाकी

भेंट चढ़ गये। नाना साहब तथा खान साहबकी देशभक्तिका समाचार पलक मारते ह्वीलरकी छावनीमें पहुँच चुका था। क़िलेबन्दीसे लगभग डेढ़ मील दूर, सावड़ा कोठीमें नाना साहबने अपनी छावनी बनाई थी।

जिन लोगोंने अँगरेज़ोंके अत्याचारोंसे अपने तथा अपने बन्धुओंके परिवार-के-परिवार नष्ट होते देखे थे, वे अब उनका बदला लेनेपर उतर आये थे। जहाँ-तहाँसे अँगरेज़ोंके ऊपर जनकोपके वज्रप्रहारोंके समाचार अँगरेज़ी छावनीमें आ रहे थे। भीतरकी दशा भी कम ख़राब नहीं थी। मेजर ह्वीलर सन्धिके लिए चिल्लाये। जानपर खेलकर मास्टर गिल नाना साहबसे सन्धिकी बात-चीत करनेके लिए, सफ़ेद झण्डा सम्भालकर क़िलेबन्दीसे बाहर निकले। रातके अन्धेरेमें मज़बूत घोड़ेको तीव्र गतिसे एँड़ लगाते हुए वह तीरकी तरह सावड़ा कोठीपर जा पहुँचे। जब छावनीके पहरेदारोंमें से एकने उनकी ओर राइफ़ल तानी, तो उन्होंने सफ़ेद झण्डा ऊपर उठा दिया।

रातके समय मास्टर गिलको प्रतीक्षा करनी पड़ी। सुबहको जब पहली तोप छूटी, तो उन्हें उस कमरेमें उपस्थित किया गया, जहाँ नाना साहब दीवारपर लगे, कानपुरके एक बृहत् मानचित्रका निरीक्षण बारीक़ीसे कर रहे थे। उनके हाथमें निर्देशक छड़ी थी।

नोकदार लम्बी छड़ीको ज़मीनपर टिकाकर नाना साहब घूमे और चौंककर बोले, "ओह, मिस्टर गिल! हम समझ नहीं पा रहे हैं कि किस प्रकार आपका स्वागत करें क्योंकि आप देख रहे हैं कि कुछ महत्त्वपूर्ण योजनाओंमें हम बुरी तरहसे घिरे हुए हैं। फिर भी क्योंकि आप कष्ट करके यहाँ तक आये हैं, इसलिए आपको थोड़ा-सा राष्ट्रीय समय भेंट किया जा सकता है।"

मास्टर गिल असीम दुःखका भाव मुँहपर लाकर बोले, "नाना साहब, कानपुरके समस्त अंगरेज़ोंकी ओरसे मैं उस भरोसेका उत्तर लेनेके लिए

आया हूँ, जो हमने आपके ऊपर कर रखा था। क्या विश्वासका यही मूल्य दिया जाता है, जो आपने हमें दिया है ?"

"बहुत खूब ! मास्टर गिल, आप तो स्कूलके बच्चों-जैसी बातें करने लगे ! इससे पहले कि हम आपको उत्तर दें, हमारे कुछ प्रश्नोंका उत्तर आपको देना है। बताइये कि अब पूनाके महाराज और हमारे स्वर्गीय पिता श्रीमन्त बाजीराव पेशवाने आपलोगोंके शिकञ्जोंसे खिंचकर पूनाकी गद्दी आठ लाख रुपये वार्षिक पेंशनके भरोसेपर छोड़ी थी, तो क्या उनका मतलब यही था कि यह पेंशन आपलोग उनकी मृत्युके बाद ज़ब्त कर लें ? अगर वह पूनाके पेशवा बने रहते और आपके दबावमें न आते, तो क्या उनके देहान्तके बाद वह राजगद्दी हमें न मिलती ? जिस समय शहंशाह जहाँगीरने आप लोगोंको भारतमें व्यापार करनेकी अनुमति दी थी, तो क्या उन्होंने यही आशा आपसे की थी कि आप पादरियों और तोपोंकी सेनाएँ लिये बढ़ते-चढ़ते चले आयेंगे और भारतकी भूमिपर अपने क़िले बना लेंगे ? जिस समय बंगालमें नवाब अलीवर्दीखाँने आप लोगोंको अपनी भूमिपर फ़ोर्टविलियमका क़िला बना लेनेकी अनुमति दी थी, तो क्या उस समय आपने उसे बता दिया था कि आप सारे हिन्दुस्तानपर लाल पट्टीका झण्डा फहराना चाहते हैं ? मास्टर गिल, आप हमारे सामने सैर और शिकारकी बातें कीजिये, मगर भरोसेकी बात अपनी पाठ्य-पुस्तकोंके लिए उठाकर रख दीजिए।"

मास्टर गिल हक्के-बक्के खड़े सब कुछ सुनते रहे। उनके गलेमें जैसे कुछ अटक गया था। कठिनाईसे वह बोले, "नाना साहब, जिस समय जहाँगीर शहंशाह और अलीवर्दीखाँ नवाबने ये सुविधाएँ हमारे पूर्वजोंको दी थीं, तब न आप थे, न हम थे। युग ज्यों-ज्यों आगे बढ़ता है त्यों-त्यों उन्नति करता है। इस उन्नतिसे जिन लोगोंको हानि पहुँचती है वे उसका जवाब पीछेके युगसे नहीं माँग सकते।"

नाना साहब अपने सामनेकी ओर, कमरेके अन्धेरे कोनेकी ओर देखकर

मुसकराये और बोले : "प्रिय मास्टर गिल, निश्चय रखिये, आपके पूर्वज जो बीज आपके लिए बो गये थे, आज आप उन्हें ही काट रहे हैं। विश्वास कीजिए, आज जो जवाब आपसे माँगा जा रहा है वह आजके ही लोग माँग रहे हैं, उनके पूर्वज नहीं। भारत आपकी भूमि नहीं। यहाँपर आपका अस्तित्व शोभा नहीं देता, आश्चर्य है कि इतनी सीधी-सी बात भी आपकी समझमें नहीं आती !"

मास्टर गिलने कहा, "व्यक्तिगत रूपसे मैं आपकी इस देशभक्तिकी क़द्र करता हूँ..."

नाना साहबने बीचमें ही बात काटकर कहा, "हम आपको विश्वास दिलाना चाहते हैं, मास्टर गिल, कि व्यक्तिगत रूपसे हम आपके सबसे बड़े हितैषी हैं। यदि आप चाहें, तो उस समय तक हमारी व्यक्तिगत छायामें रह सकते हैं, तबतक कि हम आपके समूहको समुद्रमें नहीं धकेल देते..."

मास्टर गिल अत्यन्त दुखित भावसे बोले, "नहीं, मैं अभी इतना नीचे नहीं गिरा हूँ कि अपने बन्धुओंको छोड़कर अपने समाजसे द्रोह करूँगा। नाना साहब, मैं तो उन लोगोंकी ओरसे आपसे यह अपील करने आया हूँ कि कृपा करके इस असहनीय अत्याचारको बन्द कीजिए, जिसे देख-देखकर शैतान भी काँप रहा है। जिस एकमात्र कुएँमें पीनेका पानी है उसे आपने गोलियोंके आवरणसे ढाँक रखा है। घेरेमें सैकड़ों स्त्री-पुरुष और बच्चे प्याससे तड़प-तड़पकर जान दिये दे रहे हैं। माँ और बाप अपने नन्हें-नन्हें बच्चोंको प्याससे तड़पता देखकर कुएँकी जगतपर पहुँचते हैं और गोलियोंसे बिंधकर उसीमें गिर पड़ते हैं। नाना साहब, यह युद्ध नहीं है, नृशंसता है। इन मानवीय वेदनाओंको देखकर क्या आपकी भावनाओंमें तनिक भी कम्पन नहीं होता ?"

उसी समय मास्टर गिल सहसा अपने सामने एक अन्य विचित्र-सी आकृति देखकर मुँह बाये खड़े रह गये। कांसेकी प्रतिमाकी तरह अंधकार

से निकलते हुए अज़ीमुल्लाखांका मानो तेलसे पुता चमकदार चेहरा प्रकाशमें आया। नुकीली दाढ़ी, नुकीली नाक, नुकीली आँखों वाला वह व्यक्ति मास्टर गिलकी ओर अन्तर्भेदी दृष्टिसे देखकर बोले, "सामूहिक राज-नीतिक प्रणालीमें व्यक्तिगत भावनाओंका मूल्य उतना ही होता है, जितना उस मूल्यके अङ्कको समूहकी संख्याके अङ्कोंसे भाग देनेपर भागफल आता है।"

"नहीं, नहीं!" मास्टर गिल चिल्लाये, "राजनीतिक उद्देश्यको प्राप्त करनेके लिए कृपा करके इस प्रकारकी हृदयहीनता न अपनाइए। मैं आपसे अपील करता हूँ...!"

खानने आँखोंसे तीव्र घृणाकी चिनगारियाँ छोड़ते हुए कहा, "व्यक्तिगत रूपसे हमें उस कार्यवाहीके लिए दुःख है, मास्टर गिल, जो उच्छृङ्खलताका निदर्शन करती हैं। किन्तु यह उच्छृङ्खलता स्वयं आपकी ही देन है। जिन लोगोंपर आपने शासन करना आरम्भ किया था, उनके बारेमें आप यह तथ्य भूल गये थे कि वे कठपुतलीमात्र नहीं है, उनमें जीते-जागते इन्सानोंकी चेतना है, वे सुख और दुःखको अनुभव करते हैं, चपत लगनेपर विवशतासे रोते हैं और एक मुट्ठी भात मिल जानेपर खुशीसे किलकारियाँ भरते हैं। आपने कभी उन कुओंकी ओर नज़र उठाकर नहीं देखा, जिनमें महीनोंसे भूखे माता-पिता बच्चोंके मुँहमें दाना न डाल सकनेके कारण अपने सारे परिवारसहित कूदकर जान दे चुके हैं। मैंने उन लाशोंको देखा है, उन कुओंको देखा है, और आपका यह कुआँ उन कुओंका एक छोटा-सा प्रतिरूप है। साम्राज्य-पिपासासे जिन लोगोंका हृदय इतना पत्थर हो जाता है कि वे चारों ओर फैली हुई अकथनीय दीनताको ईश्वरकी देन समझने लगते हैं, आश्चर्य है कि थोड़ेसे व्यक्तियोंके दुःख देखकर वे रो पड़ते हैं! जिन्हें दूसरोंके दुःखोंपर व्यंग्य करना आता है, जो दूसरोंकी विवशताका मज़ाक उड़ा सकते हैं, स्वयं उनके ऊपर कष्ट

आनेपर जब वे लोग रोते हैं, तो उस रुदन-जैसी हास्यास्पद वस्तु पृथ्वीतलपर दूसरी नहीं मिलती।"

मास्टर गिल मुँह फाड़े इन प्रत्युत्तरोंको सुनते रहे, जो बरछियोंकी तरह उनके कलेजेमें गुभे जा रहे थे। अन्तिम प्रयत्न करके उन्होंने कहा, "इतिहास किसी एकका होकर नहीं रहता, कृपा करके थोड़ी-सी दूरदर्शितासे काम लीजिये......"

बीचमें ही बात काटकर खानने कहा, "मास्टर गिल, मुझे खेद है कि मुझे एक और उपहार आपके सामने खोलकर रखना पड़ रहा है। आपके मालिकोंमें से एक सज्जनने कहा था : 'बिना यह देखे कि किसने किस स्वार्थसे लिखा है, इतिहासका पढ़ना घास काटनेके बराबर है। इतिहास उन्हींका है, जो उसे लिखते हैं। जहाँ तक दूरदर्शिताका प्रश्न है, आइये, हम आपको दिखायें कि हम कितने दूरदर्शी हो गये हैं।"

खान यह कहकर दरवाज़ेकी ओर बढ़ा। मास्टर गिल और कोई राह न पाकर उसके पीछे चले। पीछे-पीछे नाना साहब उस कोठीकी छतपर पहुँचे, जहाँ छतके एक किनारेपर वही दूरबीन लगी हुई थी, जिसका प्रदर्शन खानने उस दिन किया था, जब साहब लोग शराबकी खुमारीमें मस्त थे। उसके निकट जाकर ख़ानने पहले स्वयं दूरबीनमें देखा, फिर मास्टर गिलको निमन्त्रण देते हुए कहा, "आइये, देखिये।"

मास्टर गिलने दूरबीनसे आँख लगाकर देखा। जनरल व्हीलरकी क़िलेबन्दीका भीतरी भाग स्पष्ट रूपसे दूरबीनके शीशेपर चित्रकी भाँति चमक रहा था। तोपें छूट रहीं थीं और गोलेके बिखरे हुए टुकड़ोंसे जहाँ-तहाँ छिपे हुए लोग सहसा ही गिर पड़ते थे। उसी समय धुएँका एक गुब्बार-सा उठा और मास्टर गिलने काँपकर देखा कि उस विशाल छप्परमें आग लगी हुई है, जो बड़ी बैरकसे ऊपर छाया हुआ था।

काँपते हुए अङ्गोंसे मास्टर गिल दूरबीन छोड़कर अलग खड़े हो गये।

खानने उनकी ओर देखकर एक तीव्र अन्तर्भेदी मुसकराहटका निदर्शन करते हुए कहा, "बस,हमारी दूरदर्शितासे आप इतनी जल्दी उकता गये। हमें देखिये, हमने इन्हीं आँखोंसे उस घुड़सवार यूरोपियन पलटनको तोपसे उड़ते हुए देखा है, जो इलाहाबादसे आपकी सहायता करनेके लिए आ रही थी। हमने इन्हीं आँखोंसे मेजर पार्कर जैसे सहृदय मित्रको प्याससे तड़प-तड़पकर प्राण छोड़ते देखा है। यह देखकर भी हमारा दिल नहीं पसीजा कि मिसेज़ रीड-जैसी प्यार करने योग्य रमणी तथा मिसेज़ ओब्रा-यन जैसी बुद्धिमती महिला, इस नाशके नृत्यका आनन्द खुले हृदयसे न लेनेके कारण दौरा पड़कर मर गई। बेचारा मिस्टर जी एक राउण्ड शॉटसे कटे पेड़की भाँति ढह गया। मिस्टर हिलर्सडन-जैसा बहादुर और हास्य-प्रिय तथा पैसा बटोरनेवाला कलक्टर तोपके गोलेसे चीथड़े बनकर हवामें उड़ गया। मास्टर गिल, अपनी दूरदर्शिताका परिणाम देख-देखकर हम अपना कलेजा केवल इसी सिद्धान्तके बलपर थामे बैठे रहे कि अब हमारी मानवीय भावनाओंका मूल्य एक बटा तैंतीस करोड़ रह गया है।"

मास्टर गिलके हाथ-पैर काँप रहे थे। उसे मालूम हुआ कि सामनेकी ओरसे कोई योद्धा हाथमें तलवार लिये उनकी ओर झपट रहा है। धुँधली-सी दृष्टिमें वह योद्धा बालक आगे बढ़कर अपनी तलवार ऊपर उठाता हुआ बोला, "मास्टर गिल, हमसे लड़ोगे?"

मास्टर गिलने अपनी आँखें दोनों हथेलियोंसे बन्द कर लीं।

नानाके निजी अङ्गरक्षकोंकी रक्षामें मास्टर गिलको सकुशल ह्वीलरकी क़िलेबन्दीमें पहुँचा दिया गया—केवल इसलिए कि उसी दिन वह गोलियोंसे अपनेको बचाते एक दीवारसे जा सटें और किसी राइफ़लकी गोली उनके उस भेजेको उड़ा दे, जो सिद्धान्तोंकी व्याख्या किया करता था।

इस भारतीय विद्रोहका क्या परिणाम हुआ यह केवल इतिहासकी वस्तु है या उस पीड़ाकी कहानी है, जो उसके बाद भी भारतको नब्बे वर्ष तक भुगतनी पड़ी। सर कोलिन कैम्पबेलने इलाहाबादसे आकर

कानपुर ले लिया। उनके लखनऊ जाते ही विद्रोही सिपाहियोंने फिर कानपुरको कब्जेमें किया, मगर गोला-बारूदकी अधिकता, विद्रोहियोंकी अपेक्षा अधिक दृढ़ सैनिक-संगठन तथा संख्याके बलपर फिरसे कानपुर ही नहीं, बल्कि सारे भारतमें उस स्मरणीय विद्रोहको दबा दिया गया। उसके बाद जो नृशंसताएँ हुईं उनको देखनेपर विद्रोहकी सारी घटनाएँ नक़ल मालूम होती हैं।

बहुत दिनों बाद एक फ़र्स्टक्लास अँगरेजी मैजिस्ट्रेटकी अदालतमें फाँसेके उस आदमीको ज़ंजीरोंसे बाँधकर कठघरेमें खड़ा किया गया। सरकारी वकीलने उसके अपराधोंकी सूचीमें एक लम्बी-चौड़ी नामावली उसके द्वारा की गई हत्याओंके सम्बन्धमें पढ़ते हुए अन्तमें कहा, "...कोई भी ईसाई इस राक्षस, देशद्रोही, नरभक्षक व्यक्तिके नुकीले दाँतोंसे नहीं बच सका...!"

खानने विनोदपूर्वक कहा, "सँभलिये, वकील साहब, इससे तो यह सिद्ध होता है कि आप ईसाई नहीं हैं...!"

कुछ लोगोंने मुँहमें रूमाल दबाकर हँसी रोकी।

सरकारी वकीलने उसकी ओर तीव्र दृष्टिसे घूरते हुए कहा, "...इसने वृद्धोंको मौतके घाट उतारा, स्त्रियोंको जीवित जला दिया, बच्चों तकको नहीं छोड़ा...!"

"मगर एक बच्चा हमारा भी कहीं खो गया है, साहब बहादुर," खानने फिर सिर उठाकर कहा। "अगर आप हमारे लिटिल नाइटके टुकड़े ही कहींसे ला दें, तो हम आपके उस दण्डका पाप क्षमा कर सकते हैं, जो आप हमें देने जा रहे हैं।"

मैजिस्ट्रेटने हथोड़ी बजाकर अभियुक्तको बोलनेसे रोका।

वकीलने कहा, "मी लार्ड, मैं माँग करता हूँ कि इस नरपिशाचको सर्वोच्च दण्ड दिया जाय, जिससे न्यायकी रक्षा हो।"

मैजिस्ट्रेटने कहा, "अभियुक्त अपने बचावमें कुछ कहना चाहता है?"

ख़ानने सिर उठाकर सारी अदालतको देखा। फिर बोला, "अच्छा, मेरे भी कुछ कहनेकी आवश्यकता है! तो सुनिये, सिद्धान्तोंके कोष में एक सिद्धान्त यह और जमा करवा दीजिए कि विद्रोह तभी होता है, जब उसके अतिरिक्त शोषित समूहके लिए कोई राह नहीं रह जाती, और समूहकी भावनाओंको दबाया जा सकता है, मगर वह अन्तिम रूपसे कभी नहीं हारता।"

मैजिस्ट्रेटने फ़ैसला लिखा : "...उस समय तक गलेमें रस्सी फँसाकर लटका दिया जाये, जब तक प्राण न निकल जायें।"

ख़ान ज़ोरसे हँसकर बोला, "कञ्जूसीकी हद है! अरे, कुछ तो बदला दिया होता। हम लोगोंने भारतसे आपका अस्तित्व मिटानेके लिए इतनी गोलियाँ ख़र्च कीं और आप हमें मिटानेके लिए एक गोली भी ख़र्च नहीं कर सकते!"

• कौवेका घोंसला

सन् १८५७ ई० के तूफ़ानी दिन थे। मेरठसे जो आग सुलगी थी वह अपनी लपलपाती जीभोंसे लखनऊको ढाँक चुकी थी। रेज़ीडेंसी चारों ओरसे घेर ली गई थी। अतीतकी समस्त पीड़ाएँ, दबे हुए अरमान, बदलेकी भावनाएँ सब तोपोंके गोलों और राइफ़लोंके रूपमें साकार होकर निकल रही थीं।

यह बात नहीं कि रेज़ीडेंसी बिलकुल निःसहाय थी। अपने शीतप्रधान देशसे येन-केन-प्रकारेण शासन-सत्ता हथियानेकी भावनासे जो लोग समुद्र लाँघकर भारतके गरम मुल्कमें आये थे, उन्हें इस आगकी गरमीका आभास पहलेसे ही हो गया था। रेज़ीडेंसीमें अतुल परिमाणमें गोलाबारूद और आवश्यकतानुसार रसदका प्रबन्ध कर लिया गया था। अफ़सरोंके एक दस्तेने नई एनफ़ील्ड राइफ़लोंपर अचूक निशानेका अभ्यास किया था। नवाब सआदतअलीखाँ अपने गौरांग महाप्रभुओंके लिए रेज़ीडेंसीके रूपमें जो अभेद्य दुर्ग बना गये थे, उसकी दीवारें मामूली तोपोंके गोलोंको पी जाती थीं। इसीमें एक चौकी बुर्ज़ी थी, जिसपर खड़े होकर देखनेपर सारा लखनऊ नक्शेकी भाँति नज़रोंके सामने आ जाता था। अपनी इस अद्भुत विशेषताके कारण इस चौकी बुर्ज़ीका नाम पड़ा था 'कौवेका घोंसला।'

इस कौवेके घोंसलेमें संकेतों द्वारा सूचना लेने-देनेका एक यन्त्र, सीमाफ़ोर, लगा हुआ था। इस यन्त्रके ऊँचे मस्तूलके ऊपरी सिरेपर दोनों ओर दो विशाल हाथ सिगनलके रूपमें निकले हुए थे, जिनका सम्बन्ध मस्तूलके निचले भागमें दो लीवरोंसे था। इच्छानुसार इन लीवरोंको घुमानेसे यन्त्रके दोनों हाथ वांछित स्थितिमें आ जाते थे और

संकेतके अक्षर-अक्षर जोड़कर शब्द बनते चले जाते थे। रातके समय काम आनेके लिए इन हाथोंकी दोनों हथेलियोंपर लाल और हरे शीशे लगी दो छोटी-छोटी लालटेनें इस प्रकार लगा देनेका प्रबन्ध था कि हाथ अपने घूमनेकी गोल परिधिमें किसी भी अवस्थामें हों, लालटेनें सीधी जलती रहती थीं।

बलवन्त सिंह नामक एक खूबसूरत जाट नौजवान अफ़सर सीमाफ़ोर पर नियत था। एक हाथमें तिपाईपर चढ़ी बड़ी दूरबीनके एक सिरेको थामे और दूसरे हाथसे लीवरोंको घुमाते हुए वह लखनऊकी तात्कालिक स्थितिके बारेमें मुँहसे बोलता रहता था और उसके पीछे खड़ी एक अंगरेज़ लड़की उन शब्दोंको पेंसिलसे काग़ज़पर उतारती जाती थी।

नवम्बरकी एक शीतोष्ण रातको, जब कि सारा लखनऊ बुरी तरह भड़का हुआ था, दोनों ओरसे ताक-ताककर गोलियाँ चलाई जा रही थीं, सीमाफ़ोर अपना कार्य अबाधगतिसे कर रहा था। लालटेनकी हल्की रोशनीमें अंगरेज़ लड़की काग़ज़पर फुरतीके साथ पेंसिल चला रही थी और बलवन्त सिंह बोलता जा रहा था :

"आलमबाग़का दक्खिनी सिरा...सर हैवलॉक सूचना देते हैं... जवान जाग रहे हैं...अँधेरी रातमें हाथ सुझाई नहीं देता...मगर हम लोगोंमें जोश है...आलमबाग़का कोना-कोना हमारी नज़रोंमें बसा हुआ है... वह उधर ऊपर उठती हुई चौड़ी सीढ़ियोंका सिलसिला है...और उसके ऊपर वह सफ़ेद और स्वच्छ इमारत, अँधेरी रातमें अपने प्रेमीसे मिलनेके लिए जानेवाली प्रेमिकाके फहराते हुए आँचलकी तरह दिखाई पड़ रही है...यह वही इमारत है, जहाँ नवाब वाजिदअली शाह अपनी नवीनतम बेगमके नाज़ बटोरनेके लिए आया करता था...हमें अनुभव होता है कि आज यही इमारत उत्सुक नेत्रोंसे हमारी ओर ताकती हुई हमारी प्रतीक्षामें निश्चल खड़ी है—मानो किसी विस्तृत और छायादार बँगलेमें सफ़ेद

भरख स्कर्ट पहने खड़ी कोई अँगरेज़ी बाला अपने प्रेमीको संकेतोंसे बुला रही हो..."

लड़कीने पेंसिल हाथसे रख दी और घूमकर तने हुए स्वरमें बोली, "क्या तुम्हें निश्चय है कि यह सब सर हैवलॉक कह रहे हैं ?"

बलवन्त सिंहने धाराप्रवाह स्वरमें कहा, "क्यों, क्या इसमें उन्होंने कोई खराब बात कह दी है ?...लिखो जी, नहीं तो मैं सब भूल जाऊँगा...!"

उसी समय एक सनसनाती हुई गोली बेली गार्डकी ओरसे आई और बलवन्त सिंहके सिरके ऊपरसे निकल गई। उसका सिर थोड़ा नीचेकी ओर झुका और वह बोला, "शूश्‌श्‌...लिखो...सिपाहीकी कल्पना दो ही चीज़ोंमें दौड़ती है : युद्ध या कामिनी...समझी ? अब लिखो...सर हैवलॉक कहते हैं...हाँ...कहते हैं कि हम अपनी राइफ़लोंसे इस तरह चिपटे हुए खाइयोंमें लेटे हैं, जैसे अमावस्याकी रातमें थेम्स नदीके किनारे कोई मनचला सिपाही, अपनी ग्रामीण प्रेयसीके काले व चमकीले केशोंकी कल्पना करता हुआ, यूनाइमसकी झाड़ीको छातीसे चिपटाये ज़मीन सूँघ रहा हो..."

डाक्टर फ्रेयरकी बेटी, मिस एलिसने फिर पेंसिल रख दी और बोली, "मिस्टर सिंह, मुझे इसमें बहुत अधिक सन्देह है कि यह वाक्य भी सर हैवलॉकका बोला हुआ है, जो आपने अभी-अभी कहा है।"

"उँह, !" बलवन्त सिंहने ज़मीनपर पैर पटकते हुए कहा, "सर लॉरेंसने ठीक कहा था कि लड़कियोंके बसकी कोई भी सैनिक-सेवा नहीं है। आपको जो बोला जा रहा है उसका अर्थ समझनेकी क्या ज़रूरत है ? समझमें नहीं आता कि आपको सर हैवलॉकके इन उद्गारोंसे क्या आपत्ति है !"

मिस एलिस क्रोधसे नथुने फुलाते हुए बोली, "ऐसा मालूम होता है कि आप मोर्चेकी रिपोर्ट नहीं दे रहे हैं, बल्कि कोई प्रेम-कथा पढ़ रहे हैं।"

बलवन्त सिंह लीवरसे हाथ हटाता हुआ बोला, "इससे मालूम होता है कि आपको प्रेम-कथाओंसे भी कोई आपत्ति है ?"

मिस एलिसने प्रश्नको टालते हुए कहा, "ड्यूटीपर आपको अपने उस मित्रकी तरह मुस्तैद रहना चाहिए, जो दिनके समय यहाँपर काम करता है, क्या नाम है उसका...टीकाराम।"

बलवन्त सिंह तुरन्त तत्पर होकर बोला, "मैं अभी आपका यह सन्देश जनरल हैवलॉकको पहुँचाता हूँ..." और मिस एलिसने घबराकर देखा कि वह नियमानुसार लीवरोंको दबाने लगा और यन्त्रके हाथ एक-एक क्षणके लिए भिन्न-भिन्न स्थितिमें ठहरकर कुछ सूचना देने लगे।

मिस एलिसने झपटकर उस हाथको पकड़ लिया, जो लीवर दबा रहा था और बोली, "हाँ, हाँ, यह क्या करते हो! सर हैवलॉक मेरे बारेमें क्या सोचेंगे!"

"क्यों, वही सोचेंगे, जो मैं सोचता हूँ, जो नियम एक सिपाहीके लिए है, वही दूसरेके लिए है..."

सहसा उसी समय ज़मीन थर्रा गई। एक भारी धमाका हुआ और बलवन्त सिंहने देखा कि बाग़की ओर वाली दीवारका मलबा हवामें उछलकर उड़ा। उसके बीच-बीचमें धुएँका गुब्बार तेज़ हवाके साथ इधर-उधर छितराने लगा...और फिर दूसरा धमाका...तीसरा...

मिस एलिस ज़ीनेकी तरफ़ दौड़ी। पीछे-पीछे बलवन्त सिंह लपका लेकिन ज़ीनेके पास पहुँचकर वह रुक गया। उसे अपनी ड्यूटीपर ही जमे रहना चाहिए, चाहे कौवेका घोंसला ही तोपके गोलेसे क्यों न उड़ जाये।

रेज़ीडेंसीके भीतर उसने झाँककर देखा। धुँआँ भीतर तक फैल गया था। पुरुषोंकी काली-काली छायाएँ तेज़ीसे इधर-उधर दौड़ती हुई दिखाई दे रही थीं। बंगाली तोपखानेके सिपाही उस दरारकी ओर दौड़ते दिखाई दे रहे थे, जो गोलोंके प्रहारसे टूटकर गिर पड़ी थी और जिसकी राह धुँआँ भीतरकी ओर उबल-उबलकर आ रहा था। रेज़ीडेंसीमें जहाँ-तहाँ

छोटे-छोटे लैंप-पोस्ट लगे हुए थे और उनमेंसे अधिकांश इस धमाकेके कारण बुझ गये थे।

बलवन्त सिंहने दूरबीनमें आँख गड़ाकर देखा। क्रांतिकारियोंके कुछ सैनिक बेली गार्डके दरवाज़ेमेंसे भागते हुए दिखाई पड़ रहे थे। अरे, तो क्या रेज़ीडेंसीमें भी विद्रोह हो गया है! कौन हैं ये लोग? क्यों भागे जा रहे हैं? वह फिर भागकर ज़ीनेके ऊपर पहुँचा। उसी समय उसे ऐसा लगा मानो कोई तेज़ीके साथ ज़ीनेपर चढ़ता चला आ रहा है।

जब आगन्तुक बुर्जीके फ़र्शपर हाथ टेककर, उछलकर ऊपर आ गया, तो बलवन्त सिंहने उसकी ओर आश्चर्यसे देखकर कहा, "कौन, टीकाराम?"

"हाँ," टीकारामने कहा। उसका मुँह धूल और गुब्बारसे भरा हुआ था। पलकोंके बाल भी धूलमें अट गये थे। बदनके कपड़े जहाँ-तहाँसे फटे हुए थे। बायें कन्धेपर एक रस्सा था, जो बीसियों घेरोंमें मुड़ा हुआ था। हाथोंमें राइफ़ल दिखाई दे रही थी। आखें भावनाकी तीव्रताके कारण चमक रही थीं। लालटेनके मद्धिम प्रकाशमें वह भूत-सा दिखाई दे रहा था।

"क्या बात है?" बलवन्त सिंहने पूछा।

टीकारामने आँखोंको और भी चमकाकर कहा, "बस, अब मामला तन्तपर आ गया है। फिरंगियोंका सफ़ाया समझो। अब यह सफ़ेद प्लेग हमारी धरतीपर से उठ जायेगा। हमें इनके साथ नहीं मरना है। मरेंगे, तो अपने उन साथियोंके साथ मरेंगे, जिन्होंने आज़ादीका झंडा उठा रखा है। चलो, देर न करो......!"

क्षण भरमें बलवन्त सिंह सारा मामला समझ गया। हतबुद्धि-सा वह बोला, "क्या अपने मालिकोंको दग़ा दे रहे हो!"

टीकारामने तेज़ स्वरमें कहा, "क्या दकियानूसी बातें करते हो! अरे, ये कभी अपने हुए हैं, जो आज होंगे? जो तनख्वाह तुम्हें मिलती है वह क्या इनके देशसे आती है? ये हम लोगोंको ही लूटते हैं,

और जब हम भूखों मरने लगते हैं, तो हमारे बच्चोंको फ़ौजमें भरती करके हमारे मालिक बन जाते हैं। वाह! बहुत बढ़िया मिल्कियत है! हमारा धर्म, ईमान, सब इन लोगोंने नष्ट कर रखा है। यह नई राइफ़ल देखी है......एनफ़ील्ड है इसका नाम। इसके कारतूसोंमें गाय और सुअरकी चरबी..."

"झूठ है!" बलवन्त सिंहने चिल्लाकर कहा, "यह देशद्रोहियोंकी मनगढ़न्त है..."

"तुम्हारा दिमाग़ ख़राब हो गया है।" टीकारामने आगे बढ़ते हुए कहा, "देशभगतोंको देशद्रोही बताते हो! फिरंगियोंका रंग चढ़ गया है। ठीक है, वह मिसिया रात भर पढ़ाती होगी...शास्त्रोंमें ठीक कहा है: कामके वशीभूत होकर मनुष्य सीधेको उल्टा और उल्टेको सीधा समझने लगता है...अरे, वह तो चकमक है चकमक! किसके फेरमें पड़े हो! वह तो किसी फिरंगीको अपना भरतार बनायेगी, और तुम खड़े टापा करोगे। 'दुविधामें दोनों गये, माया मिली न राम। धिक्कार है तुम पर...अरे, सारा देश उबल रहा है और तुम यहाँ ठंढा पानी पी रहे हो!"

"यह बकवास बन्द करो।" बलवन्त सिंहने तीव्र स्वरमें कहा। "दोस्तीके नाते इतना सह गया। अब कुछ कहा, तो अच्छा नहीं होगा।"

टीकाराम मस्तूलकी ओर बढ़ा। उसने कहा, "क्या मालूम था कि तुम्हारे दिलमें देशका ज़रा भी दर्द नहीं है। रेज़ीडेंसीसे सैकड़ों बहादुर निकलकर चले गये हैं। पच्चीसवीं पलटनके कप्तान एंडरसन अपनी टुकड़ी लेकर दरारपर पहुँच गये, नहीं तो सब निकल जाते। मैं यहाँसे उतरकर जा रहा हूँ। सोचा था कि..."

"मैं तुम्हें नहीं जाने दूँगा," बलवन्त सिंहने उसका रास्ता रोकते हुए कहा। "सिपाहीके लिए दग़ा देना सबसे बड़ा पाप है।"

पलभरमें टीकारामने अपनी राइफ़ल सीधी कर ली और उसकी नाल बलवन्त सिंहकी छातीसे अड़ा दी। तमककर व्यंग्यपूर्ण स्वरमें वह बोला,

"ओह, ग़ुलामी इतनी गहरी पैठ गई है! उस मिसियाकी बातें याद आती होंगी! हमारी क़वायदमें देशद्रोहियोंकी सज़ा मौत होती है। चुपचाप अलग हट जाओ, नहीं तो मुझे आज एक मित्रके लहूसे हाथ रंगने पड़ेंगे।"

"बहुत पुण्यका काम करोगे!" बलवन्त सिंहने तड़पकर कहा, "जब धरती थर्राती है, तभी तुम्हारे जैसे लोगोंके क़दम डगमगाने लगते हैं। तुम्हें क्या मालूम भूचाल क्या होता है। विद्रोहका नाम क्रान्ति नहीं है। बलपूर्वक पुरानी व्यवस्थाको नई व्यवस्थामें बदल देनेका नाम क्रान्ति है। पुरानी व्यवस्थाके स्थानपर उससे भी पुरानी व्यवस्था लानेका स्वप्न देखना असफलताका पाट पैरोंमें बाँधकर खाईंको कूदनेके समान है। तुम लोगोंमें से किसीको भी नहीं मालूम कि इस उखड़-पुखड़के बाद क्या आना है? कहाँ है वह देश, जिसकी भक्तिके गीत गाते हो? क्या ये नवाब देशभक्त हैं जो ग़रीबोंकी बहू-बेटियोंको सरे-आम हरण करके अपने अभेद्य महलोंमें ले आते हैं? क्या ये महाजन देशभक्त हैं, जो रात-दिन किसी-न-किसी भेड़को मूँड़नेकी टोहमें रहते हैं? क्या ये किसान और मज़दूर देशभक्त हो सकते हैं, जिन्हें अपनी मेहनतके फलका आधा-पौना भाग सदा अपने देशभक्त मालिकोंकी भेंट चढ़ाना पड़ता रहा है, और आगे भी पड़ता रहेगा? यह विचित्र क्रान्ति है, जिसके बाद भेड़ियोंको शिकार भी मिलेंगे और मेमनोंके प्राण भी बचे रहेंगे!"

"क्यों नहीं बचे रहेंगे?" टीकारामने धमाकोंकी ओर कान न देकर ऊँचे स्वरमें कहा, "सम्राट् बहादुर शाहने कह दिया है कि अब कोई ज़ोर-ज़ुल्म नहीं होगा...किसी पर अत्याचार नहीं किया जायेगा..." इसपर बलवन्त सिंह मुँह बिचकाकर हँस दिया। चिढ़कर टीकारामने कहा, "मन में वासना है और देशभक्तोंपर लाञ्छन लगाते हो!"

उसने कन्धेपर से रस्सा उतारा और उसका एक सिरा मस्तूलकी जड़में बाँध दिया। उसका साथी देखता रहा। उसने एक हाथमें राइफ़ल थामी

और नाल सीधी करके बलवन्त सिंहको घूरकर कुछ पल देखता रहा, फिर दूसरेसे रस्सेको बुर्जीके बाहरकी ओर खोल दिया। अपने मित्रकी ओर मुँह करके वह बोला, "तुम उन लोगोंमेंसे हो, जो बालोंकी एक जूँ मारनेसे पहले सत्तर जूँओंको मारना चाहते हैं। अगर तुम मेरे मित्र न होते, गोली मार देता..." उसने आगे बढ़कर मस्तूलके बराबरमें रखी बलवन्त सिंहकी राइफ़ल उठा ली और उसमेंसे कारतूस निकाल लिये, और उसे उसके देखते-ही-देखते बुर्जीके बाहर फेंक दी। फिर वह रस्सेकी ओर चला।

बलवन्त सिंह उसे रोकनेके लिए आगे बढ़ा। टीकाराम घूमकर खड़ा हो गया। आँखोंसे चिनगारियाँ छोड़ते हुए वह बोला, "अभी मैं निश्चय नहीं कर पाया हूँ कि मित्रता बड़ी होती है या देशभक्ति। इसलिए ..." उसने अपनी राइफ़लको नलीकी ओरसे पकड़कर एक ज़ोरका आघात बलवन्त सिंहके मस्तक पर किया। उसकी आँखोंके आगे अन्धेरा-सा छाया और वह एक अस्पष्ट-सी चीख़के बाद फ़र्श पर गिर पड़ा।

टीकाराम एक क्षण तक स्तम्भित-सा खड़ा रहा। फिर आगे बढ़कर उसने अपने मित्रके सिरके ज़ख्मको देखा, और तब एक ही छलाङ्गमें वह रस्सेकी उस गाँठके पास आ गया, जो मस्तूलसे बँधी हुई थी। ज़ीनेकी ओरसे किसीके तेज़ीके साथ ऊपर आनेकी आहट आ रही थी। पलक मारते ही वह रस्सेके सहारे लटककर नीचेके अन्धकारमें लोप हो गया।

ज़ीनेसे मिस एलिस ऊपर आई। "मिस्टर सिंह...हमने स्थितिपर अधिकार कर लिया है...मिस्टर सिंह, आप कहाँ हैं?"

ऊपर आकर मिस एलिसने चारों ओर देखा, मगर मिस्टर सिंहका कहीं पता न था। फिर उसकी निगाह फ़र्श पर गई और अनजाने ही उसका हाथ लालटेनपर पहुँचा। उसे उठाकर उसने बलवन्त सिंहके अचेत शरीरको देखा, जो इस समय कुलमुलाकर अपनी चेतना प्रकट कर रहा था। एक चीख़ मिस एलिसके मुँहसे निकली और वह घुटनोंके बल फ़र्शपर बैठकर उसका मुँह देखने लगी। फिर उसकी नाकको हाथ लगाया,

नब्ज देखी। सब ठीक था। किन्तु बलवन्त सिंहके चेहरेपर मुरदनी छा रही थी। एलिसके बायें हाथमें कोई चीज़ थी, जिसे उसने फ़र्शपर रख दिया। एक फ़ीतेके सहारे पानीकी जो बोतल उसकी बगलमें लटकी हुई थी उससे उसने थोड़ा-सा पानी चुल्लूमें लेकर बलवन्त सिंहके मुँह पर छिड़का...।

जब बलवन्त सिंहकी आँखें खुलीं, तो उसने अनुभव किया कि उसका सिर मिस एलिसकी गोदमें रखा था और वह रूमालसे हवा कर रही थी। तोपोंकी गड़गड़ाहट और गोलियोंकी दनदनाहट अब रुक गई थी। कुछ देरके अन्तरसे जब-तब कोई आवाज़ आ जाती थी।

बलवन्त सिंहको आँखें खोलते देखकर मिस एलिसने पूछा, "क्या मामला है? आपको यह क्या हो गया है? अब क्या हाल है?"

बलवन्त सिंह सहसा सिर उठाकर इधर-उधर देखा। फिर कुछ समझकर उसने अपना सिर दोबारा मिस एलिसकी गोदीमें रख लिया। क्षीण स्वरमें उसके मुँहसे निकला, "कुछ नहीं, मिस एलिस। मालूम होता है किसी पत्थरका छिटका हुआ टुकड़ा मेरे सिरपर आ लगा था। अब मैं ठीक हूँ" और उसने उठनेकी चेष्टा की।

"नहीं, नहीं, आप लेटे रहिये," मिस एलिसने अनुरोध करते हुए कहा। "देखिये तो आपके चेहरेपर कितना पीलापन छा गया है! क्या मैं पापाको बुलाकर लाऊँ?"

"नहीं, कोई आवश्यकता नहीं," वह बोला। "मरहमपट्टीकी ज़रूरत नहीं पड़ेगी। पानीका भींगा कपड़ा बाँधनेसे काम चल जायेगा।" और उसने अपनी जेबसे रूमाल निकालकर दिया।

मिस एलिसने अपना रूमाल भी निकाल रखा था, लेकिन वह रूमाल उसने ले लिया। इसके बाद उसने पानीमें भिगोकर रूमालको उसके सिरपरा बाँध दिया। फिर कहा, "आप नाश्ता कर लीजिए। कुछ पेटमें पड़ेगा तो जान आयेगी।"

"धन्यवाद !" बलवन्त सिंहने कहा । मिस एलिसने वह टिफ़न उसके सामने रख दिया, जो वह साथ लेकर आई थी ।

एक बिस्कुट खाते हुए बलवन्त सिंहने पानीका एक घूँट भरा और बोला, "मिस एलिस, आप अपनी ड्यूटी छोड़कर फ़ालतू काम न किया कीजिये ।"

"मैंने फ़ालतू काम क्या किया है ?" मिस एलिसने आश्चर्यसे चौंककर पूछा ।

"यही कि मेरे लिए नाश्ता ले आना, मेरा सिर प्यारसे गोदीमें रख लेना...मेरे सिरपर..." उसने रूमालका बचा हुआ भाग आगेको करके देखते हुए कहा..."अरे, यह तो रूमाल भी आपका ही है ! ठीक, ये सब फ़ालतू काम हैं । आप अपनी ड्यूटीपर अपने पापाकी तरह मुस्तैद रहा कीजिये ।"

मिस एलिसने अपना निचला होंठ भींचा । फिर बोली, "कर्त्तव्यके अर्थ तो बहुत विस्तृत हैं, मिस्टर सिंह ! यह आपको किसने बता दिया कि ये सब काम मेरी ड्यूटीमें नहीं हैं ?"

बलवन्त सिंहने दूसरा बिस्कुट कुतरते हुए कहा, "तब तो ठीक है । मालूम होता है कि प्रेम करना भी मनुष्यकी ड्यूटी है । बिना यह कर्त्तव्य पालन किये वह भगवान्‌की राजसभामें उत्तरदायी होता है—क्यों मिस एलिस ?"

"आप बहुत हँसोड़ हैं," मिस एलिसने पहली बार लज्जित होते हुए कहा, "मिस्टर सिंह, मैं अब आपसे बातें नहीं करूँगी ।"

"यह ठीक है," बलवन्त सिंह होंठों-ही-होंठोंमें मुसकराकर बोला । मेरा भी यही ख्याल था कि आपको अपनी ड्यूटीके सिवा फ़ालतू काम कोई नहीं करना चाहिए । चाहे वह काम बातें करना ही क्यों न हो ।"

"जब आप जैसे बातूनी मित्र हो जाते हैं, तो बातें भी करनी ही पड़ती हैं," मिस एलिसने कहा ।

बलवन्त सिंहने एक बिस्कुट और खाया। फिर टिफ़न-बॉक्सको बन्द करता हुआ बोला, "मिस एलिस, क्या आप बता सकती हैं मित्रता क्या होती है ?"

मिस एलिस पहले तो इस अप्रत्याशित प्रश्नसे चौंकी, फिर हँस पड़ी। बोली, "मिस्टर सिंह, आप बहुत चतुर हैं। यह प्रश्न पूछकर आप मुझे दृढ़तासे बाँधना चाहते हैं। आप चाहते हैं कि मैं मित्रताकी कोई आदर्श परिभाषा दूँ और स्वयं ही उससे बँध जाऊँ, बहुत अच्छी बात है—मित्रता उस पारस्परिक सम्बन्धका नाम है, जो दृढ़से दृढ़ प्रहार होने पर भी इस्पातकी भाँति अखण्ड रहता है, और ज़रा-सी ठेस लगनेपर शीशेकी तरह टूट जाता है—क्या यह पर्याप्त है ?"

बलवन्त सिंहने दूरबीनके शीशेमेंसे झाँककर अंधकारके पार कुछ देखनेकी चेष्टा की और उसमें असफल होकर मिस एलिसकी ओर स्थिर दृष्टिसे देखता हुआ बोला, "आप अपने प्रति बहुत चेतन हैं, मिस एलिस, और आपकी परिभाषा बहुत नपी-तुली है। उसके भीतर एक चेतावनी छिपी हुई है। 'ज़रा-सी ठेस लगनेपर शीशेकी तरह टूट जाता है' किन्तु टूट जानेपर उस दरारके किनारोंकी ओर आपका ध्यान नहीं गया, जो एक दूसरेकी ओर हसरतभरी निगाहोंसे देखते हुए कहते रहते हैं : 'हमारे कटे-फटे अवयव एक दूसरेकी कमियोंको कितनी निकटतासे पूरा करते थे !"

भावोंकी उत्तेजनासे त्रस्त मिस एलिस खड़ी हो गई। सीमाफ़ोरके अफ़सरके निकट आकर उसने लालटेनके मद्धिम प्रकाशमें उसकी चमकती हुई आँखोंको देखा—फिर सहसा ही दोनोंके हृदय एक दूसरेसे मिल गये। गोलोंकी दहाड़ोंमें उन्होंने एक दूसरेकी धड़कनोंको कितनी ही देर तक अनुभव किया।

भावावेशमें बलवन्त सिंहने कहा, "कल हमारे देशका सबसे बड़ा त्योहार है। कल हमारे देशके घर-घरमें दीपक जलेंगे। जिस दिनसे इन दीपकोंने जलना आरम्भ किया उस दिनसे नित्य उनमें एक नवीन ज्योतिका

उदय होता है—मिस एलिस, इस पर्वके स्वागतमें हमारे हृदयोंने भी दो दीपक जलाये हैं। कहो कि इन दीपकोंका प्रकाश भी कभी धूमिल नहीं होगा।"

धीमे और हर्षित स्वरमें मिस एलिसने कहा, "नहीं, यह ज्योति कभी नहीं बुझेगी।"

रात भर धड़ाके होते रहे, गोलियाँ चलती रहीं, दीपक जलते और बुझते रहे, मगर कौवेका घोंसला अपने हृदयमें दो दीपकोंको लिये सुरक्षित बना रहा, और सुबहके समय बालरविने प्रसन्नतासे उसके मस्तकको चूमा। इस बीच सीमाफ़ोरका काम नहीं के बराबर चला। जनरल हैवलॉक मौक़ेकी इन्तज़ारमें थे कि आलमबाग़में छिपे हुए क्रान्तिकारियोंको सहसा ही आक्रमण करके चकित कर दिया जाये। मगर वह अवसर उस दिन हाथ नहीं लगा। अगले दिन तीसरे पहर उन्होंने सीमाफ़ोरपर सन्देश भेजा :

"नदीके पार बादशाह बाग़में विद्रोही बड़ी संख्यामें जमा हो रहे हैं..."

वाक्य एक-एक शब्द करके बलवन्त सिंहके मुँहसे निकला, और मिस एलिसने शीघ्रतासे पैडपर पेंसिल चलाई। सन्देश आगे चला :

"रैडन बैटरीकी तोपोंका मुँह लोहेके पुल की ओर रहे...विद्रोहियोंको लोहेके पुलपर अधिकार करनेसे रोको......विराम।"

"सन्देह मिल गया...विराम।" इधरसे बलवन्त सिंहने उत्तर दिया।

"मेजर मारटिन गब्बिन्सके निवास-स्थानकी ओर मेजर ऐशटनको, उनके दस्तेके साथ भेजो...समाचार मिला है कि विद्रोही उस ओरसे भी भीषण हमला करनेके प्रयत्न कर रहे हैं...विराम।"

"सन्देश मिल गया...विराम।"

"कोई समाचार ?...विराम।"

"हाँ, इधरसे उत्तर गया। "सातवीं बंगाल सेनाके कर्नल रेडक्लिफ़ युद्धमें काम आये...विराम।"

दूसरी ओरके सीमाफ़ोरपर शोकका चिह्न बना और बलवन्त सिंहने मुँहसे कहा, "लिखो : सर हैवलॉक शोक प्रकट करते हैं कि जिस बहादुरको कभी किसी नारीका स्नेह प्राप्त नहीं हुआ वह स्नेहके अभावमें ही आखिर मर गया...।"

मिस एलिसने हँसकर पेंसिलसे केवल इतना लिखा : 'शोक प्रकट करते हैं। लेकिन बलवन्त सिंहका उत्साह अब बढ़ने लगा था : "हाँ, लिखा?... अब आगे लिखो, पूछते हैं कि डाक्टर फ्रेयरकी वह प्यारी-प्यारी बच्ची तो सकुशल है या नहीं?...क्या जवाब दूँ?"

मिस एलिसने पेंसिल पेटीमें लगाकर उठते हुए कहा, "कह दो मर गई है।"

बलवन्त सिंहने सीमाफ़ोरपर सन्देश भेजा : रेज़ीडेंसीके वीरगति प्राप्त वीरोंकी संख्या पिछले चौबीस घन्टोंमें छियासी।"

शोकका चिह्न दोबारा बना और बलवन्त सिंहने मुँहसे कहा, "लिखो : कहते हैं, मिस एलिसकी इस असमयमें ही मृत्यु हो जानेसे सर हैवलॉकको बहुत रंज पहुँचा। कहते हैं कितनी प्यारी लड़की थी! 'मुझे भूलना मत'के फूलकी तरह उसका चेहरा हमारी आँखोंके सामने घूम रहा है..."

"कहाँ घूम रहा है?" मिस एलिसने बलवन्त सिंहकी पीठके पीछेसे देखते हुए कहा। "वहाँ तो क्रॉसका चिह्न बना हुआ है।"

उसकी आँखोंके आगे एक हाथकी दूरबीन लगी हुई थी।

बलवन्त सिंह उसकी बातका उत्तर देनेको ही था कि उसने देखा कि दूसरी ओरके यन्त्रने क्रॉसका चिह्न समाप्त किया। लीवर दबाते हुए उसने अगला समाचार दिया : "एक सौ सत्तावन सैनिक रेज़ीडेंसी छोड़कर शत्रुओंमें जा मिले...विराम।"

एक क्षण तक दूसरी ओरका यन्त्र निश्चल रहा। इसके बाद उसपर सङ्केत बनने लगे और बलवन्त सिंह बोलने लगा : "लिखो : शेष... हिन्दुस्तानी...सिपाहियों...को...कानपुरी तोपखानेके आगे वाले...मोर्चे

पर रखा जाये...अगर दग़ा...करें...तो बिना हिचक...उन्हें...तोपसे...उड़ा दिया जाये...विराम।"

मिस एलिसने वहीं खड़े-खड़े यह आर्डर लिखा। उधरके यन्त्रने पूर्ण विरामका सङ्केत दिया और बातें समाप्त हो गईं। लेकिन जब बलवन्त सिंहका मुँह मिस एलिसकी ओर हुआ, तो वह उसे देखकर चौंक गई। उसके मुँह पर हवाइयाँ उड़ रही थीं।

चकित होकर मिस एलिसने पूछा, "क्यों, कुछ दुःखद समाचार है क्या?"

बलवन्त सिंहने फटी आँखोंसे मिस एलिसके चेहरेकी तरफ़ इस तरह देखा, जैसे उसे उसका चेहरा दिखाई न दे रहा हो। फिर उसके मुँहसे निकला: "मिस एलिस, कानपुरी तोपख़ानेसे दो सौ फ़ीटकी दूरीपर विद्रोहियोंकी तोपें लगी हुई हैं! इन दोनों तोपख़ानोंके बीचमें आगका समुद्र बहता है। क्या सर हैवलॉक थोड़ेसे हिन्दुस्तानी सिपाहियोंके दग़ा दे जानेपर बाक़ी सब देशी सिपाहियोंको उस आगके समुद्रमें धक्का देकर मार डालना चाहते हैं!"

यह सुनकर मिस एलिस कुछ विचलित होते हुए बोली, "सिपाहीका काम योजनाओंपर विचार करना नहीं होता। हो सकता है सर हैवलॉकने इसमें कोई अच्छाई समझी हो...ख़ैर, अब हमें शीघ्र ही ये सब आर्डर करनल औट्रमके पास पहुँचा देने चाहिए। यह निश्चय है कि वह तुम्हें उन लोगोंके साथ तोपख़ानोंके बीचमें नहीं रख सकेंगे। उन्होंने ऐसा किया...तो..." मिस एलिसने सीधी दृष्टिसे बलवन्त सिंहकी ओर देखकर स्वरको धीमा करते हुए कहा, "मैं अपनी जान खो दूँगी।"

बलवन्त सिंह धीरे-धीरे पलकें झपकाता हुआ मिस एलिसको वे सन्देश लिये ज़ीनेसे उतरते देखता रहा। गोलाबारी फिर आरम्भ हो गई थी और एक दो भूली-भटकी गोली कौवेके घोंसले तक पहुँचकर उसका एकाध तिनका ले उड़ती थी। एक खम्भेसे पीठ लगाकर वह बैठ गया।

गोलोंके धड़ाकोंके स्वर उसके कानोंमें आ-आकर एक चोट-सी दे जाते जो सीधी उसके हृदयमें उतरती चली जा रही थी। उन गोलोंमेंसे आगकी भीषण चिनगारियाँ निकलकर मानो एक दरियामें बदलती जा रही थीं और उस दरियामें सैकड़ों हज़ारों भारतीय सैनिक डूबते-उतराते विलीन होते जा रहे थे।

प्रयत्न करके बलवन्त सिंहने सिरको एक झटका दिया और उन कल्पनाओंको दूर हटानेकी चेष्टा की, जो किसी सैनिकको निर्बल बनाती हैं। किन्तु बदलते हुए विचारोंने टीकारामकी सूरत सामने लाकर खड़ी कर दी। वह क्रोधमें भरकर चिल्ला रहा था : "अगर तुम मेरे मित्र न होते, तो मैं तुम्हें गोली मार देता...अभी मैं निश्चय नहीं कर पाया हूँ कि मित्रता बड़ी होती है या देशभक्ति...इसलिए...उसने अपनी राइफ़लकी नली उठाकर एक ज़ोरका आघात बलवन्त सिंहके मस्तकपर किया।

बलवन्त सिहका हाथ अनजाने ही अपने घावपर फिर रहा था। जहाँ अब एक गुम्मड़ निकल आया था। टीकारामकी मूर्ति लोप हो गई थी। आँखें मुँद गई थी और मिस एलिसकी भव्य प्रतिमा अंधकारके पटपर प्रकाशके पुञ्जकी भाँति उभर आई थी। मुसकराकर वह कह रही थी : "...मित्रता उस सम्बन्धका नाम है, जो दृढ़-से-दृढ़ प्रहार होने पर भी इस्पातकी भाँति अखंड रहता है, और ज़रा-सी ठेस लगनेपर शीशेकी तरह टूट जाता है..."

सहसा पीछेसे विकट प्रभंजन चलना आरम्भ होता है और टीकाराम सहसा ही दौड़ता हुआ आता है...एक झटकेके साथ रुककर वह मिस एलिसको देखता है...फिर बलवन्त सिंहको घूरकर कहता है : "...इस मिसियाकी बातें याद आती होंगी ?...हमारी क़वायदमें देशद्रोहियोंकी सज़ा मौत होती है...मनमें वासना छिपी है और देशभक्तोंपर लाञ्छन लगाते हो !...चुपचाप अलग हट जाओ, नहीं तो मुझे एक मित्रके लहूसे हाथ रंगने पड़ेंगे...',

किन्तु मिस एलिस पुकारकर कह रही है : "मिस्टर सिंह...!"

टीकाराम रोषसे उसकी ओर उँगलीका संकेत करके कहता है : "ठीक है। यह मिसिया रातभर पढ़ाती होगी...अरे, यह तो चकमक है चकमक ! यह तो किसी फिरंगीको अपना भरतार बनायेगी...धिक्कार है तुमपर !... सारा देश उबल रहा है और तुम यहाँ ठंढा पानी पी रहे हो !...जो तनख्वाह तुम्हें मिलती है वह क्या इनके देशसे आती है ?...ये हम लोगोंको ही लूटते हैं और जब हम भूखों मरने लगते हैं, तो हमारे बच्चोंको फ़ौजमें भरती करके हमारे मालिक बन जाते हैं...वाह ! क्या बढ़िया मिल्कियत है...।"

मिस एलिसने फिर विनम्र-वाणीमें पुकारा : मिस्टर सिंह !"

बलवन्त सिंहके मुँहपर पसीना आ रहा था। उसने आँखें खोलीं और देखा सामने मिस एलिस खड़ी थी, वह कह रही थी : "मिस्टर सिंह, क्या सपना देख रहे हो ? देखते नहीं संध्या हो गई है। सूरज छिप गया है। टिफ़न ले आई हूँ करनल औट्रमने कुछ सन्देश दिये हैं। इन्हें तुरन्त सर हैवलॉकको पहुँचाना है...पहले इन्हें पहुँचा दो, फिर खाना खायेंगे..."

तत्पर सैनिककी भाँति सावधान होकर बलवन्त सिंह उठकर खड़ा हो गया। अभी तक उसका माथा स्मृतियोंसे भन्ना रहा था। यन्त्रकी भाँति उसके हाथने आगे बढ़कर करनल जेम्स औट्रमके उस सन्देशको देखा। स्याही और कलमके अभावमें वह पेंसिलसे लिखा गया था :

"आज्ञानुसार मोर्चे बना दिये गये हैं। रास्ता साफ़ होते ही सूचना दीजिये...स्त्रियों तथा बच्चोंको यहाँसे निकालकर इलाहाबाद पहुँचाना ज़रूरी है...आजकी अन्धेरी रातका उपयोग किया जाये, तो कैसा ? आज इन लोगोंका कोई बड़ा त्योहार है...उनका ध्यान हमारी ओर नहीं रहेगा। बच निकलनेका अच्छा अवसर है। शीघ्र सूचित कीजिये। हिन्दुस्तानी सिपाहियोंके बारेमें जो आर्डर आपने दिया था वह पूरा करना बड़ा खतरेका

काम है...इस अवस्थामें वे लोग सीधी बातको भी उल्टी सोच सकते हैं... यदि आवश्यकता समझें, तो आर्डरको फिरसे दोहराइये...आजकी मृत्यु संख्या तिरेपन...औट्रम।"

एक दीर्घ निःश्वास बलवन्त सिंहके मुँहसे निकली। मिस एलिसने उसे लक्ष्य करके पूछा, "क्यों, क्या बात है?"

बलवन्त सिंहकी आँखें अलक्ष्य भावसे चमकीं। उसने कहा,, कुछ नहीं, मिस एलिस, सोचता हूँ कभी-कभी बड़े-बड़े युद्ध व्यक्तियोंके बीचकी खाइयोंको किस विचित्रतासे पाट देते हैं, जिस तरह कोई भारी तूफ़ान धरतीकी कुछ दरारोंको भर देता है, और कुछको खोल देता है!"

मिस एलिसने कहा, "मुझे रेज़ीडेंसीका वह फ्रांसीसी कमाण्डर डूप्रे याद आता है। वह मर गया, मगर अपनी याद छोड़ गया! उसकी जाति से हमारी जातिकी जन्मजात शत्रुता है। वह चाहता तो इस कष्टके समय आसानीसे हमारा साथ छोड़कर दुश्मनोंमें जा मिलता। मगर मैंने कभी कल्पना भी नहीं की थी कि फ्रांसीसियोंका नैतिक आचरण इतना ऊँचा होता है।"

मस्तूलकी ओर बढ़ते हुए बलवन्त सिंहने कहा, "हमारी दृष्टिमें उन्हीं लोगोंका आचरण ऊँचा होता है, जो हमारे स्वार्थके लिए अपनी बलि दे देते हैं, किन्तु जब दूसरोंके स्वार्थके लिए अपनी बलि देनेका सवाल हमारे सामने आता है, तो हमारी देशभक्ति और जातिप्रेम कितनी दयनीयतासे आड़े आ जाते हैं...!"

मिस एलिस हँसते हुए बोली, "तुम सचमुच दार्शनिकोंकी तरह बातें करते हो, मिस्टर सिंह। मगर संसारमें जितने दर्शन हैं उनमें मानवताका दर्शन सबसे ऊँचा है..."

बलवन्त सिंहने लीवरको हाथ लगाया और बोला, "हाँ, यदि उसका उपयोग केवल अपने ही स्वार्थके लिए न किया जाये...मिस एलिस,

इस्पात कितना मज़बूत होता है, शीशा कितना कोमल ! इन दोनोंके मेलसे मानवताका निर्माण होता है ।"

दूरबीनमें आँख लगाकर बलवन्त सिंहने एक बार उसे सारे लखनऊपर घुमाई और सहसा ही वह चौंक गया। मुँह फेर उसने मिस एलिससे कहा, "देखो, आज हमारा दीपकोंका त्योहार है। उसका सम्मान करनेके लिए हमारे पास दीपक नहीं है। ज़रा लालटेनकी बत्ती तेज़ कर दो।"

मिस एलिसने मुसकराकर अपने पास रखी लालटेनकी बत्ती बढ़ा दी। बलवन्त सिंहने सीमाफ़ोरके दोनों हाथोंपर लगी लालटेनोंको तेज़ किया और फिर एक बार हसरतसे लखनऊके उन वासियोंको देखा, जो नगरके अन्धकारपूर्ण वातावरणमें मानों अपने दीपकोंकी लौपर थिरक-थिरककर नाच रहे थे। कौन जाने इस दीपावलीमें कौन-सी ज्योति किस समय अपना तेल समाप्त हो जानेपर बुझ जाये !

बलवन्त सिंहने फिर दूरबीनमें झाँका। उन दीपकोंकी ज्योति उस प्रकार पंक्तिबद्ध नहीं थी, जिस तरह शांति कालमें हुआ करती थी। दीपक जहाँ-तहाँ जुगनुओंकी भाँति चमक रहे थे...लेकिन यह क्या ! उसने ध्यानसे देखा। कदम रसूलकी एक ऊँची मीनारपर लाल और हरी दो बत्तियाँ दिखाई पड़ रही थीं—ठीक सीमाफ़ोरके यन्त्रकी तरह। यह क्या है ?

सहसा वे बत्तियाँ कुछ हिलीं। बलवन्त सिंहकी अभ्यस्त आँखोंने बनते हुए संकेतोंको पढ़ा :

"मैं टीकाराम...मैं टीकाराम...विराम।"

कौवेके घोंसलेके लीवर हिले। "मैं बलवन्त सिंह...विराम।"

"ज्यादा चोट तो नहीं आई ?...विराम।"

"नहीं...विराम।"

"मारना नहीं चाहता था...विराम।"

"जानता हूँ...विराम।"

"काश, तुम हमारे होते...विराम।"

"तुम्हारा ही हूँ...विराम ।"

"सच... !" उधरसे संकेत आया । "विराम ।"

"हाँ...विराम..."

"सहायता दोगे ?...विराम ।"

"सुनो : इस त्योहारका लाभ उठाकर अंगरेज़ लोग रेज़ीडेंसीको इस अंधेरी रातमें छोड़कर भागना चाहते हैं...हाँ, लोहेके पुलपरसे जायेंगे । भीतरके हिन्दुस्तानी सिपाहियोंको तोपोंके गोलेसे उड़ा देना चाहते हैं... विराम ।"

"सच ! हे भगवान् !...विराम ।"

"सुनो : आलमबाग़पर कड़े दाँत हैं...रैडन तोपखानेका मुँह लोहेके पुलकी ओर है...सावधान !"

"हम करारा जवाब देंगे...विराम ।" टीकारामने संकेत दिया ।

"सुबह होनेसे पहले-पहले कानपुरी तोपखानेको उड़ा दो...इसीके आगे हिन्दुस्तानी सिपाहियोंको रखा जायेगा...विराम ।"

"निश्चिन्त रहो...विराम ।"

"मारटिन गब्बिन्सके निवास-स्थानकी ओर यहाँ मेजर एशटनकी सत्ताइसवीं पैदल पलटनका मोर्चा लगाया गया है...सावधान !"

"तुम्हारी यह सेवा इस क्रान्तिके इतिहासमें गौरवसे सदा याद की जायेगी...विराम ।" टीकाराम अपनेको उद्‌गार प्रकट करनेसे न रोक सका ।

"व्यर्थकी बातोंकी तरफ़ ध्यान मत दो...सुनो, अब रेज़ीडेंसीमें कुल यूरोपियनोंकी संख्या सात सौके लगभग रह गई है । हिन्दुस्तानी सिपाही दो सौ रह गये हैं...महीनेके तीसरे सप्ताह तक कानपुरकी ओरसे सर कोलिन कैम्पबेलके आनेकी सम्भावना..."

मगर यह सन्देह कभी पूरा नहीं हुआ, बलवन्त सिंहके पीछेसे नारी-कंठका तीव्र स्वर सुनाई दिया : "मिस्टर सिंह...!"

अफ़सर एकदम घूम गया। लालटेनके तीव्र प्रकाशमें उसने देखा मिस एलिसकी भौहें चढ़ी हुई हैं। उसके एक हाथमें छोटी दूरबीन है दूसरेमें राइफ़ल है, जिसकी नली सन्देशग्राहक अफ़सरकी छातीकी ओर तनी हुई है।

"यह सीमाफ़ोर विद्रोहियोंका था?" मिस एलिसने कड़े स्वरमें प्रश्न पूछा।

मस्तूलके सहारे पीठ लगाकर बलवन्त सिंह मुसकराया। उसने कहा, "तो तुम सब जान गई! अच्छा हुआ, आज सारी दार्शनिकताका अन्त हो जायेगा...केवल वही तथ्य शेष रह जायेगा, जो व्यवहारमें चल सकता है। मिस एलिस, आपने ठीक समझा, यह विद्रोहियोंका सीमाफ़ोर था। मैं टीकारामसे बातें कर रहा था।"

मिस एलिसने उसके हाथमें पकड़े हुए सन्देशके परचेको घूरकर देखा, "तुमने विश्वासघात किया है!"

"हाँ," बलवन्त सिंहने शान्तिसे उत्तर दिया, "उन लोगोंके प्रति, जो मानवताको दो जातियोंमें बाँटकर एकको तोपके मुँहसे उड़ा देना चाहते हैं...और उन लोगोंके विश्वासमें योग दिया है, जो नष्ट न होनेके लिए मुझसे अपने देशके प्रति विश्वासका मूल्य माँग रहे थे।"

"यही थी तुम्हारी मित्रता!" मिस एलिसने घृणासे होंठ सिकोड़कर और तीव्र स्वरमें पूछा।

बलवन्त सिंहने बड़ी दूरबीनके मुँहपर हाथ रखते हुए कहा, "मिस एलिस, मालूम होता है शीशेमें ठसक लग गई है...कितनी दयनीयताकी बात है कि कभी-कभी मानवताके दो श्रेष्ठ गुण साथ-साथ नहीं रह पाते! तुम्हारा कर्त्तव्य है कि तुम मुझे गोली मार दो।"

भावोंकी तीव्रताको सहन न कर पानेके कारण मिस एलिस थरथर काँपने लगी। उसकी आँखोंमें घृणा, प्रेम, मर्मान्तक पीड़ा और कर्त्तव्यकी

कठोरताके चिह्न मिश्रित होकर दृष्टिकी परिधिको छोटा करने लगे। उसका दायाँ हाथ राइफ़लके ऊपर कसता चला गया। अंग-प्रत्यंग धीरे-धीरे काँपना छोड़कर स्थिर होने लगे। छोटी दूरबीन हाथसे छूटकर फ़र्शपर आ रही...

"तुम्हें अभी साहस एकत्र करनेकी आवश्यकता है," बलवन्त सिंहने बड़ी दूरबीनकी ओर घूमते हुए कहा। "तब तक मैं अपने मित्रसे बिदाई ले लूँ।" उसने दूरबीनके शीशेमें झाँका और उधर सावधानीका सन्देश भेजा।"

टीकारामने पूछा : "क्या बात हुई ? देर क्यों लगी ?...विराम।"

"कुछ नहीं, मित्र, तुमने कहा था न कि मेरी सेवाएँ इस क्रान्तिके इतिहासमें सदा याद रहेंगी..."

"हाँ, और आज रातको हम तुम्हारे कौवेके घोंसलेको निश्चित रूपसे उड़ाने वाले थे। अब यह युद्धके अन्त तक अविचल खड़ा रहेगा, वचन देता हूँ...विराम।"

"धन्यवाद, मेरे मित्र, जहाँ तक हो कौवेके घोंसलेको बचाना क्योंकि इसमें मेरा दिल बसा रहेगा। अब मैं यहाँसे हटाया जा रहा हूँ..."

"ओह ! इतनी जल्दी...!"

राइफ़लका घोड़ा दबा और एक धाँयकी आवाज़ आकाशको भेदती हुई फैल गई। बलवन्त सिंहके हाथसे दूरबीन छूट गई और उसका शरीर तड़पकर भूमिपर लोट गया। उसने एक-दो करवटें लीं, और बोला, "मिस...एलिस...ओह ! इतना भी...नहीं सोचा...कि गोली सिपाही की...छातीमें मारते हैं ! ओह !"

मिस एलिसके हाथसे राइफ़ल छूट गई। वह तेज़ीसे आगे बढ़ी और लालटेनको एक कड़ी ठोकर लगी। उसकी बढ़ाई हुई ज्योति भभकने लगी और फ़र्शपर उसका तेल बिखरने लगा। मिस एलिस उस सन्देशवाहक सैनिक अफ़सरकी छातीपर औंधे मुँह गिरकर, फूट-फूटकर रो पड़ी।

बलवन्त सिंह कह रहा था : "कोई बात नहीं...अब यह ज्योति कभी नहीं बुझेगी...देखो, इस दरारके किनारे कितनी...कितनी सफ़ाईसे जुड़ गये हैं...! दरार ही मालूम नहीं होती...! मिस...एलिस...अब...अब... विदा...!" और लालटेनकी भभकती हुई ज्योति सदाके लिए बुझ गई ।

टीकारामने अपना वचन पूरा किया । वह कौवेका घोंसला आज भी लखनऊको ध्वस्त रेज़ीडेंसीके ऊपर सुरक्षित है । अंगरेज़ दीपावलीकी रातको रेज़ीडेंसी छोड़कर नहीं जा सके और कौवेके उस घोंसलेमें कई दिन और कई रातों तक मिस एलिसके आँसुओंकी ओस पड़ती रही ।

• लखनऊका खज़ाना

सन् १८५५ ई० के आखिरी दिनोंका लखनऊ—

अंधेरी रात थी। कैसर बाग़के हरमकी पीली इमारतोंकी लम्बी कतारें एक ऐसे वीरान कब्रिस्तानकी कब्रोंकी तरह दिखाई पड़ रही थीं, जिनमें सोई हुई तितलियोंके नरम दिल असफल अरमानोंके पैने छुरोंसे छिदे पड़े हों। चारों तरफ़ बाग़ था, शान्त और निस्पन्द। नन्हीं-नन्हीं पत्तियाँ आपसमें कुछ चर्चा करनेके लिए जब-तब कुछ खड़खड़ानेकी चेष्टा करतीं और उन खोजाओंको देखकर भयसे चुप हो जाती थीं, जो कन्धोंपर नंगी तलवारें रखे, इमारतोंमें जहाँ-तहाँ बेतरतीब घूमते हुए दिखाई दे रहे थे। बाग़की चारदीवारीके पार आकाशके वे झाँकते हुए तारे मात्र उस दृश्यके प्रत्यक्ष दर्शक थे, जो चारदीवारीके भीतर एक दूर अंधेरे कोनेमें उपस्थित था।

एक मूर्ति काले लबादेसे अपने सारे बदनको छिपाये, अंधेरेमें भूतकी तरह सीधी खड़ी थी। उससे कुछ हटकर, उसकी ओर मुँह किये एक पुरुष खड़ा था, जो किसी कारण हाँफ रहा था। इन दोनोंसे दूर, लेकिन इनकी ओरसे मुँह फेरे एक हब्शी खोज़ा, सफ़ेद चमकदार तलवार कंधे पर रखे, पेड़के तनेकी भाँति खड़ा था।

वह काली मूर्ति कुछ काँपी और धीमे, किन्तु तीव्र स्वरमें बोली, "तुमने आज फिर मुझे यहाँ बुलानेकी हरकत की! क्या तुम इतना नहीं जानते कि अगर बादशाह सलामतको मालूम हो गया, तो तुम्हारा और मेरा दोनोंका सिर धड़से अलग हो जायेगा?"

पुरुषने कुछ निकट आकर, स्वरको संयत करनेकी चेष्टा करते हुए कहा, "तुम्हारे तो नाज़ ही निराले हैं! बारह बरसमें तो सीनेपर भी मैल

आ जाता है, मगर तुमपर निखार आता जाता है। कसम खुदा की, अगर तुम्हारे सिरका फ़िकर न होता, तो सौ बार तुमपर यह जान कुरबान कर चुका होता। ज़ालिम, मैंने तीन साल तक फिर सब्र किया, मगर तूने तो एक दिन भी न बुलवाया। तुझसे जुदा हुए बारह साल हो गये, पर एक दिन भी तुझे मेरी याद न आई। इस महलकी रंगत ऐसी भाई कि सारा दिल और ईमान ही लुटा बैठी! खुदा तुझसे समझे!"

"क्यों, क्या बादशाहने मेरे साथ ब्याह नहीं किया? अगर उन्हें यह मालूम हो गया कि मैं एक मामूली राजगीरसे भेंट करनेके लिए महलसे बाहर निकली थी, तो क्या उनके नामको बट्टा नहीं लगेगा?" काले लबादेमें से तिरस्कारपूर्ण प्रश्न निकला।

"या खुदा, तू तो बेवफ़ाओंकी तरह बात करती है! इन पिछले तीन बरसोंमें तो तेरा लहजा ही बदल गया है! बादशाहने तुझे ज़बरदस्ती पकड़वा मँगाया, तेरे साथ मुताह रीतिसे ब्याह किया, और तू सचमुच बेगम ही बन गई! अगर निकाह कर लिया होता, तो तू खासमहल हो जाती!"

नवाब वाजिदअली शाहकी धर्मपत्नियोंकी संख्या सैकड़ेसे ऊपर थी। उप-पत्नियोंकी भी एक पूरी पलटन अलग थी। उनके धर्ममें केवल चार ही विवाह निकाह-पद्धतिसे वैध थे। बादशाहोंके लिए चूंकि धर्मने सदा ही विशेष रियायत बरती है, इसलिए चारसे अधिक विवाह करनेकी आवश्यकता आ पड़े, तो उसके लिए मुताह पद्धतिका आविष्कार काम आता था। वह स्त्री, जो काले लबादेमें अपने शरीरको छिपाये हुए थी, हज़रतमहलके नामसे विख्यात थी। उसके साथ बादशाहने इस दूसरी रीतिसे ब्याह किया था और उसे हज़रतमहलका खिताब बख्शा था। विवाहके दो बरस बाद हज़रतमहलने एक पुत्रको जन्म दिया था, जिसका नाम बिरजिसकदर रखा गया। वह लड़का भी अब दस बरसका हो चुका था।

किन्तु जिस रहस्यका उद्घाटन आज बाग़के इस अंधेरे कोनेमें हो रहा

था, उसे अब तक हज़रतमहल और उस पुरुषके अतिरिक्त केवल एक व्यक्ति जानता था। वह था वह ख़ोजा, जो कुछ दूरीपर पीठ फेरे खड़ा था, और जिसके बदनका एक भी पुट्ठा किसी बातसे अब तक नहीं हिला था। जो पुरुष हज़रतमहलसे बातें कर रहा था, वह पिछले बारह वर्षोंमें सात बार चारदीवारी टपकर भीतर आ चुका था। आठवीं बार उसने यह साहस किया था, और शायद यही उसकी अन्तिम बारी थी।

उसकी बात सुनकर हज़रतमहलका स्वर कुछ नरम हो गया। आँखें उस पुरुषकी ओर करके उसने कहा, "भावनाओंमें बसनेसे काम नहीं चलेगा। अब हम बड़े हो गये हैं। बिरजिसकदर अब बच्चा नहीं रहा है। वक्त आयेगा और वह बादशाह बनेगा। दुनिया उसके सामने ज़मीन चूमती आयेगी; और उसी दुनियाको जब यह मालूम होगा कि उसकी मां एक ईंट-पत्थर जोड़नेवालेके दिलकी धड़कनें सुनती है, तो लोग अपने बादशाहपर शक करेंगे, उस पर हँसेंगे—नहीं, नहीं! तुम ऐसा न होने दो, तुम ऐसा नहीं होने दोगे...!"

वह पुरुष मानो कुछ सहमकर पीछे हटा, "ओह, ओह! इन पीली-पीली ईंटोंने तो तुझपर जादू कर दिया है! तू तो सपने देखने लगी है! बादशाह सब बेगमोंको तलाक़ देकर तेरे बेटेको युवराज बनायेगा! वाह, वाह! चाँद ज़मीन चूमने उतरा और ज़मीन इतराकर सूरजपर चढ़ दौड़ी! अरी पगली, लखनऊके पानीमें अब वह मिठास कहाँ, जो सपनोंमें याद आये। इसमें गन्दगी पैदा हो गई है और उससे बुलबुले उठने लगे हैं। हंस कभी ऐसे बुलबुलोंको मोती नहीं समझते। महलसे बाहर नज़र उठाकर देख। बादशाह जिस फलको अपने पिलपिले मुँहसे मज़े-मज़े चुभला रहा है, फिरंगी उसपर दाँत गड़ाये बैठे हैं। जिस दिन वे अपने जबड़ोंको कसेंगे समूचा फल उनके मुँहमें होगा और बादशाह मुँह ताकता रह जायेगा। तेरा बेटा कभी बादशाह नहीं बनेगा।"

"चुप रहो," गर्वीले स्वरमें हज़रतमहल दाँत किचकिचाकर बोली।

"तुम्हें क्या मालूम बादशाहत किसे कहते हैं और वह कैसे प्राप्त की जाती है। ख़ुदाकी क़ुदरतको न झुठलाओ। वह जब चाहता है तिनकेको पहाड़ पर चढ़ा देता है, और जब क्रुद्ध होता है, तो ऊँचा खजूरका वृक्ष रेतमें लोटने लगता है। खुदा अगर मेहरबान न होता, तो वह क्यों मुझे बेगम बनाता, क्यों मुझे बेटा देता? दर्पणकी तरह वह दिन मेरे सामने साफ़-तौरसे दिखाई दे रहा है, जिस दिन मेरे बेटेके सिरपर ताज झूल रहा होगा और मुल्ला आमीनके काँपते हुए हाथ उसे मेरे बेटेके सिरपर कस रहे होंगे।" उसने आकाशकी ओर आँखें उठाकर अपने दोनों हाथ प्रसन्नताके मारे कलेजेसे लगाकर मुट्ठियाँ भीचीं। "चारों ओर सैनिकोंकी नङ्गी तलवारें बादशाहके सम्मानके लिए हवामें उठ रही होंगी। एक ऐसा शोर-शराबा बरपा होगा, जो आज तक कभी न देखा गया, न सुना गया।"

"ऐसा कभी नहीं होगा," पुरुषने तनिक तीव्र स्वरमें कहा। "फूल सिरपर चढ़ा, तो बाग़ किस कामका रहा? तेरा बेटा बादशाह बनेगा, तो हम लोगोंको क्या मिलेगा? मैं तो आज भी राज हूँ, कल भी राज रहूँगा। तू मेरी दुनिया उजाड़कर अपनी दुनियाको जन्नत बनाना चाहती है। तू प्रेमकी उन महान् घड़ियोंको भूल गई है, जिसमें अनेकों बार हमने स्वर्ग देखा है। तू मेरी है, उस आदमीकी नहीं, जो रोज़ अपनी दिल-बस्तगीके लिए एक फूल तोड़ता है, और सुबह होते-होते मसल देता है। अभी तूने वह सुबह नहीं देखी है। तेरे दिमाग़पर शराबकी खुमारी है। अपनी आँखें खोल, और उस दुनियामें लौट चल, जिसे तू पीछे छोड़ आई है। मैं तुझे अब भी बाँहोंमें उठाकर अवधसे बाहर ले जा सकता हूँ। मेरी हालतको देख, मुझे देख—मैंने बारह साल तक तेरी जुदाई सही है और किसी ग़ैर औरतकी तरफ़ आँख उठाकर भी नहीं देखा।"

"नहीं, नहीं," सहमकर पीछे हटते हुए हज़रतमहलने कहा। "तुम मुझे बहकाने आये हो, मेरा स्वर्ग उजाड़ने आये हो, मेरे बेटे पर मुसी-

बतोंका पहाड़ ढाने आये हो ! तुम यहाँसे चले जाओ और किसीसे..."

वह पुरुष और आगे बढ़ा । हज़रतमहलकी बातको बीचमें ही काटकर उसने कहा, "ओह ! मेरी आँखें खुल रही हैं । मैं भूल गया था कि तू एक मामूली औरत है । लेकिन याद रख, आज जो कहानी ये पेड़-पौधे जानते हैं, कलको उसकी गन्ध बाहरकी हवामें भी फैल सकती है । उस वक़्त तेरी वह खुमारी कहाँ जायेगी, जिसमें तू जागते हुए भी स्वप्न देखती है ?"

हज़रतमहलने काँप कर कहा, "तुम...तुम मुझे बदनाम करोगे !"

"बेवफ़ा !" उस पुरुषने संकीर्ण स्वरमें कहा, "दूसरेकी बेवफ़ाईकी बात सुनकर तुझे आश्चर्य क्यों होता है ? क्या खुदाने तेरा ही दिल पत्थरका बनाया था ? और पत्थर उसके पास नहीं रहे थे ?"

"बशीर !" हज़रतमहल चिल्लाई । किन्तु ख़ोजा इससे भी पहले स्थलपर आ उपस्थित हुआ था । पलक मारते उसकी तलवार उस पुरुषकी गरदन छूने लगी ।

"हाँ, हाँ, मारना नहीं !"हज़रतमहलने कहा । "इसके लिए दूसरा इन्तज़ाम करना होगा ।"

इतना कहकर वह काली मूर्ति वहाँसे गायब हो गई । ख़ोजाने उस व्यक्तिकी पीठकी ओरसे एक धक्का दिया और वह मुँहके बल ज़मीनपर गिर पड़ा । दूसरे ही क्षण तलवारकी भारी मूठ उसके सिरपर पड़ी और वह कराहकर सीधा हुआ । आकाशके हँसते हुए तारे शीघ्र ही उसकी दृष्टिसे ओझल हो गये ।

अगले दिन सुबहके समय दिलकुशाके पास एक पेड़के नीचे एक आदमी लोगोंको पड़ा मिला । उसका सिर उसके हाथोंमें छिपा हुआ था और वह मुँहके बल धरतीपर पसरा हुआ था । किसी दयावानने उसे सीधा किया, तो चौंककर दो कदम पीछे हट गया । उसके होंठोंपर दोनों ओर खूनके दो डोरे दिखाई पड़ रहे थे । दयालु व्यक्तिने पूछा, "दोस्त,

तुम्हें खूनकी कै हो रही है ! कहाँ है तुम्हारा घर ? कौन हो तुम ?"

आहत राजगीरने बोलनेकी चेष्टा की, जिससे उसका मुँह खुल गया, किन्तु बोल नहीं निकल सका। राहगीरने उसके मुँहमें झाँका और एक चीख उसके होंठोंसे निकल पड़ी। आहत व्यक्तिके मुँहमें ज़बानके स्थानपर खूनके लोथड़े दिखाई पड़ रहे थे। वह गूँगा था। उसकी जीभ कटी हुई थी।

× × ×

फ़रवरी ४ सन् १८५६ ईसवीको जनरल औट्रमकी तोपोंके सायेमें अंगरेज़ोंने अवधके मीठे फलपर अपने जबड़े कस लिये और एक ही कौरमें, बिना किसी विरोधके, अवध उनके गलेके नीचे उतर गया। नवाब वाजिदअलीशाहकी माँ, जनाब औलिया बेगम साहबाको ईस्ट इंडिया कम्पनीका परवाना नहाते समय मिला और उसे सुनकर वह नंगे पैरों, बिना दुपट्टा ओढ़े, चिल्लाते हुए महलके भीतर उस स्थान तक भागी चली गई, जहाँ नवाब साहब अपने जन्मको सफल कर रहे थे। एक सदी पुराना वह राज्य उन लोगोंके हाथोंसे छिन गया था। इस तथ्यको करुणाजनक चीत्कारोंमें व्यक्त करती हुई वह दौलतखानेकी तरफ़ भागी जा रही थी और दास-दासियाँ उनके पहनने-ओढ़नेकी पोशाक लिये पीछे-पीछे झपट रहे थे। बहरुन्निसाने दुपट्टा पेश किया और वह घूमते हुए बोली, "नहीं, नहीं ! जब मैं बुढ़ापेमें ताजके बिना गुज़ारा कर सकती हूँ, तो दास-दासियोंके बिना भी जी सकती हूँ।"

लौंड़ियोंने यह बात सुनकर छातियाँ पीटनी आरम्भ कर दीं। औलिया बेगम फिर दौलतखानेकी तरफ़ दौड़ी। खोज़ाओं, लौंड़ियों और गुलामोंकी एक भीड़ इकट्ठी हो गई। औलिया बेगमको राह देनेके लिए सबकी काई-सी फटती चली गई। जब औलिया बेगमने बिना किसी घोषणाके दौलत-खानेमें प्रवेश किया, तो वाजिदअलीशाहने उन्हें देखते ही अपना मुँह हाथोंमें छिपा लिया और रो पड़ा। औलिया बेगम चिल्लाई : "अब तो तुम्हारे दिलको तसल्ली हुई ? अब तो इन नाचने, गाने और गाल बजानेका

मज़ा मिल गया ? क्या मैंने नहीं कहा था कि किसी दिन इसकी नौबत आयेगी ? क्या तुम्हारे बाप-दादोंमेंसे किसीने औरतोंके कपड़े पहनकर कमर मटकाई थी ? लानत है तुमपर और तुम्हारे इन नाज़बरदारोंपर, जो इन रोशनदानों और किवाड़ोंकी आड़से मुझ बुढ़ियाको इस तरह झाँककर देख रहे हैं कि देखें बादशाहत छिन जानेपर यह क्या तमाशा करती है !"

एक भगदड़-सी मचती सुनाई दी। वाजिदअलीशाहके होश फ़ाख्ता हो गये। बहरुन्निसाने तसल्ली दी, मगर वहाँ तसल्लीका क्या काम था। औलिया बेगम लौटी और उसने अपनी अन्तरंग दासियोंको इकट्ठा किया। सामान मँगवाया जाने लगा।

दीवान खासमें अवधके बड़े-बड़े सरदार इकट्ठे हुए। उन्होंने वाजिद-अलीशाहको छोड़कर, औलिया बेगमको बुलाया और अपने-अपने शस्त्र प्रस्तुत किये——बादशाहत छीननेवालोंको मिटाने या मिट जानेके लिए। पर औलिया बेगमने कहा, "नहीं, नहीं, कोई फ़ायदा नहीं। यही एक दिन होना था। होनीसे लड़ना बेकार है। मैं फिरंगियोंकी मल्काके पास जाऊँगी। वह भी एक बेटेकी माँ है। मैं उससे कहूँगी कि मेरे बेटेका ताज न छीने। क्या उसके पास बादशाहतों और ताजोंकी कमी है ? क्या सारी दुनिया उसीके बाँटेमें आई है...?"

वाजिदअलीशाहके लिए बारह लाख रुपये सालानाकी पेंशन नियत हुई। लखनऊ शाही खानदानसे खाली होने लगा। औलिया बेगमने एक सदीसे सुरक्षित हीरे, जवाहरात, पन्ने, पुखराज, नीलम और फ़ीरोज़े, माणिक-मोती सब एक स्थानपर इकट्ठे किये और वह सारा जड़ाऊ फ़रनीचर, जिससे कभी शाही खानदानकी शान आँकी जाती थी एक कमरेमें भर दिया गया। फिर वह बहरुन्निसासे अकेलेमें बोली, "अब ये सब चीज़ें एक मज़ाक-सी मालूम होती हैं। इन्हें कोई हमारे पास नहीं रहने देगा। रात-रातमें एक गुप्त तहखाना इनके लिए तैयार होना चाहिए।"

शाम होते-होते सारा इन्तज़ाम किया गया। महलके भीतर नहानेका एक बड़ा हौज़ था। उसका पानी निकाल डाला गया और उसके किनारेसे मिलती हुई, ऊँची-ऊँची कनातें लगा दी गईं, जिससे उस स्थानके चारों ओरकी स्थितिका पता न लग सके। सैकड़ोंकी संख्यामें राजगीरोंको आँखों-पर पट्टियाँ बाँधकर लाया गया और कनातोंके भीतर उनके औज़ारोंके साथ छोड़ दिया गया। तहखाने बननेका रिवाज आम था। किसीको कानोंकान भी यह खबर नहीं हुई कि तहखाना किस लिए बनाया जा रहा है। सुबह तक वह बनकर तैयार हो गया। सब राजगीरोंको बिदा करके, केवल एकको रोक रखा गया।

लौंड़ियोंने मिलकर उस तहखानेके भीतर वे रत्नाभूषण और जड़ाऊँ वस्तुएँ उतार दीं। तहखाना ठसाठस भर गया। इस्पातका दरवाज़ा लगाकर जोड़पर पुलटिस भर दी गई और पत्थर लगाकर चिनाई कर दी गई। ऊपरसे हौज़में पानी भर दिया गया और सब पहले जैसा हो गया। जब सारा काम निबट गया, तो औलिया बेगमने बहरुन्निसासे कहा, "लगता है कि कोई भूल हो गई। यह राजगीर कौन है?"

"फ़िक्र न कीजिए," बहरुन्निसाने कहा। "इसे यह कैसे मालूम हो सकता है कि तहखानेके भीतर क्या रखा गया है? इसके अलावा यह अनपढ़ और गूँगा है। किस तरह यह किसीको बता सकता है कि उसके भीतर किसी मूल्यवान वस्तुके होनेका अनुमान है? आप निश्चिन्त रहिये। जिन लौंड़ियोंने इसके भीतर सामान रखा है, वे सब आपके साथ-साथ जायेंगीं। ख़ज़ाना बिलकुल सुरक्षित है।"

किन्तु राजगीरकी आँखोंने दरवाज़ा लगाते समय तहखानेके घुप अन्धकारमें जो जुगनू-से चमकते देखे थे, उनका अर्थ लगानेके लिए उसका दिमाग़ तेज़ीसे काम कर रहा था। बहरुन्निसाने उसे पुरस्कारमें सोनेके कुछ सिक्के दिये। वह उन सिक्कोंको उँगलियोंसे मसलता हुआ महलके बाहर

ह गया। किन्तु लाख मग़ज़ मारनेपर भी उन जुगुनुओंका अर्थ उसकी समझ में नहीं आया।

दो-तीन दिन बाद ही शाही ख़ानदान अंगरेज़ी फ़ौजोंकी सुरक्षामें कलकत्ताके लिए रवाना हो गया। लखनऊपर अंगरेज़ी सेनाका अधिकार निर्बाध रूपसे स्थापित हो गया। लेकिन अंगरेज़ किसी-न-किसीको तो बादशाह बनायेंगे ही, और वह होगा भी शाही ख़ानदानमेंसे ही, जैसा कि हमेशा होता आया है—इस आशामें बिरजिसकदरको छातीसे लगाये हज़रतमहल न जाने हरमके किस कोनेमें छिपी बैठी रही। लौंड़ियाँ और दास-दासियाँ अधिकांश संख्यामें बरखास्त कर दिये गये। बहुत-सी बेगमें उजड़े हुए नवाबके साथ कलकत्ता चली गईं, बहुत-सी पेंशन लेकर वहीं रह गईं, और बहुत-सी बादमें जानेकी तैयारी करने लगीं। मगर हज़रत-महलके लिए लखनऊको छोड़ना मछलीके लिए जलको छोड़नेके समान था।

× × ×

लार्ड डलहौज़ीने लखनऊमें प्रवेश किया और शीघ्र ही लखनऊमें महारानी विक्टोरियाके नाम बादशाहतकी घोषणा कर दी गई। हज़रत-महलको मालूम हुआ और उसने सिर पीट लिया। एक एकांत कक्षमें वह कितनी ही देर तक बेटेको छातीसे चिपकाकर रोती रही। बिरजिसकदरने कहा, "अम्मीजान, आज तक भी कोई ताजपोशीके लिए बुलाने नहीं आया!"

"कोई नहीं आयेगा, बेटा, कोई नहीं आयेगा!" हज़रतमहल भीतर ही भीतर अपने रुदनको घोंटती हुई बोली, "अब ख़ुदा हमारा नहीं रहा, फिरंगियोंका हो गया है।"

लेकिन ख़ुदाके कान बहुत बड़े हैं! वह दबी हुई चिनगारी, जो मेरठसे सुलगी, दिल्ली और बरेली होती हुई लखनऊ तक अपनी लपट छोड़ने लगी। कानपुरमें नाना साहब, बुन्देलखण्डमें झाँसीकी रानी और इनकी

कड़ीको मिलाता हुआ मराठा नेता तांत्या टोपे बीस हज़ार जवानोंके साथ उठा। लखनऊकी रेज़ीडेंसी घेर ली गई और असंतुष्ट सैनिकोंने उन महलोंको घेर लिया, जिनमें कभी छूम-छननन् तथा वाद-वाद्योंकी झंकारें उठती रहती थीं। स्त्री-पुरुष किसीका विचार नहीं किया गया। जिसके पास जो मिला वह उन लोगोंके कमरबन्दोंमें पहुँच गया, जिन्होंने सेनाओंके साथ मिलकर अपने लुटे-पिटे जीवनके अरमानोंको निकालनेका अच्छा अवसर पा लिया था।

आतंक और भयसे विजड़ित हज़रतमहल अपनी पीठ-पीछे बिरजिस-कदरको छिपाये अपने कक्षमें दीवारसे लगी खड़ी थी। भीतरसे दरवाज़ेकी कुंडी लगी थी और बाहरसे भारी शोर-शराबा और चीख़-चिल्लाहट सुनाई पड़ रही थी। रेज़ीडेंसीकी ओरसे तोपोंकी गड़गड़ाहट सुनाई देती थी और खिड़कीमेंसे झाँकनेपर आकाशमें धुएँके बादल भी नज़र आ जाते। उसी समय दरवाज़ेपर थपथपाहट हुई।

"दरवाज़ा खोलो!"

"नहीं, नहीं।" हज़रतमहल चिल्लाई। "तुम लोग भाग जाओ। अवधके बादशाहकी बेगम हूँ। तुम लोग मुझे हाथ लगाओगे, तो..."

लेकिन बाहर इतना सुननेकी फुरसत किसे थी। दरवाज़ेपर लातों और घूंसोंके प्रहार होने आरम्भ हो गये। हज़रतमहलने दीवारमें समा जानेकी चेष्टा की। उसके देखते-देखते दरवाज़ा चरमराया और भीतरकी ओर खुल गया। उसकी कितनी ही खपच्चियाँ अलग हो गईं।

हज़रतमहलने अपने बेटेको और भी छिपानेकी चेष्टा करते हुए कहा, "तुम लोग आदमी नहीं जानवर हो, क्या तुम लोगोंमें सभ्यता बिलकुल भी नहीं है?"

अब तक भीतर अनेक उजड्ड देहाती हाथोंमें नङ्गी तलवारें लिये घुस आये थे और उन तलवारोंके फलकोंपर ताज़े ख़ूनकी लाली भी दिखाई

पड़ रही थी। उनमेंसे एकने चिल्लाकर कहा, "क्या बकती है! सभ्यता किस चिड़ियाका नाम है?"

दूसरेने कहा, "अरे, यह अघाये पेटकी हरकतको तो कहीं सभ्यता नहीं कहती!"

अपनी तल्वारसे हज़रतमहलकी छातीकी ओर सङ्केत करते हुए तीसरा आदमी बोला, "ये लोग खाते कम हैं बिखराते ज्यादा हैं। फिर भी जो बच रहता है उसे पीली धातुमें बदलकर गलेसे पेट तक लटका लेते हैं—पकड़ लो!"

साथ ही 'छीन लो', 'मार डालो' आदिकी अनेक आवाज़ें आईं और भीड़पर पीछेकी ओरसे एक धक्का लगा।

हज़रतमहल घुटनोंके बल बैठकर बोली, "हमपर रहम करो। मैं लखनऊके बादशाहकी बेगम हूँ। मैंने आज तक कभी किसीको तकलीफ़ नहीं पहुँचाई। हमारी बादशाहत लुट गई, तक़दीर लुट गई। अब हमारे पास लुटनेके लिए और कुछ नहीं रहा।"

एक आदमीने आगे बढ़कर उसके गलेसे लटका हुआ हीरेका तोड़ा झटक लिया। उसकी पीठ जो दुहरी हुई, तो पीछेसे बिरजिसकदरका शरीर स्पष्ट हो गया। उसकी आँखें ऊपरको चढ़ी हुई थीं और हथेलियाँ दीवारसे चिपकी थीं। पतला और साँवला-सा मुँह था, जिसके होंठ अघट-घटनाको आश्चर्यके साथ अनुभव करके फैल गये थे।

लोगोंने कमरेको लूटना आरम्भ कर दिया था। एकने, जो उनमें कुछ बली मालूम होता था, कहा, "यह कौन है?"

"नहीं, नहीं, इसे न छूना! इसके पास कुछ नहीं है। यह मेरा बेटा है। अवधका शहज़ादा है। अंगरेज न आते, तो यही बादशाह बनता। रहम करो, मेरे हालपर तरस खाओ।"

"अच्छा, बादशाह बनता ? अरे रे, दिल्लीमें भी तो उन लोगोंने हज़रत बहादुरशाहको बादशाह बना डाला है। चलो, लखनऊका बादशाह मिल गया। भाइयो, सब लोग सीधे हो जाओ और बादशाह सलामतको सिजदा करो।"

कमखाबके परदोंको झटकते और सन्दूकोंपर ईंटे तथा तलवारोंके कब्ज़े पटकते हुए लोग कुछ देरके लिए सीधे हुए और घूम-घूमकर लड़केकी तरफ़ देखने लगे। किसीने ठहाका लगाकर कहा, "आदाब बजा लाता हूँ, हुज़ूर !" फिर लोगोंको सम्बोधन करके बोला, "अरे यारो, अंगरेज़ लोग अगर लड़ते-लड़ते यहाँ तक आ गये, तो यह बेचारा क्या करेगा ? कोई फिरंगी अगर पिल पड़ा, तो एक ही वारमें इसका सिर भुट्टेकी तरह उड़ा देगा। गरदन तो देखो कितनी पतली है !"

हज़रतमहलने बेटेको दोनों हाथोंमें भर लिया और विकल होकर बोली, "नहीं, मैं अपने बेटेको बादशाह बनाना नहीं चाहती। अब बादशाहत ही कहाँ है, जो यह बादशाह बनेगा ? हमलोगोंको हमारे हालपर छोड़ दो।"

इसपर भारी-भरकम आदमी उसकी ओर बढ़ते हुए बोला, "बेगम साहबा, बादशाहत तो लोगोंके माननेकी होती है, कोई गाय-भैंस नहीं होती कि एकसे रस्सा छूटा और दूसरेने पकड़ लिया। अगर हमलोग अपने बादशाहको उसके हालपर छोड़ देंगे, तो हम किसके हालपर रहेंगे ? पतली गरदन हो या मोटी, पर इसे बादशाह बनना ही पड़ेगा।"

बेगमकी आँखोंसे टपटप आँसू चूने लगे। वह और भी ज़ोरसे सहमे हुए बच्चेको अपने बदनसे चिपटाती हुई बोली, "ख़ुदाके लिए माफ़ करो, तुम्हारे सम्मानित बादशाह हुज़ूर वाजिदअलीशाहकी बेगम तुमसे आँचल पसारकर भीख माँगती है : मेरे बेटेको बादशाह न बनाओ। इसे फिरंगियोंके फटे हुए जबड़ोंमें निवाला बनाकर न फेंको !"

"पकड़कर ले भी तो चलो, यारो !" किसीने पीछेसे चिल्लाकर कहा,

"क्या खड़े-खड़े औरतज़ातकी बक-झक सुन रहे हो! छीन लो, दरबारमें ले चलो, और बना दो बादशाह। अवधका बादशाह बिरजिसकदर जिन्दाबाद!"

हज़रतमहल गिड़गिड़ाई, रोई, मिन्नतें कीं, मगर सब बेकार। वह भीमकाय व्यक्ति आगे बढ़ा और उसने बिरजिसकदरके गलेमें पड़ी मोतियों की माला झटक ली। फिर उसकी माँको उससे नोचकर अलग फेंका और रोते हुए बिरजिसकदरको कंधेपर उठा लिया। पीछे मुड़कर उठती हुई हज़रतमहलसे वह बोला, "अगर फिरंगी यहाँ घुस भी आये, तो पहले हम मरेंगे, फिर तेरा बेटा शहीदोंका बादशाह होगा। हा, हा, हा, जिस महलमें अब तक कलवार ही कलवार नज़र आते थे, वहाँ तलवार देखकर हमारे रक्षक लोग सहमे जा रहे हैं!"

रोती-पीटती, आहें भरती हज़रतमहल विद्रोहियोंके साथ-साथ दरबारकी ओर चली। चारों ओर बिरजिसकदरका नाम ले-लेकर कोई-कोई इक्का-दुक्का जिन्दाबादके नारे लगा देता था और फिर 'मारो-काटो, पकड़ो, छीनो, उड़ा दो'की आवाज़ें तथा चीख़-चिल्लाहट सुनाई पड़ने लगती थी। इन सबके ऊपर जब रेज़ीडेंसीकी ओरसे तोपोंकी गड़गड़ाहटका शोर आता, तो हज़रतमहलका कलेजा धक्-से हो जाता। उसका बेटा मारती-काटती भीड़के भारी समुद्रमें उस भीमकाय व्यक्तिके कंधेपर बैठा ऐसा लग रहा था, मानो डूबते हुए उसने किसी बहते पेड़के ऊँचे ठूंठको पकड़ रखा हो।

हज़रतमहलको पहले जो चीज़ दर्पणमें दिखाई देती थी वह अब सामने दिखाई देने लगी। सैनिकोंकी नंगी तलवारें बादशाहके सम्मानमें उठ रही थीं! एक ऐसा शोर बरपा हो रहा था, जो कभी न देखा गया, न सुना गया! दरबारमें हज़रतमहलके बेटेके सिरपर ताज झूल रहा था, और लोग मुल्ला आमीनको भी पकड़ लाये थे। मुल्लाजीकी समझमें कुछ नहीं आ रहा था कि यह कैसी ताजपोशी थी। वह सिरसे लेकर पैर तक

थर-थर काँप रहे थे। पीछेसे किसीने तलवार चुभोई और मुल्लाजीके काँपते हुए हाथोंने बिरजिसकदरके सिरपर ताज रख दिया।

यह अद्भुत ताजपोशी समाप्त होते ही दरबार इस तरह खाली हो गया, जैसे लोगोंने अपने कर्त्तव्यसे छुट्टी पा ली हो। दरबारसे निकलती हुई भीड़में रुलती-पिलती हज़रतमहल तभी दरबारके भीतर प्रवेश कर पाई, जब वह बिलकुल खाली हो गया। दूर, सामनेकी ओर सिंहासनपर बैठा बिरजिसकदर रो रहा था। उसने वहीं से पुकारा, "माँ !"

हज़रतमहल करुणाके आवेशमें ज़ार-ज़ार रो पड़ी। उसके मुँहसे निकला, "मेरे बेटे !" और जब वह उसके पास पहुँची, तो तुरन्त उस ताजको, जिसे वास्तविक ताजके अभावमें लोगोंने जल्दी-जल्दी नौशाके मोड़की तरह बनवा डाला था, उतारकर दूर कोनेमें फेंक दिया।

× × ×

सर हेनरी लारेंसने रेज़ीडेंसीकी रक्षामें प्राणोंकी बाज़ी लगा दी। जनरल औट्रमके साथ हैवलॉक सैनिक सहायता लेकर आया, मगर विद्रोहियोंने उसे भी यमपुर भेजा। उनके बाद सर कोलिन कैम्पबेल एक विशाल अंगरेज़ी सेनाके साथ आये और उन्होंने ध्वस्त रेज़ीडेंसी और लखनऊको एक भारी मारकाटके बाद अपने अधिकारमें कर लिया।

हर आदमी भाग रहा था, हर आदमी छिपनेकी कोशिश कर रहा था। कोई दोषी था या निर्दोष इसका कोई प्रश्न नहीं था। अंगरेज़ी सेना प्रत्येक उस आदमीको, जो चेहरे-मोहरेसे सैनिक मालूम होता था, मौतके घाट उतार रही थी। महलोंके भीतर भी भगदड़ मची हुई थी। जिसके जहाँ सींग समाते थे भागता नज़र आता था।

हज़रतमहल बिरजिसकदरको लिये एक कमरेसे दूसरे कमरेमें भागी फिर रही थी। जब उसे मुल्ला आमीनका शान्त मुख दिखाई पड़ा, तो वह खुशीके मारे चिल्लाकर उनकी ओर दौड़ी, "हमें किसी तरह लखनऊसे बाहर निकालिये। आपके हाथोंने जिस नाबालिग़के सिरपर ताज रखा था,

१७

आज फिरंगियोंकी संगीनें उसकी छातीकी तरफ़ तनी हुई हैं।"

मुल्ला आमीनने शान्तिसे दो बार पलकें झपकाई और बोले, "ख़ुदाका नाम लो, बेगम। आजका आदमी आदमी कम है, जानवर ज़्यादा है। पहुँचनेको तो तुम मक्का पहुँच सकती हो, मगर उसके लिए मामूली वक़्तोंमें जितने धनकी आवश्यकता होती है, आज उससे हज़ारगुना धन चाहिए। तुम्हारे पास हो, तो निकालो। मैं इन्तज़ाम करता हूँ।"

"कहाँसे निकालूँ? कहाँसे लाऊँ?" निराशामें गरदन लटकाकर हज़रतमहलने कहा। "मुझे क्या मालूम था कि यह दिन देखना पड़ेगा। मेरा तो अपना स्वर्ग था, अपनी जन्नत थी..." और उसकी आखोंके आगे वे दिन फिर गये, जब वह किसीके मज़बूत हाथोंमें बलका गौरव निरखती थी।

मुल्लाजीका दूर होता स्वर सुनाई पड़ा, "तो फिर तसबीह लेकर बैठ जाओ। ख़ुदा उन लोगोंसे बड़ा ख़ुश होता है, जो उसका नाम लेते हुए फ़ना होते हैं।"

यह मुल्लाजीका व्यंग्य था या सलाह थी, हज़रतमहल कुछ नहीं समझी। ख़ुदापर अब उसका विश्वास नहीं रह गया था। उसने बिर-जिसकदरका हाथ पकड़ा और आगे बढ़ी। उसी समय महलके एक सिरेसे हल्ला उठा। "फिरङ्गी आ रहे हैं, भागो! फिरङ्गी शहरके बीचमें आ गये हैं...।"

हज़रतमहलका रङ्ग पीला पड़ गया। मालूम होता था कि शहर-का-शहर महलके भीतर घुस आया है। ऊपरसे रात्रिका अन्धकार उन लोगोंको सान्त्वना देनेके लिए आ रहा था, जिनके लिए दिन मौतका साक्षात् सन्देश था। भीड़में बड़ी-बड़ी विचित्र बातें सुननेको मिलती थीं : "फिरङ्गी औरत-मर्द, बूढ़ा-बच्चा कुछ नहीं देख रहे हैं...अरे, भागते ही जाओगे? दरवाज़े बन्द कर लो...क्या फिरंगियोंको दरवाज़े खोलने नहीं आते?... या ख़ुदा!"

मगर ख़ुदाने कानोंमें तेल डाल रखा था। गूँजती हुई डरावनी

आवाज़ें जहाँ उठती थीं वहीं उपस्थित लोगोंको सुनाई पड़ जाती थीं। इस भागा-दौड़ीकी सीमाएँ थीं महलके एक सिरेसे दूसरे सिरे तक। एक ओर की खिड़कीसे बाहरका दृश्य देखकर लोग झट मुँह अन्दरको कर लेते थे, तो दूसरे सिरेपर भी यही हाल होता था। मगर इस निरुद्देश्य भागा-दौड़ीके रेलेमें हज़रतमहल किसी भाँति बिरजिसकद्रका हाथ पकड़े हुए खिंची चली जा रही थी।

सहसा महलके बायें सिरेपर आगकी एक लपट ऊँचे उठी और गोलियोंकी आवाज़ें सुनाई पड़ीं। हज़रतमहलने कलेजा थाम लिया। भयसे विस्फारित नेत्रोंसे उसने उस आगको देखा। लोग चिल्लाये : "फिरंगी महलमें घुस गये हैं, फिरंगी..."

उसी समय सशस्त्र देशी सैनिकोंका एक रेला एक ओरसे महलमें घुसा और उन लोगोंने खिड़कियोंपर अधिकार करके ताक-ताककर गोलियाँ चलाना आरम्भ कर दिया। पाँच मिनटतक मोर्चा जमा रहा, और फिर रेला बह निकला। हज़रतमहल एक अन्धेरे कोनेकी ओर भागी। उसी समय उसे अनुभव हुआ कि किसीने उसकी कलाई मज़बूतीसे पकड़ ली है। उसने चिल्लाकर पूछा, "कौन है ?"

किसीने उसकी बातका उत्तर नहीं दिया। किसीकी मज़बूत कलाईमें बँधी वह अपने बेटेके साथ-साथ खिंची चली गई। बिरजिसकद्र केवल रोये जा रहा था। उसके कपड़े जगह-जगहसे फट गये थे। हज़रतमहलकी हालत भी कुछ ज़्यादा अच्छी नहीं थी। अन्तमें उसने अपने-आपको होनीके अधीन सौंप दिया।

रेलेसे दूर हटाकर एक व्यक्तिकी छाया उसे महलके एक बचे हुए कोनेकी ओर ले गई। यह औलिया बेगमका स्नानागार था। सामने एक हौज़ दिखाई दे रहा था, जिसका पानी बहुत दिनोंसे प्रयोगमें न आनेके कारण सूख रहा था। उस कमरेमें आकर पहले-पहल हज़रतमहलने उस आदमी का मुँह देखा और भयके मारे चिल्ला पड़ी : "तुम...तुम...!"

गूँगे राजगीरने होंठोंपर उँगली रखकर उसे चिल्लानेसे वर्जित किया। उसने फिर उसका हाथ पकड़ा और हौज़के किनारेपर ले गया। वहाँ खड़े होकर उसने ध्यानसे हौज़के एक कोनेकी ओर देखा। हज़रतमहलने लक्ष्य किया कि उसके हाथमें एक कुल्हाड़ी थी। उसके देखते-ही-देखते वह हौज़में कूद पड़ा। फिर कुल्हाड़ियोंकी आवाज़ सुनाई देने लगी।

कुछ देर बाद गूँगेने कुल्हाड़ी चलानी बन्द कर दी और जल्दीसे किनारेपर आकर उसने बिरजिसकदरको गोदीमें उठा लिया। हज़रतमहल उसका आशय समझकर हौज़में कूद पड़ी। हौज़के कोनेमें एक छोटा-सा दरवाज़ा निकल आया था, जिसमें हौज़का बचाखुचा पानी बहकर भीतर जा रहा था। कुछ देर गन्दी हवाके निकल जानेकी प्रतीक्षा करके राजने लड़केको उसके भीतर उतार दिया। इसके बाद हज़रतमहल भीतर घुसी और फिर वह स्वयं भीतर पहुँच गया। कुल्हाड़ीको भीतर करके उसने दरवाज़ेपर इस्पातकी एक ओरसे टूटी हुई प्लेटको ढाँचेपर बैठाकर दरवाज़ा बन्द कर दिया। टूटी हुई चादरके स्थानपर जो खुला हुआ छोटा-सा स्थान रह गया उसकी राह भीतर तहखानेमें रोशनी पड़ती रही।

हज़रतमहलने आँखें फाड़कर देखा। चारों ओर महलका कीमती सामान था, जिनमें जवाहरात जड़े हुए थे। अधिकांश सामान मोमजामेसे ढका हुआ था, किन्तु दो-तीन छपरखट नहीं ढके जा सके थे। उनमें जड़े हुए जवाहर दरवाज़ेकी रोशनीका सहारा पाकर जुगनूकी तरह चमक रहे थे। उसने बड़ी मुश्किलसे अपने मुँहसे निकलती हुई आश्चर्यकी उस चीखको रोका, जो अकस्मात् इतना बड़ा खज़ाना सामने देखकर उसके होंठोंपर आना ही चाहती थी। यह बात नहीं कि उसने कभी वह वैभव न देखा हो, किन्तु कहाँ वे दिन और कहाँ वह कारूनका कोष!

गूँगेने एक मोमजामा फाड़ डाला। यह वाजिदअलीशाहके सिंहासन की कुरसी थी, जिसमें जड़े हुए लाल और पन्ने लाल-हरी आभासे दमक उठे। कितने ही मोमजामेके थैले रखे थे। उसने उन्हें भी खोला। हीरे,

पन्ने, पुखराज और ज़मुर्द उसमेंसे निकल-निकलकर फ़रशपर बिखरने लगे, एक थैलेमेंसे बादशाहका पुराना ताज निकला। गूँगा उस ताजको बहुत देर तक अपलक दृष्टिसे देखता रहा।

सहसा उसकी आँखें चमकीं और उसने विस्मय-विमुग्ध हज़रतमहलकी आँखोंसे आँखें मिलाईं। हज़रतमहलकी आँखोंकी पलकें काँपकर झुक गईं। गूँगेने माँसे चिपटे हुए बेटेको अपनी गोदमें उठाया, उसे प्यार किया और फिर आगे बढ़कर उस सिंहासनपर बैठा दिया, जिसपर कभी लखनऊका वास्तविक शासक बैठा करता था। फिर उसने ताज लिया और उसे लड़केके सिरपर रख दिया। यह सब करके वह पीछे हटा और हज़रतमहलकी ओर देखकर मुसकराया। उसकी आँखें एक विचित्र तेजसे उस अन्धकारपूर्ण वातावरणमें भी चमक रही थीं।

हज़रतमहलने यह सब काण्ड फटी आँखोंसे देखा, और जब अधिक न देख सकी, तो अपने चेहरेको अपने हाथोंकी दोनों हथेलियोंमें छिपा लिया। उसका सिर गूँगेकी छातीसे जा लगा और वह फूट-फूटकर रो पड़ी। जितनी देर वह रोती रही गूँगा निश्चल खड़ा उसके मनके वास्तविक परितापको आसुओंकी राह बाहर निकलनेमें सहायता देता रहा। समय बहुत था, कोई जल्दी नहीं थी।

चौबीस घन्टे तक वे तीनों भूखे-प्यासे ख़ज़ानेके तहख़ानेमें छिपे पड़े रहे। इस बीच ऊपरकी ओरसे गोलियोंकी मद्धिम आवाज़ें मात्र सुनाई पड़ती रहीं। फिर वे आवाज़ें भी बन्द हो गईं। उन तीनोंने इस बीच तहख़ानेके सारे जवाहरात एक स्थानपर इकट्ठे किये, जिन्हें दूसरी वस्तुओंसे अलग किया जा सकता था उन्हें उन वस्तुओंको तोड़फोड़कर भी निकाला और जब एक अच्छा संग्रह एक स्थानपर इकट्ठा हो गया, तो उसकी एक गठरी बनाई। फिर उस गठरीको मोमजामेके एक बड़े थैलेमें बन्द किया और अवसरकी राह देखने लगे।

चौबीस घन्टे बाद थोड़े-से छोटे-छोटे जवाहरात लेकर, गूँगा हज़रत-

महलके कन्धेको थपथपाकर आश्वासन देता हुआ उस छोटेसे दरवाज़ेसे बाहर निकला, जो उस तहखानेको बाहरकी दुनियासे मिलाता था। आशङ्कित हृदय लिये, हज़रतमहलने सोते हुए बिरजिसकदरको गोदीमें लिये-लिये छः घन्टे बिता दिये। सील और बदबूसे उसका दिमाग़ फटा जा रहा था और ऊपरसे रातका अन्धकार घिर आया था। ज़रा-ज़रासे खटकेसे वह चौंक पड़ती थी।

आखिर दरवाज़ेपर आहट हुई, इस्पातकी चादर हटी और गूँगे राजगीरकी आकृति दिखाई दी। आशङ्काओंको निर्मूल देखकर हज़रतमहल उससे चिपट गई। सुबहका झुटपुटा होते-होते उसने वह सब सामान देखा, जो गूँगा अपने साथ लेकर आया था। उसमें थोड़ा-सा खानेका सामान था। कुछ फटे हुए चीथड़े थे और राख थी। उन लोगोंने खाना खाया, पानी पिया, और उसके बाद उन चीथड़ोंको पहना, जिनमेंसे हज़रतमहलका बदन जहाँ-तहाँसे पेबन्दोंसे ढक गया। बदनपर राख मल-मलकर पानीकी सहायतासे बदनको काला किया। फिर गूँगे राजगीरने थैलेको उठाकर उन्हें चलनेका इशारा किया।

बाहर हौज़में तीन टोकरे रखे दिखाई दे रहे थे। एक खाली था, एकमें राख थी और एक में...हज़रतमहलने उसे देखकर अपनी नाक बन्द कर ली। गूँगा उसकी ओर देखकर फिर मुसकराया। उसने खाली टोकरे में थैलेको रखा, ऊपरसे राख भरी और उसके ऊपर वह तीसरा टोकरा उलट दिया। अब हज़रतमहलने तीनोंकी पोशाकोंपर ध्यान दिया। वे लोग इस समय महलके भंगी थे और गूँगेके सिरपर टोकरा था। राख और कूड़ेका टोकरा हज़रतमहलने अपने सिरपर रखा, और खाली टोकरा बिरजिसकदरने उठाया।

जगह-जगह सन्तरियोंने इन्हें टोका, मगर दूर-दूरसे ही निरीक्षण करके छुट्टी दी। लखनऊमें फैले हुए फिरंगी सैनिकोंकी हर व्यक्तिके प्रति दिलचस्पी थी, मगर भंगियोंके प्रति कोई सहानुभूति नहीं थी!

लखनऊ पीछे छूट गया और गोमतीके किनारे इन भंगियोंने उन टोकरोंसे बिदा ली। एक गठरी बनाई और नहा-धोकर वे ही कपड़े पहने, गठरी संभाले गूँगा राजगीर, हज़रतमहल और अवधके बादशाहने उत्तर-पूर्वकी ओर पग बढ़ा दिये।

मगर शीघ्र ही उन्हें मालूम हो गया कि इन वस्त्रोंमें रहते हुए उन्हें कभी सवारी नहीं मिल सकती। अतः एक गाँवमें जब उन्होंने नये कपड़े खरीदे और व्यापारीको रुपयोंके बदलेमें एक चमकता हुआ पत्थर दिया, तो उसने कुछ देर पलकें झपकाकर उनकी ओर देखा, फिर हीरा रख लिया।

मगर गूँगा जितना देखता था उतना ही सोचता था। व्यापारीकी निगाह उससे छिपी नहीं रही। गूँगेने अपने कमरबन्दसे एक दूसरा हीरा निकालकर उसके सामने फेंका और व्यापारीकी निगाह चौड़ी हो गई। और जब तीसरा उसके सामने पड़ा, तो वह अपने थलेसे उठा और उसने ज़मीनपर लम्बे लेटकर गूँगेके पैर पकड़ लिये। "हुजूर, परवरदिगार, आप बड़े हैं। मेरे दिलकी उस हरकतको माफ़ कीजिए, जिसे आप-जैसे अक्लमन्द आदमीने पहचान लिया है। मैं हुजूरकी हर ख़िदमत बजा लाऊँगा!"

गूँगेने उसी समय अपनी छड़ीसे ज़मीनपर दो घोड़ोंकी आकृति बनाई। व्यापारीने समझ लिया कि जिस महान् हस्तीसे उसका सम्बन्ध बना है वह बोल नहीं सकता। उसने फिर खड़े होकर आदाब झुकाया और घन्टे भरके भीतर-भीतर दो कुम्मैत अरबी घोड़े उन लोगोंके लिए ला हाज़िर किये।

उनके जानेके बहुत देर बाद व्यापारी अपने उस असीम भाग्यकी कहानीको केवल अपने तक ही सीमित नहीं रख सका। उस अव्यवस्थित युगमें, जब हरेक आदमी मिटने और बन जानेके बीचकी राहको भूल चुका था, यह बात उन लोगोंके कानों तक पहुँचते देर नहीं लगी, जो खेती-बाड़ी छोड़कर अस्त्र-शस्त्रोंके प्रयोगका व्यापार करने लगे थे; और जब व्यापारीके

गलेपर नेज़ा रखा गया, तो उसने उस कथाको हू-ब-हू ज्यों-की-त्यों सुना दिया ।

गूँगा राजगीर व्यापारीकी ओरसे लगभग निश्चिन्त हो चुका था । अतः नेपालकी राहपर उनके घोड़े आरामसे चल रहे थे । मगर जब उन्होंने पीछेसे घोड़ोंकी टपाटप सुनी, तो कान खड़े हुए । एक क्षण ठहरकर उसने हज़रतमहलकी ओर देखा । बेगमके चेहरेपर फिर हवाइयाँ उड़ने लगीं । वह घबराकर बोली, "इस ख़ज़ानेका बोझ हमारे संभाले नहीं संभलेगा । अब इसका मोह त्यागना ही पड़ेगा । मेरे बेटेकी जान बचाओ । मुझे और कुछ नहीं चाहिए । मैं इन हीरोंकी चमक बहुत देख चुकी हूँ ।"

गूंगे राजगीरने थैला खोला और उसमेंसे चुन-चुनकर कुछ जवाहरात निकाले और अपने कमरबन्दमें खोंस लिये । इसके बाद जब पीछेसे घोड़ों-की आवाज़ और निकट आ गई, तो उन्होंने अपने घोड़ोंको एँड़ दी । किन्तु दौड़ते-न-दौड़ते उन्होंने देखा कि वे तीन तरफ़से घिर गये हैं । केवल आगेका रास्ता साफ़ था । दौड़ लम्बी चलती रही, घेरा कसता रहा और जब तीनों ओरके अश्वारोहियोंका संगम अत्यन्त निकट हो गया, तो गूंगेने थैलेका मुँह खोला, उसे ऊपरकी ओर उठाया और नीचेका सिरा पकड़कर चारों ओर घुमा दिया ।

सूरजकी तेज़ रोशनीमें लाल, हरी, नीली और सफ़ेद किरणें चारों ओर दर्पणकी चमककी भाँति फूट निकलीं और जहाँ-तहाँ बिखर गईं । लखनऊका ख़ज़ाना कच्ची राहपर धूलमें लोट रहा था और उन लोगोंकी आँखोंको चकाचौंध कर रहा था, जिनके पसीनेकी राह निकल-निकलकर, वह गाढ़ा होता-होता पत्थरोंकी शकलमें बदल गया था । वे लोग अपने-अपने वाहन छोड़कर राहमें कूद पड़े और छीना-झपटीका बाज़ार गरम हो गया ।

नेपालकी निकट होती सीमाके लगभग, क्षितिजपर दो सबल घोड़ोंकी आकृतिमात्र कुछ देरके लिए दिखाई देती रही और जब तक लखनऊका ख़ज़ाना धूलमेंसे उठा, तब तक वे आकृतियाँ भी लोप हो गईं ।

भारतीय ज्ञानपीठ काशी

ज्ञानकी विलुप्त, अनुपलब्ध और अप्रकाशित सामग्रीका
अनुसन्धान और प्रकाशन तथा लोक-हितकारी
मौलिक साहित्यका निर्माण